आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

पहला भाग

आश्रमवासीके बाह्य आचार

लेखक

जुगतराम दवे

अनुवादक

रामनारायण चौधरी

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर

अहमदाबाद

मुद्रक और प्रकाशक
जीवणजी डाह्याभाई देसाई
नवजीवन मुद्रणालय अहमदाबाद-१४

नवजीवन ट्रस्टके अधीन

पहली आवृत्ति ३००० सन् १९५७

आशिवचन

भाञी जुगतरामकी 'आश्रमी शिक्षा' नामक पुस्तकके कुछ प्रकरण मं पढ़ गया हू। अुनकी भाषा तो सरल और सुन्दर है ही। गांवके लोग आसानीसे समझ सकें असी वह भाषा है। आश्रम-जीवनसे सम्बध रखने-वाली छोटी-बड़ी सभी चीजोंका लेखकने सुन्दर ढगसे वर्णन किया है। अुन्होंने बताया है कि आश्रम-जीवन सादा है, परन्तु अुसमें सच्चा रस और कला भरी हुअी है। यह परीक्षा सही है या गलत, यह तो पाठक सब लेख पढ़ कर देख लें।

पूना १७—३—'४६ मो० क० गांधी

अर्पण

आश्रम-बन्धु स्वर्गीय गोरधन भावाको
जिनकी मीठी जीवन-सुगन्ध हममें से
अनेककी आत्म-रचना पर किसी अगम्य रीतिसे
अपना असर छोड़ गयी है।

अनुक्रमणिका

पाँचवाँ विभाग : खादी-धर्म

शिक्षाकी आश्रमी पद्धति

मेरे आश्रम-बंधुओंके प्रति

साबरमतीके 'स्वराज्य मंदिर' में हमारे आश्रमका और आप सबका जो चिन्तन मैंने प्रतिदिन ब्राह्म-मुहूर्तमें किया ये प्रवचन अुसीका फल है। जेल मेरे लिअे कभी जेल रही ही नहीं। कभी बार तो आपमें से — वेड़छी आश्रमके मेरे आश्रम-बंधुओंमें से कोअी न कोअी जेलमें भी मेरे साथ रहे हैं। आपकी याद सदा दिलाते रहें अैसे श्रद्धालु विद्यार्थियों और समान-धर्मी मित्रोंकी मण्डलीके बीच ही कारावासका मेरा अधिकांश समय बीता है। अुनके बीच जेलमें भी मेरे लिअे वेड़छी आश्रम ही चलता रहा है। वही सुबह-शामकी प्रार्थनायें वही भजन और धुन वही गीतापाठ वही सामूहिक कव्वाली और वही 'सहनाववतु' मंत्रके साथ सहभोजन। अिसके कारण जेलके अिस खण्डमें मेरा बिस्तर रहता वह सदा 'वेड़छी आश्रम' के नामसे ही पुकारा जाता था।

दीवारके बाहर और दीवारके अन्दरके मेरे आश्रम-बंधुओंको अैसे अनेक प्रसंग याद आयेंगे जब अिन प्रवचनोंमें वर्णित विषय हमारे बीच निकले थे। कभी कभी प्रार्थनाके बाद सचमुच अिसी शैलीका अेकाध प्रवचन हुआ आपको याद आयेगा। परन्तु अधिकांश प्रवचन अिस रूपमें यहां लिखे गये हैं अुसी रूपमें नहीं किये गये। चौबीसों घण्टेके हमारे सहवासमें जब जैसा प्रसंग आया तब अुसके अनुरूप हमने अिन प्रवचनोंके विचारों और सिद्धान्तोंका रटन किया है। कभी कातते कातते और कभी टहलते टहलते हमने चर्चा और वाद विवादके रूपमें अैसा किया है। कभी बार तो सारे प्रवचनकी वस्तु अेकाध छोटीसी सूचनाके रूपमें अेकाध विनोदपूर्ण वक्रोक्तिके रूपमें अेकाध प्रेमभरे आग्रहके रूपमें हम सब अिशारेमें समझ गये हैं।

शिक्षाकी जिस पद्धतिको मैं 'आश्रमी पद्धति' कहता हूं अुसकी खूबी ही यह है। सतत सहवास और सहजीवन तथा आपसके प्रेम और श्रद्धाके कारण हमारी बुद्धिकी धरती सदा बीजको अंकुरित करनेकी स्थितिमें ही रहा करती है। कहींसे हवामें अुड़कर बीज आया कि वह अुगा ही समझिये। यदि पाठशाला लगाकर और कक्षाओंमें बैठकर ही ये सारी चीजें पढ़नी-पढ़ानी हों तो अैसे लंबे प्रवचनोंसे तो क्या परन्तु बड़े बड़े ग्रंथोंसे भी यह करना दुःसाध्य है। आपको आश्चर्यके साथ स्मरण आयेगा कि अिन प्रवचनोंमें गंभीररूप धारण करके आयी हुअी बहुतसी बातें हमारे पास तो सहभोजन या सहस्नान या सह-सफाअी करते समय हास्य-विनोदके रूपमें ही आयी थीं। कुछ बातें तो कब हमारे भीतर प्रवेश कर गयीं और कब हमारे भीतर आत्मसात् हो गयीं अिसका कोअी प्रसंग भी आपको याद नहीं होगा। केवल प्रवचन पढ़कर आप सिर हिलायेंगे कि यह बात अिस ढंगसे हमने किन्हींके मुंहसे सुनी या

किसी ग्रंथके पृष्ठोंमें देखी नहीं थी परन्तु ठीक यही हमारे विचार हैं ठीक किसी तरह आचरण करना हम पसन्द करते हैं।

जीवनमें सीखनेके विषय सिर्फ कोअी अुद्योग कोअी कला-कौशल या कोअी तर्क ही नहीं है। परन्तु जन्मके साथ जड़ जमाये बैठी हुअी पुरानी प्रथाओं और पुराने हठीले पूर्वग्रहोंसे हमें मुक्त होना है कभी न किये हुअे नये विचारोंको अुनमें अुतारना है, नयी श्रद्धायें हृदयमें स्थापित करनी हैं और तदनुसार आचरण करते हुअे स्थिरता सीधा करनेका योग कमाना है। यह बात साधारण पाठशाला या अुद्योगशाला नहीं दे सकती। अिसके लिअे आश्रम-जीवनकी जरूरत है।

चरखा, पींजन और करघेके कला-कौशल तो अुद्योगशालामें सीखे जा सकते हैं। परन्तु व्यर्थकी जरूरता और व्यर्थके मौज-शौकमें काटछांट करके अपने लिअे आवश्यक वस्त्रादि चीजें घरमें ही बना लेनेकी तैयारी — तैयारी ही नहीं, परन्तु वैसे जीवनमें आन्तरिक रस पैदा होना तो आश्रममें ही संभव है।

मलमूत्रका निपटारा कैसे किया जाय अिसकी शास्त्रीय पद्धति तो किसी विद्यालयमें पाठ पढ़कर जानी जा सकती है। परन्तु अिनके प्रति जो घृणा हमारी जनताके रोम-रोममें घुसी हुअी है और अुस घृणासे भी अधिक गहरीली जो अस्पृश्यता जनतामें पैठी हुअी है अुस पर तो किसी आश्रममें गहाकार्य करते करते ही विजय पाअी जा सकती है। हरिजन बालक या बालिकाको अपना पुत्र या पुत्री बना लेना और अपनी पुत्रीको हरिजन युवकके साथ ब्याह देनेकी अुमंग पैदा होना आश्रमी शिक्षाके बिना संभव ही नहीं है।

बीमारोंको क्या दवा दी जाय अुनकी सेवा कैसे की जाय अित्यादि शिक्षा किसी वैद्यशालामें मिल सकती है परन्तु आत्मजनोंकी या अपनी बीमारीके समय घबरा न जानेकी अनुचित भाग-दौड़ न करनेकी तथा मृत्युके सामने व्याकुल न बननेकी शिक्षा तो आश्रम-जीवनमें ही मिल सकती है।

हो सकता है कि आश्रममें रहते हुअे भी अैसी शिक्षा किसीको न मिले। अिसका दोमें से अेक कारण होगा। या तो यह नामको ही आश्रम होगा अिन प्रवचनोंमें जिसका चित्र दिया गया है और जिसका चित्र हमारे हृदयमें अंकित है वैसा आश्रम वह नहीं होगा। अथवा अुस आश्रममें रहनेवाले अपने हृदयके द्वार बंद करके वहां रहे होंगे आश्रमी शिक्षाको अुन्होंने अपने अन्दर घुसने ही नहीं दिया होगा।

आप और हम अच्छी तरह जानते हैं कि आश्रमवाससे पहले जो श्रद्धायें हममें नहीं थीं अैसी बहुतसी नअी-नअी श्रद्धायें आश्रमवासके कारण हमारे भीतर पैदा हुअी हैं और दृढ़ बनी हैं। वे कब पैदा हुअीं और कब दृढ़ हुअीं अुनकी शिक्षा हमें किसने और कब दी अिसका हमें पता भी नहीं। परन्तु हम देखते हैं कि आश्रम-जीवनने हम सब पर अेकसा असर किया है और अेकसी परिस्थितियोंमें हम सबके हृदयमें अमुक भाव समान रूपमें ही प्रगट होते हैं, और समान परिस्थितियोंमें हम सब यहां हों वहां अेक ही प्रकारका आचरण करनेको तैयार होते हैं।

हम अपने पड़ोसीके साथ कैसा बरताव करें, पति या पत्नीके साथ कैसा बरताव करें, जातिके लोगोंके साथ कैसा व्यवहार रखें हमारा आहार-विहार कैसा हो देशके कामोंमें किन सिद्धान्तोंसे काम लिया जाय यह सब हमने कहाँ किससे और कब पढ़ा? यह सब हमें अपने आश्रममें अेक-दूसरेसे किसी अकल्पनीय रूपमें मिल गया है।

हमें अपने आश्रमकी शिक्षा लेते लेते यह विश्वास हो गया है कि जिस किसीको सचमुच आत्म-रचना करनी हो भीतरकी गहरीसे गहरी जड़ों तक शिक्षाको पहुंचाना हो अुसके लिअे आश्रम ही सच्ची पाठशाला है।

यह सच है कि जिस आत्म रचनाके लिअे हमने आश्रमवास स्वीकार किया है, अुसमें हम अभी तक बहुत पीछे हैं। कुछ बातोंमें तो हम आज भी अितने कच्चे और पीछे हैं कि दुनियाको आश्रमी शिक्षाके हमारे दावे पर विश्वास ही नहीं होता। व हमारी कमजोरियोंसे आश्रमका मूल्यांकन करते हैं और आश्रमको केवल बाह्य आचार पर जोर देनेवाली और अबुद्धि पर स्थापित अेक निकम्मी संस्था मान बैठते हैं।

परन्तु जब हम अपने हृदयकी परीक्षा करते हैं तब देखते हैं कि पहले हम कहां थे और आश्रमवासके बाद आज कहां हैं और यह देखकर हमें आश्रम और आश्रमी जीवनमें छिपी हुअी आत्म रचनाकी अद्भुत अकल्पनीय और अवर्णनीय शिक्षाका विश्वास हो जाता है। हम जानते हैं कि हमें जो आत्म रचना करनी है अुससे हम अभी कोसों दूर हैं। परन्तु हमें यह भी विश्वास हो गया है कि यदि हमें आश्रमी शिक्षाका लाभ न मिला होता तो हम अपने ध्येयसे कोसों नहीं परन्तु खगोलशास्त्रियोंके प्रकाश-वर्षों जितने दूर होते।

आत्म रचना किसकी कितनी हुअी आश्रमी शिक्षा किसमें कितनी विकसित हुअी अिसका प्रतिक्षण माप लेने लायक पाराशीशी हमारे पास मौजूद है। हमने कितने वर्ष आश्रममें बिताये अिस परसे यह माप नहीं लिया जायगा। परन्तु हमारी सच्ची पाराशीशी यह है कि हम स्वराज्य रचना कितनी और कैसी कर सकते हैं। ज्यों-ज्यों हममें आश्रमी शिक्षा पचती जाती है ज्यों-ज्यों हमारी आत्म रचनाकी लाल रेखा अूंची होती जाती है, त्यों-त्यों हम स्वराज्य रचना अधिक गहरी अधिक विशाल और अधिक सच्ची कर सकते हैं। हमारे घरमें हमारे धंधेमें हमारी देशसेवामें — हमारे रचनात्मक कामोंमें हम कितना सत्याग्रह रख सकते हैं, अिस परसे हम अपनी आत्म रचनाका अचूक माप निकाल सकते हैं। छोटा या बड़ा जो भी हमारा प्रसिद्ध क्षेत्र है अुसमें हम स्वराज्य और सत्याग्रहके तेजस्वी तत्त्व कितने प्रकट कर सकते हैं अिस पर स हम और संसार हमारी आत्म रचनाका अेक अेक अंश नाप सकते हैं।

हम खादी ग्रामोद्योग और राष्ट्रीय शिक्षा जैसे रचनात्मक काम कुछ वर्षोंसे करते आये हैं हम असहयोग सविनय कानून-भंग सत्याग्रह आदि राजनीतिक लड़ाअियोंमें भी कुछ वर्षोंसे भाग लेते आये हैं हम अपने स्त्री-पुत्रों और जातिके लोगोंके साथ व्यवहार करते आये हैं। यह सब बाहरसे अेकसा दिखाअी देता हो तो भी क्या आश्रमी शिक्षाके पहले और आश्रमी शिक्षाके बादके हमारे व्यवहारोंमें तत्त्वतः अन्तर -

नहीं पड़ गया है? वस्तु अेक ही है, परन्तु गुण क्या दूसरे ही नहीं हो गये हैं? क्या अुसमें अेक प्रकारका रासायनिक परिवर्तन नहीं हो गया है? और आश्रमी शिक्षाके कालमें प्रतिवर्ष और हर मंजिल पर हमारे वहीके वही कार्य क्या गुणोंकी दृष्टिसे भिन्न नहीं होते गये हैं? हमने बारडोलीके असहयोगके समय जैसी लड़ाअी लड़ी या जैसा रचनात्मक कार्य किया अुससे दांडीकूचके समयके हमारे वही कार्य गुणोंमें बदल गये थे और 'करेंगे या मरेंगे' के युगमें तो अुनमें भी कुछ अद्भुत रासायनिक विकास हो गया।

हम सब आश्रमबंधु जहां और जिस स्थितिमें हों वहां हमें अपने परम अुपकारी आश्रम और अुसकी शिक्षाके प्रति अैसी श्रद्धा अपने भीतर जाग्रत रखनेमें मदद मिले अिस हेतुसे ये प्रवचन मैंने अैसे खास मौकोंका लाभ अुठाकर लिख डाले हैं। और अुन्हें पढ़कर सब स्वराज्य-सैनिकोंमें आश्रमी शिक्षाके लिअे प्रेम अुत्पन्न हो, अुसके बिना आत्म रचना संभव नहीं और आत्म-रचनाके बिना सच्चे स्वराज्यकी रचना संभव नहीं यह सत्य अुनके हृदयोंमें स्फुरित हो यह अिनके लिखनेका दूसरा हेतु है। पहला हेतु तो सार्थक होगा ही, क्योंकि हम सब आश्रम-बंधुओंके बीच प्रेमकी गांठ बंधी हुअी है और अुस प्रेमके कारण अेक-दूसरेके वचन अथवा प्रवचन हमें हमेशा मधुर लगते आये हैं। दूसरा हेतु सिद्ध करने जितनी मधुरता अिन प्रवचनोंकी भाषामें होगी?

स्वराज्य आश्रम
वेड़छी

जुगतराम दवे

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

पहला विभाग

आश्रम-प्रवेश

प्रवचन १

पहले दिनकी घबराहट

आप सब अुत्साहपूर्वक आज अिस आश्रममें रहने आये हैं। हम पुराने आश्रमवासी आप नये आश्रमवासियोंका प्रेमपूर्वक स्वागत करते हैं। आश्रमवाससे हमें नित्य नया आनन्द नित्य नअी प्रेरणा मिलती रही है। आश्रममें आकर हममें नया ही जीवन आ गया है। आप नये आनेवालोंको भी अैसा ही अनुभव होगा अिसमें शंका नहीं।

नये-नये आनेवालोंके मनमें आज पहले दिन कैसी अुथल-पुथल मच रही होगी अिसकी हम कल्पना कर सकते हैं। हम खुद जिस दिन नये आये थे अुस दिन हम भी अिस अनुभवमें से गुजरे थे। आपने आश्रमके बारेमें तरह तरहकी बातें सुनी होंगी और अपने मनमें आश्रमकी कुछ न कुछ मूर्ति बना ली होगी। आपके मनमें अुसके लिअे खूब प्रेम है यह तो स्पष्ट दिखाअी देता है। क्योंकि प्रेम न होता तो आप खुशी खुशी यहां दौड़े न आते। आपमें से कोअी माता-पिताको नाराज करके आये होंगे कोअी अंग्रेजी शिक्षाका मोह छोड़कर आये होंगे कोअी नौकरी-धन्धेके निमंत्रणको ठुकराकर आये होंगे और कोअी तो विवाहका मुहूर्त टालकर भी यहां आये होंगे। आश्रमके लिअे आपके मनमें प्रेम न हो तो अुसके प्रति अैसा आकर्षण कैसे हो सकता है?

परन्तु साथ ही आज पहले दिन आपके मनमें भीतर ही भीतर अेक प्रकारकी घबराहट भी होगी। आश्रमका अर्थ है अत्यन्त पवित्र स्थान। हमारे देशमें छोटे बच्चोंने भी ऋषि-मुनियोंके आश्रमोंकी कहानियां सुनी होती हैं। श्रीकृष्ण और सुदामा सांदीपनि मुनिके आश्रममें रहकर शिक्षा लेते थे। वहां अुन्हें गायें चराने और लकड़ियां लानेके लिअे वनमें जाना पड़ता था। रामचंद्र और लक्ष्मण विश्वामित्र ऋषिके आश्रममें रहे थे। विश्वामित्र अुन्हें लेने आये तब पहले दशरथ राजाको भी दुःख था। मेरे सुकुमार कुमार वनमें कैसे रह सकेंगे? आश्रम-जीवनके कष्ट कैसे सहन कर सकेंगे? अिस प्रकार अुनके जैसे ज्ञानी राजाको भी क्षणभर मोह हो गया था। आपने दिलीप राजाकी कथा भी सुनी होगी। वे वसिष्ठ मुनिके आश्रममें रहने गये थे। मुनिने अुन्हें बड़े आदरसे आश्रममें स्थान दिया। परन्तु वे भारतवर्षके बड़े महाराजा थे अिस कारणसे अुन्हें आश्रमके नियमोंसे मुक्त नहीं रखा। आश्रमकी भूमिमें भेद नहीं होता। राजा और निर्धन ब्राह्मण दोनोंके लिअे आश्रममें तो अेक ही नियम अेकसा ही जीवन। आश्रममें कामधेनुकी पुत्री नन्दिनी नामकी गाय थी। अुसे चराने जानेका काम दिलीप राजाके हिस्सेमें आया। राजाने अपना सौभाग्य समझा कि यह काम अुन्हें सौंपा गया।

अैसी हमारी आश्रमकी पुरानी कल्पना है। अिसलिअे आपके हृदय भाव पढ़ें तो यह समझमें आने जैसी बात है। आश्रमका अर्थ है ब्रह्मवेत्ता ॠषियोंका स्थान। वे किसी नदीके तट पर या पहाड़की तलहटीमें स्थित होनेके कारण रमणीय तो होते ही हैं परन्तु साथ ही वे घोर वनमें भी होते हैं। वहां तो जो ब्रह्मचारीका तपोमय जीवन बिताना चाहते हों वे ही जाते हैं और वे ही वहांका कठोर जीवन बिता सकते हैं। ब्राह्म-मुहूर्तमें अुठना कैसी भी ठंडमें गंगाजीमें जाकर डुबकी लगाना नदीसे पानी भरकर लाना जंगलसे लकड़ी काटकर लाना गायें चराने जाना — अैसा कष्टमय जीवन वहांका होता है। गुरुकी सेवा भिक्षाका भोजन और अुस पर भी कठोर संयम। यह सब हमारी आत्माको भीतरसे बहुत ही प्रिय है अैसा जीवन बितानेवाले आश्रमवासी ब्रह्मचारियोंके लिअे हमारे मनमें आदर भी पैदा होता है। परन्तु अैसा जीवन बितानेके लिअे स्वयं हमें किसी आश्रममें जानेका प्रसंग आये तो हमारे मनमें घबराहट हुअे बिना नहीं रहती। हम सोचते हैं क्या हम अैसे कष्टमें टिक सकेंगे? हारकर भाग तो नहीं जायेंगे? हम तो साधारण विद्यार्थी हैं। माता-पिताकी छायामें निश्चिन्त होकर पले हैं। आश्रममें त्यागी पवित्र प्राणवान ब्रह्मचारी ही रह सकते हैं।"

आपके मनमें आश्रममें आने पर घबराहट होनेका अेक और भी कारण है। आश्रमके साथ महात्मा गांधीकी मूर्ति आपकी आंखोंके सामने खड़ी हो जाती है। अुनका जीवन कितना कठिन और तपोमय है यह हमारे देशमें कौन नहीं जानता? आपमें से किसी किसीने अुन्हें यात्रामें कहीं न कहीं देखा भी होगा और अुनकी सभाओंमें या प्रार्थनाओंमें आप अुपस्थित भी रहे होंगे। किसीने साबरमतीके तट पर स्थित अुनका आश्रम भी देखा होगा अथवा दूसरोंसे अुसका वर्णन सुना होगा। पूज्य गांधीजी अपने जीवनमें अेक क्षणका भी आराम नहीं लेते। चौबीसों घण्टे और अेक अेक मिनट देशको अर्पण करके वे रहते हैं। चरखेकी अुनकी अुपासना कितनी कड़ी है? सफरकी थकावट और रोगकी पीड़ामें भी वे चरखेका नागा नहीं करते। अुनके वचनमात्रसे लोग लाखों रुपयोंका ढेर लगा देते हैं फिर भी पूज्य गांधीजी तो केवल खादीके कपड़ेसे ही काम चलाते हैं। वे नहीं मानते कि जितना भी लेनेका अुनका हक है। जिसे वे देशकी कृपाभावसे दी हुअी भेंट मानते हैं।

और गांधीजीके आश्रममें रहन-सहन कैसी होती है जिसकी बातें भी आपके कानों पर पड़ी होंगी। जिन सब बातोंने आपकी घबराहट बढ़ा दी हो तो कोअी आश्चर्य नहीं। बिना मसालेका खाना कैसे अच्छा लगेगा? हरिजन मुसलमान अीसाअी सबके साथ अेक पंक्तिमें बैठकर कैसे खाया जायगा? खाना बनाना पीसना कूटना सभी काम खुद करें यह कैसे हो सकता है? और पाखाने भी स्वयं ही साफ करें? यह तो हद ही हो गअी! और आपको यह घबराहट भी रहती होगी कि सूर्यके अुदयसे अस्त तक अगर अैसी ही अैसी बातें करते रहना पड़े तो फिर अध्ययन कब किया जाय? अच्छी अच्छी पुस्तकें कब पढ़ी जायें?

आपकी पहले दिनकी घबराहटका चित्र मैंने हूबहू चित्रित किया है न? आपके मनमें पैठे हुये डरका यह प्रतिबिम्ब मैं कैसे पेश कर सका जिसका किसीको आश्चर्य होनेकी जरूरत नहीं। हम भी अेक दिन आपकी ही तरह यहां नये आये थे। पहले दिन हमने भी आपकी ही तरह घबराहट महसूस की थी। आज भी अुस घबराहटसे हम बिलकुल मुक्त हो गये हैं यह न समझिये यद्यपि हममें से किसीको यहां आये २ वर्ष किसीको ४ और किसीको जिससे भी ज्यादा वष हो चुके हैं। ऋषि-मुनियोंके पुराने आश्रमोंकी तरह ही पूज्य गांधीजीके आश्रमकी हमारी कल्पना जितनी अूंची है कि हम पूरे आश्रमवासी कब हो सकेंगे यह घबराहट हमें निरंतर बनी ही रहती है।

आपकी प्रथम दिनकी घबराहटमें हमारी आन्तरिक सहानुभूति आपके साथ है, यह मान लीजिये। आश्रमवासी होनेके मामलेमें हम नये और पुराने अेक ही सतह पर हैं। सच्चे आश्रमवासीके पद पर पहुंचना सभीके लिये बाकी है। हम सब प्रयत्नवान है, पूर्ण कोअी नहीं। जिसलिये आप देखेंगे कि यहां कोअी किसीके दोष नहीं निकालेगा कोअी किसीकी आलोचना नहीं करेगा। आप हम सबको हिमालयकी चोटी पर पहुंचनेका अुत्साह और अुमंग है। परन्तु हममें से किसीने अभी तक तलहटीका रास्ता भी पूरा तय नहीं किया है। कोअी दो कदम आगे है तो कोअी दो कदम पीछे है जिससे ज्यादा फर्क नहीं है। जिसलिये यदि नयेको घबरानेका कारण नहीं है, तो पुरानेको अभिमान करनेका भी कारण नहीं है। दोनोंको प्रसन्न होनेका कारण जरूर है। हम पुराने आश्रमवासी आज जिस बातसे प्रसन्न हो रहे है कि आपके जैसे ताजे नये अुत्साहसे भरे हुये साथी हमारे साथ जुड़े है। कठिन मार्ग पर चलते हुये हमें जो कुछ थकान चढ़ी होगी वह नवीन रक्तवालोंका सम्पर्क होनेसे अुड़ जायगी। आपको भी जिस बातसे आनन्द होगा कि कठिन यात्रा पर निकलते समय आपको अनुभवी यात्रियोंका साथ मिल गया।

यह छिपानेकी जरूरत नहीं कि आश्रमवासी होना कठिन है। परन्तु जिसमें घबरानेकी कोअी बात नहीं है। हममें अुत्तम देशसेवक बननेकी लगन है जिसलिये अुसकी तालीम कितनी ही कठिन हो तो भी वह हमें फूल जैसी हल्की ही लगेगी। आअिये हम नये और पुराने मित्र अेक-दूसरेका हाथ पकड़कर आनन्द मनाते हुये अेक-दूसरेको सहारा देते हुये आश्रमी शिक्षाका पहाड़ चढ़ना शुरू करें। आअिये हम देश-रचनाके काममें लगनेसे पहले आत्म रचना करके वह महान कार्य करनेकी योग्यता प्राप्त कर लें।

प्रवचन २

स्वच्छताकी अिन्द्रिय

हमारे आश्रमके अेक खास नियमकी तरफ आज मैं आप सबका ध्यान दिलाता हूँ। वह यह है कि आश्रमकी भूमिमें कृपा करके कोअी थूके नहीं। आप कहेंगे यह कितनी छोटी और तुच्छ बात है! यह भी कोअी नियम है? हाँ यह छोटी और तुच्छ बात जरूर है परन्तु आश्रमके स्वच्छता-व्यवहारकी कुंजी है। क्योंकि जो थूकने जैसी तुच्छ बातके लिअे आश्रम भूमि पर कृपा करेंगे वे नाककी रींट या कफको जहां तहां फेंक कर हमारी भूमिका हरगिज नहीं बिगाड़ेंगे। तब फिर पेशाब या पाखानेके लिअे तो कहीं भी आड़ देखकर बैठनेका काम करेंगे ही कैसे?

मुझे आपके सामने आश्रमके आचार-विचारकी बहुतसी बातें रखनी हैं। परन्तु यह बात आज पहले ही मौके पर कह देना अच्छा है। आपने देख लिया कि दोपहरको हमने आपके बिस्तरे, कपड़े और पुस्तकें आदि सब सामान धूपमें डाल दिया था। आपने और हमने मिलकर अुसकी खूब बारीकीसे जांच की थी। अैसा हमने क्यों किया सो आपने जान लिया है। हमारे घरोंमें खटमल पिस्सू और जूं जैसे मनुष्यजीवी जन्तु आम तौर पर रहते हैं। आपका सम्पर्क साथ कर आश्रममें अुनका प्रवेश हो जाय यह हम जरा भी नहीं चाहते।

अिसी तरहके कुछ बिना शरीरवाले जन्तु भी हमारे समाजमें होते हैं जिसका आपको पता नहीं होगा। ये अशरीरी जन्तु हैं हमारी गंदी आदतें। घरमें या रास्तेमें चाहे जहां थूकना नाक साफ करना रास्ते पर पेशाब करना और शौच करनेके लिअे भी बैठ जाना यह हमारे आदतरूपी कीड़ोंकी अेक जाति है। चलते फिरते मुँहसे गालियां निकालना दूसरी जाति है। आलस्यमें कीमती समय बरबाद करना तीसरी जाति है। यों तो अिन आदतरूपी कीड़ोंकी अनेक जातियां हैं और वे अेकसे अेक अधिक जहरीली हैं। परन्तु आज तो हमें पहली जातिकी ही बात करनी है। अुन खटमलों और पिस्सुओंकी तरह अिन जन्तुओंको भी हम आसानीसे बीनकर निकाल सकते हैं अेक बार आपको आंखोंसे अुन्हें पहचानना भर आ जाना चाहिये।

थूकनेके बारेमें कहां थूकें और कहां न थूकें अिसका आम तौर पर समाजमें थोड़े ही लोग विचार करते मालूम होते हैं। लोग यही मानते लगते हैं कि थूकमें कौनसी बड़ी गंदगी है। अधिकतर तो अिसका कारण यह होगा कि थूक बहुत घिनौना नहीं लगता। कुछ मिनटोंमें अुसका फेन बैठ जाता है और वह जमीनमें मिलकर अदृश्य हो जाता है। अिससे लोगोंको वह पानी जैसा निर्दोष लगता होगा। परन्तु असलमें वह अितना निर्दोष नहीं होता। वह घिनौना और गंदा होता ही है। वह दिखाअी नहीं देता फिर भी मक्खियां अुसे खोजकर अुस पर बैठती हैं। अिसके

सिवा मनुष्य रोगी हो — और अधिकांश मनुष्य किसी न किसी रोगके शिकार होते ही हैं — तो वह हवामें जहर भी फैलाता है।

थूकी हुअी जगह पर पैर पड़ जानेसे हमें कांटा चुभने जैसा अनुभव होना चाहिये। तब फिर अैसी जमीन पर बैठना या सोना तो सहज ही कैसे हो सकता है? हम आश्रममें अपनी स्वच्छताकी अिन्द्रिय को बहुत ही तीव्र बनाना चाहते हैं। यह अेक नया शब्दप्रयोग है न? आपने पंच ज्ञानेन्द्रियों और पंच कर्मेन्द्रियोंके बारेमें सुना है। परन्तु अिस स्वच्छताकी अिन्द्रियके विषयमें आज ही सुन रहे हैं। आंख-कान जैसा अुसका कोअी स्पष्ट अंग नहीं बताया जा सकता। फिर भी हमारे अन्दर सूक्ष्म रूपमें अेक अैसी वृत्ति मालूम होती है जो स्वच्छताको देखकर बहुत खुश होती है और अस्वच्छताको देखकर बहुत दुखी होती है। हम आश्रममें अिस स्वच्छताकी अिन्द्रियका विकास करके अुसे बहुत ही तीव्र बनाना चाहते हैं। अिसमें हमें काफी सफलता मिली है और आप भी देखते देखते काफी सफलता प्राप्त कर लेंगे।

स्वच्छताकी अिन्द्रियका विकास न करें तो वह नीचे गिरने लगती है और धीरे-धीरे अिस हद तक गिर जाती है कि हमें निरा पशु बना देती है। सामान्यतः टीमटामसे रहनेवाले लोग भी रास्तेमें थूक देते हैं यह आपने देखा होगा। यही लोग यदि सावधान होकर अपनी अिस आदत पर काबू न रखें तो घरके कोनोंमें थूककी पिचकारियां मारने लग जाते हैं। अिस तरह करते करते स्वच्छताकी अुनकी भावना अितनी जड़ हो जाती है कि घरमें कफ थूक देनेमें भी अुन्हें संकोच नहीं होता।

भंगीका धंधा करनेवाले हमारे अभागे भाअी-बहनोंको देखेंगे तो आपको पता चलेगा कि अुनकी स्वच्छताकी भावना बिल्कुल ही मरी हुअी है। शहरोंके पाखाने कितने अधिक गंदे होते हैं! अुनमें से वे मैला निकालते हैं। अिसके लिये कोअी अुन्हें अच्छे साधन भी नहीं देता। लगभग हाथोंसे बटोरकर अुन्हें मैला अुठाना पड़ता है। कंगाल दबे हुअे और साहसहीन होनेके कारण अुन्हें यह स्थिति सहन करनेकी आदत पड़ गअी है। अिसमें मनुष्य-जातिकी प्रतिष्ठाको शोभा न देनेवाली कोअी बात है, यह भावना ही अुनमें नहीं रह गअी है। अिस ढंगका काम करनेके बाद खूब स्नान करनेकी तड़प लगनी चाहिये लेकिन अिसके बजाय अुन्हें तो हाथ धानेकी भी अिच्छा नहीं रहती। बहुतसे भंगी अपना काम करनेके बाद पूरे हाथ भी नहीं धोते और रोटी खाने बैठ जाते हैं। और वह भी गंदे पाखानोंकी छायामें बैठकर।

यह चित्र भंगियोंके प्रति तिरस्कार पैदा करनेके लिअे मैंने नहीं रखा है। अुन्हें हमारे समाजने ही अितना नीचे गिरा दिया है। अिससे समाजको लज्जित होना चाहिये। अुन्हें अूंचा अुठाकर मनुष्यकी प्रतिष्ठा पर आरूढ़ कराना समाजका कर्तव्य है।

भंगियोंका अुदाहरण तो यह बतानेके लिअे ही मैंने दिया है कि स्वच्छताकी भावना अन्तमें किस हद तक जड़ हो जाती है। परन्तु अुच्च कहलानेवाले लोगोंकी यह भावना भी कम जड़ नहीं होती? अिन्हीं गंदे और पृथ्वी पर नरकके समान

पाखानोंमें वे खुद रोज बैठते ही हैं न? पाखानोंमें से गन्दा पानी बह रहा हो ऐसी तंग गलियोंमें बैठकर जाति-भोजन करते लोगोंका दृश्य किसने नहीं देखा है? गलियोंमें, घरके दरवाजेके सामने जूठन डालना पेशाब करना, बच्चोंको टट्टी बैठाना — ये दृश्य भी समाजमें रोज देखनेको मिलते हैं। जिन गलियोंकी मलमूत्र मिश्रित जमीन पर बच्चे खेलते हैं और लोटते हैं। परन्तु इससे लोगोंको आघात कहां लगता है? जिन मक्खियोंकी गंदी मिट्टीसे हाथ धोने या बरतन मलनेमें भी किसे चोट पहुंचती है? समाजकी स्वच्छताकी इन्द्रिय बिलकुल ही जड़ बन गयी है। इसीलिये हमें नदीके किनारों तालाबों तथा गांवके आसपासके रमणीय मैदानोंको मल-विसर्जनके स्थान बना देनेमें जरा भी शर्म नहीं आती।

यहां आश्रममें दो दिन रहेंगे तो आपकी स्वच्छताकी आंख खुलने लगेगी। पहियोंके बच्चोंकी आंखें जन्मके समय बंद होती हैं और थोड़े दिन बाद खुलती हैं यह आप जानते हैं न? आपको भी ऐसा ही अनुभव होगा। यह आंख खुलते ही आप पहले-पहल क्या देखेंगे? आश्रमके लोगोंके फूलसे मुलायम और सफेद झक कपड़े सबसे पहले आपकी नजरमें आयेंगे। क्योंकि यहां हम अपने कपड़े वगैरा गांवके लोगोंसे ज्यादा धुलके रखते हैं। आप तुरंत साबुन पर जोर देनेवाले हो जायेंगे। नहानेमें भी अधिक पानी काममें लेनेवाले और ज्यादा साबुन लगानेवाले हो जायेंगे। लेकिन इसमें अतिशयता हो और आप साबुनका खर्च बढ़ा दें यह हमें नहीं पुसायेगा। फिर भी आपको एकदम मना करना भी ठीक नहीं। स्वच्छताकी आंख मुश्किलसे खुलती है, उसके बन्द हो जानेसे भी काम कैसे चल सकता है?

आज यह सब आपसे कहता हूं उसका हेतु समझ लीजिये। आपकी नयी इन्द्रिय खुलने लगे इससे आप फूल न जाइये। परन्तु अच्छी तरह समझकर उसका विकास कीजिये। जिस जमीन पर हमें चलना है फिरना है खेलना है सोना है या प्रार्थना तथा कामकाज करने बैठना है उस जमीनको थूक इत्यादिसे बिगाड़ना आपको असह्य लगना चाहिये। खाना खाकर उसको चीर फेंकनेके लिये हाथ उठे तो उसे तुरन्त रोक दीजिये। उससे कहिये "अरे हाथ तू यह क्या कर रहा है? क्या तू हमारी प्रिय भूमि पर ये चीरें फेंककर उसे भद्दी और गंदी करना चाहता है?" मल या मूत्रके त्यागके समय सामान्य लोग इतना ही विचार करते हैं कि उन्हें कोई देखे नहीं। आजसे आप यह आग्रह रखिये कि कोई देखे या न देखे हम अपनी भूमिको गंदी या बदबूदार कभी नहीं बनायेंगे। हमारे आश्रममें तो इसके लिये खास तौर पर पाखानोंकी व्यवस्था की गयी है। परन्तु जहां पाखाना न हों वहां भी इतना खयाल आप जरूर रखें कि जहां मनुष्योंका आना-जाना न हो वहां जाकर बैठें और बैठनेके बाद मलको मिट्टीसे अच्छी तरह ढंक दें।

यह सारा विवेचन करनेके बाद जूठन कागज मूत्रके टुकड़े इत्यादि न बिखेरनेके बारेमें कुछ और कहनेकी जरूरत रह जाती है?

आश्रम-प्रीत्यर्थ

जैसे हमारा शरीर है वैसे हमारे आश्रमका भी शरीर है। अलग अलग मंदिर भुद्योगालय रास्ते, चौक कुअें कुण्ड पाखाने, बगीचा ये सब भुसके शरीरके अवयव हैं। हमें अपना शरीर स्वच्छ रखना कैसा अच्छा लगता है? वैसे ही आश्रमको भी अपना शरीर स्वच्छ रखना अच्छा ही लगेगा न? अिसके सिवा भुसे केवल स्वच्छतासे ही संतोष नहीं है। वह कुछ शृंगार भी चाहता है? आपको अैसी भाषा पर आश्चर्य होता है! आप कहेंगे "आश्रम विचार थोड़े ही करता है? आश्रमके कहां जीव है? भुसके क्या हाथ-पैर हैं?" भुसके पास ये सब हैं। हम सब आश्रमवासियोंका सघ ही भुसकी आत्मा है। हमारे हाथ-पैर ही भुसके हाथ-पैर है। कैसी सुन्दर है भुसकी आत्मा? वह कभी आलस्य नहीं करती सेवाके लिअे निरन्तर तिलमिलाती रहती है स्वच्छता और सुन्दरताके लिअे पसीना बहानेको सदा तैयार रहती है। अैसी जिसकी आत्मा हो जिसके सौसियों हाथ-पैर हों वह आश्रम जरासी भी अस्वच्छता या गंदगी क्यो सहन करे? क्यों वह सुन्दर, सुशोभित और रम्य न रहे? क्यों वह अपने सुन्दर क्रीडांगणामें गांवके बच्चोंको खेलनेके लिअे आकर्षित न करे? क्यों वह अपनी मनोहर फुलवारीमें गांवकी बालाओंको गरबा नाचनेके लिअे निमंत्रित न करे? क्यों वह अपने पवित्र चौकमें गांवके बच्चों और बूढ़ों सबको प्रार्थना करनेके लिअे न बुलाये?

परन्तु आश्रमके मनकी यह सुन्दर अभिलाषा पूरी कब हो सकती है? तभी जब अिसके हाथ-पैर अच्छे और स्वस्थ हों भुत्साहसे भरे और बलवान हों! आप सब सहमत हों तो हम आशा रखेंगे कि हम — भुसके हाथ-पैर — ढीले-ढाले निर्बल और आलसी साबित नहीं होंगे।

आश्रमकी स्वच्छ और सुन्दर रहनेकी मुराद तभी पूरी हो सकती है जब हम भुसकी आज्ञा शिरोधार्य करनेवाले बनें। आश्रम कोओी राजाका महल या अमीरका बंगला नहीं है। शौकीन धनी लोग नौकर चाकर रखकर अपने निवासस्थानोंको सजाते हुअे देखे जाते हैं। परन्तु आश्रम भुस रास्ते पर नहीं चल सकता। चलने लगे तो वह आश्रम ही नहीं रहेगा। आश्रमको कोओी भुपमा देनी हो तो राजा-महाराजा या सेठ-साहूकारोंकी दी ही नहीं जा सकती परन्तु किसी ऋषि मुनि अथवा योगीकी ही देनी चाहिये। भुनकी सुन्दरता और स्वच्छताको परखनेकी आंख अत्यन्त तेज होने पर भी वे ये चीजें पैसेसे नहीं खरीदते, परन्तु स्वयं मेहनत करके पैदा करते और भुनकी रक्षा करते हैं।

हम भुन योगियोंकी पद्धतिसे ही अपने अिस आदरणीय आश्रमको स्वच्छ सुन्दर और आकर्षक रखना चाहते हैं। नौकर रखकर असा करना हमें पुसायेगा

नहीं और वह हमें शोभा भी नहीं देगा। हम खुद ही सेवक बननेकी लालसा रखनेवाले हैं, तब और किसके पास सेवा कराने जायेंगे? हम जिस कामको करनेकी कुशलता और ताकत न रखते हों अुसमें दूसरोंकी सेवा लेनेकी बात तो समझमें आ सकती है। मकान बांधना हो या कुआँ बनाना हो तो अुसमें दूसरोंकी सेवा लेंगे परन्तु अपने आश्रमको साफ-सुथरा रखना तो हमारा अपना ही काम है। जब तक हम अपने हाथसे अपनी कलादृष्टिके अनुसार यह काम नहीं करते तब तक हमारी आत्माको संतोष ही नहीं होगा।

हमारा आश्रम विशाल है। कमसे कम चार बीघे जमीनमें यह फैला हुआ है। अुसकी सफाई करना और वह भी हमारी सूक्ष्म कल्पनाके अनुसार, कोई आसान काम नहीं है। परन्तु हम घबरायें क्यों? यदि काम विशाल है तो हमारे पास काम करनेवाले हाथ-पैरोंकी भी तो कमी नहीं है? और अब तो हमारी मण्डलीमें हालमें ही आप जितने नये मित्र भरती हो गये हैं। सफाईके काम बांटने बैठेंगे तो सबके हिस्सेमें भी नहीं आयेंगे और शायद आपमें से कुछको निराश होना पड़ेगा। हरअेकको कुछ न कुछ हिस्सा तो देंगे ही अिसका विश्वास रखिये। हां यह हो सकता है कि पहले ही दिन किसीको अपनी पसन्दका काम न मिले। वे लोग मेहरबानी करके नाराज न हों। हम हर सप्ताह सफाई-टुकड़ियां बदलते रहते हैं। जिस सप्ताह अपनी पसंदका काम हिस्सेमें न आये तो बादके किसी सप्ताहमें जरूर आ जायेगा।

अब आपको मैं अिसकी कल्पना कराअूंगा कि हमारे पास आश्रमकी सफाईके सिलसिलेमें क्या क्या काम करने लायक हैं

१ आश्रमके १० पाखानों और ६ पेशाबघरोंकी सफाई करना।

२ रास्तों और चौकमें झाड़ू लगाना।

३ कुंड कुआं तथा अुनसे सम्बन्ध रखनेवाली पानीकी नालियां साफ करना।

४ कूड़ेके गड्ढे भरना और नये गड्ढे खोदना।

५ आश्रमकी गोशालाका कचरा निकालना और घूरोंको नीचे-अूपर करना।

६ छात्रालय विद्यालय अुद्योगालय औषधालय भोजनालय संग्रहालय वगैरा सार्वजनिक मकानोंकी सफाई करना।

अिनके अलावा कुछ काम अैसे हैं जिन्हें सफाईमें नहीं गिना जा सकता परन्तु आश्रमकी सुविधा और सुन्दरता बढ़ानेवाले होनेके कारण हम अुन्हें आवश्यक मानते हैं। वे ये हैं

७. रहँट चलाकर नहाने-धोनेका कुण्ड भरना।

८. वर्षाके फूलझाड़ों और वृक्षोंको पानी पिलाना तथा चौक वगैरामें पानीका छिड़काव करना।

९ तस्वीरा नक्शों और सूत्र लिखनेके तख्तों वगैराको साफ करना और अुनमें फेरबदल करना।

१० कला-मण्डपकी नित्य नभी सजावट करना।

आप देखते हैं कि आश्रमको अच्छा और सुशोभित रखना हो तो हमारे पास काम कम नहीं हैं। जितने काम तो हम आज तक अपने अनुभवके अनुसार और हमारी रसिकता और कलाप्रियताके अनुसार करते आये हैं। आप नभी आंखोंसे कुछ नये काम ढूंढकर सुझायेंगे तो भुन्हें हम खुशीसे अपने कार्यक्रममें शामिल कर लेंगे।

मैं यह कह चुका हूं कि स्वच्छता और सुन्दरताके लिये आश्रममें नौकर न रखनेकी अेक मर्यादा रखी गभी है। अुस सम्बन्धमें अेक दूसरी मर्यादा भी है। वह यह है कि अिस कार्यमें रोज ४५ मिनटसे ज्यादा वक्त किसीको नहीं देना चाहिये। अितने समयकी मर्यादामें रहकर हम अपने अपने हिस्सेका काम आरामसे पूरा कर सकते हैं। अलबत्ता अिसके लिये पहले तो हरअेक काममें काफी संख्यावाली टकड़ी होनी चाहिये। दूसरे, यह भी आवश्यक है कि ये टुकड़ियां काफी चपलता और कुशलतासे अपना काम पूरा करें। तीसरे, प्रत्येक टुकड़ीके पास झाड़ू, फावड़े कुदाली बाल्टी टोकरी वगैरा साधन काफी संख्यामें होने चाहियें। अिन सबकी सख्या हमने अपने अनुभवसे निश्चित कर रखी है। आप जब काममें लगेंगे तब देखेंगे ही।

हमारी दिनचर्यामें रोजके अिस ४५ मिनटके समयको हम आश्रम-प्रीत्यर्थ दिया जानेवाला समय कहते हैं। प्रत्येक आश्रमवासी रोज अितना समय अवश्य दे यह अपेक्षा आश्रम हमसे रखता है। शिक्षक विद्यार्थी खादी-कार्यकर्ता खादी-विद्यार्थी, कार्यकर्ताओंके घरकी स्त्रियां व बच्चे — सब अपने ४५ मिनट प्रेमसे आश्रम-प्रीत्यर्थ देते हैं। आश्रममें रहनेवाले गृहस्थ परिवारोंको आश्रमके सब नियम लागू नहीं होते। किन्तु व भी प्रेमसे आश्रम-प्रीत्यर्थ अपना समय देते हैं। कुछ कार्यकर्ताओंको अपने कामके सिलसिलेमें देहातमें घूमने जाना पड़ता है। परन्तु वे भी आश्रममें मौजूद होते हैं तब आश्रम-प्रीत्यर्थ अपने हिस्सेका काम पूरा करनेसे नहीं चूकते।

स्वच्छता और शोभाके जो दस काम अूपर बताये गये हैं अुनमें सबसे श्रेष्ठ और सम्मानपूर्ण काम हम किसे मानते हैं यह बताअूं? वह है पाखाना-सफाओका काम। हमारे यहां अुसे महाकार्य जैसा गौरवपूर्ण नाम दिया गया है। हमने अपने लिये यह नियम रखा है कि अिस काममें आश्रमके मुख्य कार्यकर्ताओंमें से कोओ न कोओ तो रोज हो ही। अुत्साही और सेवाभावी विद्यार्थी हमेशा चाहते हैं कि अुनके हिस्सेमें यह काम आय। और वे दूसरों पर दया करके अुन्हें अिस कामसे दूर रखनेकी कोशिश करते हैं। यह भय है कि वे आपको भी अिस कामसे दूर रखें। नये मित्रोंको मैं सावधान करना चाहता हूं।

'आश्रम प्रीत्यर्थ' केवल ४५ मिनट खर्च कीजिये और देवताओंके लिये भी दुर्लभ स्वच्छता सुन्दरता तथा ठंडकका आनन्द लूटिये। जिस सुखकी जिसे अेक बार चाट लग जाती है असे अिसका व्यसन हो जाता है। फिर तो अस्वच्छ स्थानमें बिना हवावाली जगहमें बन्द किये हुअे प्राणीकी तरह असका दम घुटने लगता है। स्वच्छताका प्रेम हम सबकी रग रगमें जितना बस जाय तो मैं समझूंगा कि आश्रमकी अनेक शिक्षाओंमें से अेक शिक्षामें हम सफल हुअे।

प्रवचन ४

हमारा यज्ञकर्म

जैसे हम सब आश्रमवासी रोज ४५ मिनट 'आश्रम प्रीत्यर्थ' देते हैं अुसी प्रकार हमारे आश्रममें यह भी नियम है कि प्रत्येकको मातृभूमिके लिअे यज्ञकर्म करनेमें अेक घण्टा देना चाहिये। रोज दोपहरको सब आश्रमवासी अिकट्ठे होकर अेक घण्टा सामूहिक कताअी करते हैं यह आप रोज देखते हैं और अुसमें आप रोज शामिल भी होने ही लगे हैं। यही हमारा यज्ञकर्म है।

साधारण भाषामें अग्निमें घी आदि पदार्थ होमना यज्ञ कहा जाता है। अैसा यज्ञ करनेके लिअे हमारे पास घी नहीं है। हमारे दरिद्र देशमें सुकुमार बालकोंको भी घी-दूध खानेको नहीं मिलता। परन्तु हमारे पास अेक दूसरा घी है। वह भी भारतमाताके दुर्बल शरीरके लिअे बहुत ही जरूरी है। वह घी है हमारा अपना पसीना। यज्ञका पुण्य कमायें हम और अुसमें घी होमें बेचारी गायका यह हमें पसन्द नहीं। हम तो मानते हैं कि हमारी अपनी हड्डियोंमें से यह बिलोकर जो घी हम अुत्पन्न करें वही सच्चा घी है और अुस घीको होमें वही सच्चा यज्ञ है। मेरे कहनेका मतलब तो आप समझ ही गये होंगे? दिनमें अेक घण्टा भारतमाताके खातिर शरीर-श्रम करनेको — सूत कातनेको — ही हम यज्ञ मानते हैं।

देशके खातिर सब देशसेवक कमसे कम आध घण्टा शरीर-श्रम करें — कातें यह पूज्य गांधीजीकी मूल कल्पना है। यह कितनी भव्य और सुन्दर कल्पना है? हमारे विशाल देशमें सैकड़ों शहर और लाखों गांव हैं। अुसमें हमारे जैसे कितने ही आश्रम होंगे और नये बनेंगे। कितने ही भाअी और ग्रामोद्योगोंके केन्द्र होंगे। कितने ही सेवादल और कितनी ही समितियां होंगी। कितनी ही पाठशालायें विद्यालय और अुद्योगशालायें होंगी। कितने ही अुत्साही देशभक्तोंके परिवार होंगे। अुन सबमें यदि यज्ञका नियम पालन किया जाय तो कितना भव्य परिणाम आये!

हमारे आश्रम जैसी छोटी संस्थामें हम आश्रम-प्रीत्यर्थ रोज थोड़ासा समय अर्पण करते हैं, अुससे आश्रमकी सूरत कितनी सुन्दर बन जाती है? हम जितना यज्ञ न करें तो आश्रम गंदा, बदबूवाला और रोगका घर बन जाय और अुसमें रहनेमें हमारे

मनको किसी प्रकारका मुस्लास अनुभव न हो। हमारे गांवोंमें प्रत्येक ग्रामवासी भेक-जीव होकर रोज अपने प्यारे गांवके लिअे थोड़ा भी समय नहीं देते जिसका बुरा परिणाम हम प्रत्यक्ष देखते हैं। गांव कितने मले, रोगी भूखे बेकार और अज्ञान बन गये हैं? भारत देशकी स्थिति भी भैसी ही तेजहीन बन गअी है क्योंकि अुसकी सन्तानें अपनी मातृभूमिके लिअे रोज थोड़ासा भी यज्ञ नहीं करतीं।

कोअी कहेगा "देशके खातिर सभीको यज्ञ करना चाहिये, यह कल्पना तो सुन्दर है। परन्तु अिसके लिअे शरीर-श्रम ही करनेकी क्या जरूरत है? अिसके बजाय प्रत्येक भारतवासी थोड़े पैसे दे दे — मान लीजिये कि हर साल ४ आने दे दे तो क्या अधिक अच्छा नहीं होगा? ४० करोड़ भारतवासी वार्षिक चार चार आने दें तो भी १० करोड़ रुपयोंका ढेर लग जाय। अुससे देशहितके जो काम करने हों सो कर सकते हैं।"

अिस प्रकार निराशिकका सवाल हल कर लेना आसान है। परन्तु हर साल १० करोड़ रुपये जमा करना अुतना आसान नहीं है। राष्ट्रीय महासभा (कांग्रेस) जैसी समर्थ संस्था हमारे देशमें स्वराज्यके लिअे कितनी लड़ाअियां लड़ रही है? लोग अुसकी कितनी अिज्जत करते हैं? अुसने अपनी सदस्यताकी फीस चार आने जैसी बहुत थोड़ी रखी है। फिर भी अुसके दफ्तरमें १० लाख सदस्य मुश्किलसे दर्ज होते हैं। अिसके कारणोंमें सबसे बड़ा कारण लोगोंकी अत्यन्त दरिद्र दशा है। आप कहेंगे, अितनी अधिक दरिद्रता देशमें है ही कहां? लोग तो देखते देखते चार आनेकी बीड़ियां फूंक देते हैं, दो चार मील चलनेकी मेहनत बचानेके लिअे मोटर बसोंको चार आने दे देते हैं। लेकिन यह आपने अूपरी स्तरके लोगोंका चित्र खींचा जिन्हें देशकी बिलकुल परवाह नहीं होती। अुनमें देशकी भावनावाला हजारमें अेक भी मुश्किलसे निकलेगा। और जो देशके लिअे चार आने देनेकी तैयारी दिखायेंगे वे भी घरके छोटे-बड़े प्रत्येक आदमीके हिसाबसे थोड़े ही चार चार आने देंगे? घरका मुखिया होगा वही देगा। अिसलिअे अन्तमें तो अूपरके स्तरवालोंमें से प्रति हजार घरों अर्थात् चार-पांच हजार आदमियोंमें से चार आने देनेवाला अेक आदमी ही आपको मिलेगा।

यह तो हमने अूपरके स्तरकी बात की। परन्तु हमारे देशकी अधिकांश आबादी तो अत्यन्त गरीब बेकार और अज्ञानमें डूबे हुअे लोगोंकी है। शहरी लोग अपने शहरोंमें बाजारोंमें और रेल्गाड़ियोंमें ही घूमते रहते हैं। अुन्हें अिस जनताके दर्शन भी बहुत नहीं होते। लेकिन हम तो ग्रामसेवक हैं और सच्चे ग्रामसेवक बननेकी अिच्छा रखते हैं। हम अिस दरिद्र जनताको रोज देखते हैं। अिसीके बीच रहते हैं। आप हमारे आश्रमके आसपासकी झोंपड़ियोंमें घूम आते हैं। मानिये कि आप देशके लिअे चार आनेका चन्दा अिकट्ठा करना चाहते हैं। आपको विश्वास है कि हमारे गांवके २०० घरोंमें से १५० घरोंमें तो आपकी अिस कामके लिअे पैर रखनेकी भी हिम्मत नहीं होगी। तुरन्त आपका मन आपको भीतरसे रोकेगा। गरीब लोग हमेशा दूसरोंसे

ज्यादा अुदार होते हैं। अिसलिअे शहरियोंकी तरह वे आपका मुंह बन्द नहीं कर देंगे। कुछ आपको प्रसन्न करनेके लिअे चवन्नी निकाल कर दे देंगे और आपको पता भी नहीं चलने देंगे कि अुन्होंने और अुनके बच्चोंने खाया है अथवा भूखे हैं। परन्तु यदि आप बिलकुल विचारशून्य और भावनाशून्य न हों तो आपको ही लगेगा कि चार आने पर पहला अधिकार अिस झोंपड़ीके बच्चोंका ही होना चाहिये। जब तक अुन्हें थोड़ा दूध नहीं मिलता, जब तक अुनके पेटका गड्ढा पूरा नहीं भरता तब तक देशके नाम पर, औश्वरके नाम पर या किसीके भी नाम पर अुनसे चार आने लेनेका हमें हक नहीं है। असलमें तो ये बच्चे और अुनका बाप ही सच्चा भारत है। अुनसे और किस देशके लिअे हम चार आने चन्दा मांगें? हमें तो अुनसे पैसा लेनेके बजाय अुन्हें अधिक पैसा दिलाना है, अिसके लिअे अैसा प्रयत्न करना है जिससे अुन्हें ज्यादा काम मिले और अुनकी कमाओीमें वृद्धि हो। अब आप समझ सकेंगे कि चार आने जैसी तुच्छ रकमका प्रश्न भी देशकी गरीबीको देखते हुअे कितना भारी बन जाता है।

हमारी स्थिति अैसी होने पर भी देशकी सारी जनतामें मातृभूमिके लिअे कुछ त्याग करनेकी भावना जगानी ही चाहिये। यदि हमें किसी न किसी दिन स्वराज्य देखनेकी अिच्छा हो तो हमें यह खोज करनी चाहिये कि झोंपड़ियोंमें रहनेवाले ये दीन दरिद्र भारतीय भी अपने प्यारे देशके खातिर क्या दे सकते हैं? यह अैसी चीज होनी चाहिये जिस देनेमें अुनकी त्यागकी भावना तो पोषित हो परन्तु अुनके बच्चोंकी खुराकमें से अेक चम्मच दूध भी कम न हो। हां वे थोड़ा समय थोड़े समयका शरीर-श्रम जरूर दे सकते हैं। यद्यपि दरिद्रताके कारण अुनकी शक्ति क्षीण हो चुकी है, फिर भी वे घण्टे-आध घण्टेका काम अपने देशको बहुत ही खुशीसे अर्पण करेंगे।

देशकी आत्माको सच्चे अर्थमें पहचाननेवाले गांधीजीने यह खोज की है। परन्तु शहरियों पढ़े-लिखों और अूपरी स्तरके लोगोंमें यह कल्पना लोकप्रिय नहीं हुअी। अुसके अनेक कारण हैं। अब तो अुन्हें शरीर-श्रमसे अरुचि होती है। अिनमें भिखा वे अैसे संस्कारोंमें पले होते हैं कि शरीर-श्रम करना नीचा और मजदूरोंका काम है। बीमार प्रियजनोंकी सेवा, प्रिय मेहमानोंका अतिथि-सत्कार आदि काम तो आम तौर पर मनुष्यको खुद ही करना पसन्द होना चाहिये। परन्तु अूपरके स्तरके समाजको देखें तो यह काम भी लोग नौकरोंके द्वारा कराते पाये जाते हैं। अिन लोगोंमें से देशके लिअे कुछ न कुछ शरीर-श्रम करनेको तैयार होनेवाले बहुत आदमी निकलेंगे यह आशा रखना बहुत अधिक है। अिसमें आश्चर्य जैसी कोअी बात नहीं है कि अुनमें से अधिकांश अिस कल्पनाकी हंसी अुड़ाते हैं। परन्तु मेहनती ग्रामवासियोंको यह कल्पना बिलकुल स्वाभाविक मालूम होगी। यदि सबके अुनके सामने अिसे ठीक ढंगसे पेश करें, तो वे अिसे बहुत ही आसानीसे अपना लेंगे। छोटे बच्चों और स्त्रियों सहित वे सब अपनी मातृभूमिके लिअे आध घंटेका समय बड़े प्रेमसे अर्पण करेंगे।

परन्तु अुसके पास अिस कल्पनाको ले जानेवाले सेवक ही कहां है? थोड़े बहुत यहां-वहां देखनेमें आते है। परन्तु अुन्हें खुद ही अिसमें दिलचस्पी नहीं होती। वे भी तो शहरी और अूपरके स्तरसे ही आये हुये होते हैं न? बचपनसे बनी हुयी प्रकृतिसे छूटना बहुत मुश्किल है। हम अिस आश्रममें अैसी शिक्षा लेना चाहते हैं जिससे हम सच्चे देशसेवक बनें हमारी दरिद्र जनताको जैसे सेवक चाहिये वस ही हम बनें।

मेहनती लोगोंको मेहनती सेवक ही अच्छे लगते हैं। हम सेवक अुनके जैसे मेहनती हों तो ही अुन्हें हम पर विश्वास होगा। हम खुद देशके लिअे यज्ञ करते हों तो वे भी खुशीसे वैसा यज्ञ करने लगेंगे। अुन्हें पेटके खातिर कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। फिर भी यदि हम अुन्हें समझा दें देशप्रेमकी भावना अुनमें जाग्रत कर दें तो वे जरा भी आनाकानी किये बिना देशके खातिर आध घंटेका शरीर-श्रम देनेको तैयार हो जायेंगे। लखपति अपनी भरी तिजोरीमें से किसीको पैसा भी देता है तो अकसर मुंह बिगाड़कर फेंकता है! हमारे दरिद्र लोगोंकी तिजोरीमें हाथ-पैरोंके सिवा और कुछ नहीं है। अुनसे भी पटके खातिर थकनेकी हद तक काम लिया जाता है। फिर भी वे देशके खातिर आध घंटेका काम देंगे तो अुस समय अुनका मुंह आनन्दसे हंसता होगा। अुन्हें अितनी देशसेवा करनेका मौका मिला अिसके लिअे वे परमेश्वरका आभार मानेंगे। अुनका आनन्दित मुख देखकर हम सेवकोंमें भी अुत्साह पैदा होगा और यदि हममें मेहनत करनेकी अरुचि अभी तक रह गयी होगी तो वह मिट जायगी। शरीर-श्रमके द्वारा अुनकी आत्माके साथ हमारी आत्माका संबंध बंधेगा।

अिस भावनाके साथ हम अपने आश्रममें रोज अेक घंटेका यज्ञकर्म नियम पूर्वक करते हैं। अभी तक हम भी अुसके पालनमें पूरी दिलचस्पी नहीं दिखा सकते। सब कार्यकर्ता समयका पालन नहीं कर सकते। काम पड़ने पर बाहर जाते हैं तो यज्ञका समय हम टाल देते हैं। जब आश्रमवासियोंकी ही अैसी स्थिति है तब ग्राम वासियोंको अिसमें दिलचस्पी कसे पैदा हो? परन्तु यह कल्पना अभी नयी है। जब वह पकेगी जब हम आश्रमवासी अिस नियमका पालन अेक व्रतके रूपमें करेंगे तब किसी न किसी दिन गांवके लोगोंमें भी अुसे लोकप्रिय कर सकेंगे। हमारी आशा तो यहां तक है कि आप सब यज्ञकर्म करनेके आग्रही बन जायेंगे तो भविष्यमें आपके परिवारोंमें आपके सगे-सम्बन्धियोंमें तथा मित्रोंके घरोंमें भी आप अिसे जारी करेंगे। आप भविष्यमें नये आश्रम चलायेंगे तो वहां भी आप अिस आग्रहको ले जायेंगे। अिस प्रकार सारे देशमें यज्ञकर्मके नियमको फैलानेकी हमारी अभिलाषा है।

सूत्रयज्ञ ही क्यों ?

आज मुझे कलकी बातचीतकी पूर्ति करना है। देशके लिये रोज कातनेका नियम रखनेका यज्ञका पवित्र नाम क्यों दिया गया है, जिसका मुख्य स्पष्टीकरण तो कल हो गया। अुसके सिवा अुस नियमके संबंधमें हमारे दिलमें और भी कभी पवित्र और भक्तिपूर्ण भावनायें भरी हैं। अिन सबको अेकसाथ मिला देनेसे हमें अपने सूत्रयज्ञमें विलक्षण आनन्द आता है, और अुसका आग्रह हमारे रोम-रोममें पैठ जाता है।

प्रथम तो यज्ञका व्रत स्वीकार कर लेने पर अुसका पालन अखण्ड-अटूट होना चाहिये। सुविधा हो तब अुसका पालन करें और जरासी असुविधा होते ही अुसे भूल जायें तो अैसे कामको यज्ञका पवित्र नाम शोभा नहीं देता।

दूसरे, देशके लिये होनेवाला यज्ञ देशभरमें नियत समय पर शुरू होना चाहिये और नियत समय पर पूरा होना चाहिये। अिसका प्रचार अभी तक देशमें बहुत नहीं हुआ है। परन्तु जिन थोड़ीसी संस्थाओंमें हुआ है वहां दोपहरका समय अिसके लिये रखा गया है। हमारे आश्रममें भी वही समय रखकर हम अन्य समान धर्मी धार्मिकोंके साथ अपना सम्बन्ध कायम करते हैं।

यज्ञके लिये तीसरा जरूरी तत्त्व यह है कि देशभरमें यज्ञके लिये करनेको कोमी निश्चित सर्वसाधारण शरीर-श्रम होना चाहिये। पूज्य गांधीजीने अैसे यज्ञके रूपमें सूत कातनेका राष्ट्रीय अुद्योग पसंद किया है।

यज्ञमें चौथा तत्त्व यह होना चाहिये कि अुसका फल हमारे अपने या अपनेके लिये न हो, परन्तु परोपकारके लिये अर्पण करनेको हो। अिसलिये हमारे अिस सूत्रयज्ञमें हम जो सूत कातते हैं वह हम देशको अर्पण करते हैं।

यज्ञका पांचवां तत्त्व यह है कि हमारे साधारण स्वार्थके कामोंकी अपेक्षा यज्ञ कर्म करनेमें प्रेमका अुभार बहुत अधिक होना चाहिये। अुसमें यज्ञकी चोरी तो हो ही कैसे सकती है? हम अपनी अधिकसे अधिक गति अधिकसे अधिक कुशलता और कला अपनी सारी आत्मा अुसमें अुंडेलें तभी वह यज्ञ कहला सकता है। भारत माता और स्वराज्यके नामसे जो काम हम करें, अुसमें यदि आत्मा नहीं अुंडेलेंगे तो और किस काममें अुंडेलेंगे?

आशा है कि हमारे यज्ञके पीछे रही ये सारी भावनायें आपको पसन्द आ जायेंगी और आप पूरे देशभक्तिके साथ अिस यज्ञमें शरीक होंगे।

सूत्रयज्ञके चुनावके बारेमें अेक और स्पष्टीकरण भी कर लें। यह सिद्धान्त तो आप स्वीकार कर लेंगे कि देशके लिअे सबको कुछ न कुछ शरीर-श्रम करना चाहिये। फिर भी यह शंका रह जायगी कि अुसके लिअे सूत्रयज्ञ ही क्यों चुना गया है। आप कहेंगे कातना शरीर-श्रम कैसे कहलायेगा? यह तो बैठे बैठे करनेका काम है। अिसमें श्रम कहां होता है? किसान जो भारी मेहनत करते हैं अुसके मुकाबलेमें तो यह काम खेलके समान है। देशके लिअे किया जानेवाला काम भारी महनतका चुनना चाहिये जिसके करनेसे मनुष्यको यह संतोष हो कि मैंने आज कुछ काम किया।"

सूत्रयज्ञके चुनावके पीछे कुछ दृष्टियां हैं। अुनमें मुख्य दृष्टि यह है कि यह काम राष्ट्रीय महत्त्वका होना चाहिये। हमारा चरखा ही वह महत्त्व रखता है। अिस विषयका विस्तार आ किसी दिन न करूंगा। आज अितना ही अिशारा कर देना काफी है कि चरखेका राष्ट्रीय महत्त्व कितना है यह बात अिससे साबित होती है कि अुसे हमारे राष्ट्रीय झंडेमें स्थान दिया गया है।

अिसके सिवा हम चाहते हैं कि यज्ञकर्ममें सभी लोग शरीक हो सकें। अिस लिअे वह हल्का काम हो तो अच्छा। कातनेका काम अैसा है कि बच्चे स्त्रियां बूढ़े बीमार, जिनकी अिच्छा हो वे सभी आसानीसे अिसमें शरीक हो सकते हैं। नाजुक शरीरवाले शहरियोंमें देशभक्तिकी भावना अुमड़े तो वे कातनेका यज्ञ आसानीसे कर सकते हैं। कुदाली चलानी पड़े तो शायद अुनका अुत्साह कमजोर तबीयतके कारण गायब हो जाय। गांवोंकी मेहनती जनताके लिअे भी यह काम हल्का है सो अच्छा ही है। वे भारी मेहनत करके थक गये हों तब और भारी कामकी अुनसे आशा रखना अुचित नहीं। चरखा तो अैसा है कि मेहनती लोगोंको अुस पर कातना काम न लगकर आराम जैसा ही लगता है।

चरखा कातना सीखना और कामोंसे बहुत आसान काम है। कोअी भी आदमी सीखना चाहे तो अुसे जल्दी ही सीख सकता है। बढ़अी लुहार वगैराके काम यज्ञके लिअे रखे गये हों तो अुनमें शरीक होनेकी कुशलता प्राप्त करनेमें ही लोग धीरज खो दें।

कातनेका यज्ञ चुननेमें अेक और दृष्टि भी है। कातनेके काम आनेवाला औजार सस्ता और सुलभ है और कातनेमें काम आनेवाला साधन — रूअी — भी देशमें लगभग सभी जगह आसानीसे अुपलब्ध है। खेतीका काम बहुत अुम्दा है परन्तु यज्ञके रूपमें अुसे रखनेमें कितनी कठिनाअी है? खेती-बाड़ीमें हल बैल वगैरा जुटाने पड़ते हैं और पहली बात तो यह है कि जमीन चाहिये। दूसरे अुद्योग लें तो भी कीमती औजार और काम करनेके लिअे लंबी-चौड़ी जगह चाहिये। यह सही है कि कुम्हार काम जैसे अुद्योगोंमें औजार बहुत थोड़े चाहिये। लेकिन अुसके लिअे जगह कितनी लंबी-चौड़ी चाहिये?

यह सच है कि चरखा भी गरीब देशवासियोंके लिये सस्ता नहीं माना जा सकता। परन्तु वह महंगा तो अिसलिये पड़ता है कि हम अुसे खादी-भंडारमें खरीदने जाते हैं। यह लोकप्रिय हो जायगा तब हम अपने घरकी लकड़ी देकर गांवके बढ़अीसे बनवाने लगेंगे। और अब तो धनुष तकलीकी खोज हो गअी है। यह बांस या लकड़ीके निकम्मे टुकड़ोंसे बनाअी जा सकती है। अुसे बनानेके लिअे किसी कारीगरके पास जानेकी भी जरूरत नहीं। हम अपने हाथों साधारण चाकूकी मददसे अुसे बना सकते हैं। अथवा धनुष तकली तक जानेकी भी क्या जरूरत है? सादी, सुन्दर, छोटीसी तकलीसे भी हमारा काम अच्छी तरह चल जाता है।

अिस प्रकार जितनी दृष्टियोंसे देखें अुतनी ही दृष्टियोंसे कातनेका काम यज्ञ कर्मके लिअे अनुकूल और अुचित है। 'मुझे अपना देनेके लिअे रोज यज्ञ करना है शरीर-श्रम करना है' यह भावना हृदयमें जाग्रत होनी चाहिये। वह पैदा हो जायगी तो सूत्रयज्ञमें किसी बातकी बाधा नहीं आयेगी। अथवा आयेगी भी तो वह अितनी कम होगी कि अुसका बहाना लेनेमें हमें शर्म मालूम होगी।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

दूसरा विभाग

भोजन विचार

प्रवचन ६

आश्रमी भोजन अच्छा लगा?

आज मेरा विचार चरखे और खादीके बारेमें कहनेका था। जिसे हमने अपना पवित्र महाकर्म बनाया है जिसे देशने अपने राष्ट्रध्वजमें स्थान दिया है जिसकी सेवा करके हम अपनी जनतामें स्वतंत्रताके प्राण पूरनेकी आशा रखते हैं अुसकी बात तो पहले ही दिन करनी चाहिये थी। परन्तु आज कहूं कल कहूं करते करते ५ दिन तो दूसरी ही बातोंमें चले गये। आजका छठा दिन भी अेक दूसरा ही विषय ले लेगा। और अभी कौन जाने दूसरे कौन कौनसे विषय बीचमें जबरन् आ घुसेंगे। जीवनमें अैसा कअी बार होता है। सच्चे महत्त्वकी बात पीछे रह जाती है और तुलनामें छोटी छोटी बातें ही बीचमें आ जाती हैं। पहाड़ दूर होनेके कारण छोटे दिखाओी देते हैं और पैरोंके सामनेका पत्थर बड़ा बनकर हमारे सामने सिर अूंचा करता है। परन्तु अैसे पत्थरोंका आदर करके और अुनसे सावधान रहकर चलें तो ही हम दूरके पहाड़ पर पहुंच सकते हैं न?

आज जिसकी बात किये बिना काम नहीं चल सकता वह है हमारे आश्रमका आहार। वह आपको कैसा लगा होगा? कअी बार अैसा होता है कि मनुष्यको ठीक भोजन न मिले तो अुसका सारा दिन खराब हो जाता है और फिर अुसका चित्त किसी भी काममें नहीं लगता। अगर आपको आते ही आश्रमके आहारसे अरुचि हो जाय तो सारे आश्रम पर भी अरुचि हो जानेका डर है। आप विनयी होंगे सो आंखें बन्द करके जो मिला सो खा लेंगे और अपनी अरुचि प्रगट नहीं करेंगे। परन्तु भीतरसे भी अरुचि पैदा हो गयी होगी तो वह गहराअीमें रहकर काम करेगी। और अुसके परिणाम-स्वरूप आपको आश्रमके आदमी आश्रमके काम और आश्रमके सिद्धांत सब धीरे-धीरे अरुचिकर प्रतीत होने लगेंगे और शायद आप रातके अंधेरेका आश्रय लेकर आश्रमसे पलायन्ति भी कर जायं!

अिसलिअे आश्रमके आहारके लिअे आपमें अरुचि पैदा न हो अितना ही नहीं परन्तु रुचि पैदा हो और वह शुरू शुरूमें ही पैदा हो अिसके लिअे मैं बहुत आतुर हूं। यह बात तो साफ है कि आप आश्रमके भोजनमें बहुत कुछ नया पायेंगे। अुसमें कुछ आपको अच्छा लगेगा कुछ नहीं लगेगा। कुछ आपको विचित्र मालूम होगा और समाजके प्रचलित विचारोंको देखते हुअे अुसकी कुछ चीजें शरीरके लिअे अच्छी नहीं हैं अैसा भी शायद आपको भ्रम हो जायगा।

सबसे पहले तो आपको बिना मिर्च और बिना बघारका खाना फीका लगेगा। हमारी रोटियां आपका मुरदरी लगेंगी चावल चिकने लोंदे जैसे लगेंगे दालमें छिलके देखकर कदाचित् आपको खाना बनानेवाले पर गुस्सा आयेगा। और थालीमें बगैर पकाअी हुअी कच्ची भाजी आयेगी तब आप अपने मनमें हंसने लगेंगे और कहेंगे कि हमें जिन आश्रमवालोंने क्या बकरे समझ लिया है?

ये तो मैंने वे नवीनताओं गिनाओं जो पहली नजरमें दिखाओ देती हैं। दूसरी आपको धीरे धीरे दीखने लगेंगी। मैं आपको आज यह समझाना चाहता हूं कि भोजनमें अिनमें से कुछ भी परिवर्तन खाना बनानेवालेके दोषसे या खरीद करनेवालेकी अकुशलतासे नहीं हुआ है। यह बात भी नहीं है कि हम कजूसी करके घटिया वस्तुअें काममें लेते हैं। भोजनमें जितने परिवर्तन आप देखते हैं वे सब हमारे भोजनके गुण बढ़ानेके लिये जान-बूझकर जारी किये गये हैं। अिन परिवर्तनोंसे हमारा भोजन अधिक पौष्टिक, अधिक रुचिकर, अधिक सुन्दर, अधिक भावनायुक्त बन गया है।

आम तौर पर सज्जन लोग आहारके बारेमें बहुत विचार नहीं करते। वे कहते हैं क्या खायें और क्या पियें अिसका विचार ही क्या करना? जो थालीमें आ जाय अुसे अीश्वरका नाम लेकर खा लेना चाहिये और अपने काम-धंधेमें लगे रहना चाहिये। और अेक तरहसे यह ठीक भी है। गांवके गरीब लोगोंको खाने पीनेका विचार करनेकी फुरसत ही कहां होती है?

रोटी और मिर्च अथवा थोड़ी-सी पतली कांजी जो मिला सो खाया और काममें लग गये। यही अुनका जीवन है। अैसा न करें तो अुनका समय खराब हो, काममें देर हो जाय और वे दिनभरकी रोजी गंवा बैठें। और परिणाम-स्वरूप पतली कांजीके भी लाले पड़ जायं। और विचार करें तो भी किसका विचार करें? खानेकी सामग्री ही जहां अेक हो अुसमें कभी दिनों और महीनों तक फेरबदल करनेकी स्थिति ही न हो और वह अेक सामग्री भी पेट भरकर न मिले वहां भोजनकी विविधताका विचार कैसे किया जाय? विचार करना हो तो अेक ही विचार अुन्हें सूझ सकता है और वह यह कि थोड़ा अधिक खानेको कैसे मिले।

केवल अूपरी स्तरके लोगोंकी रहन-सहन देखें तो यह स्थिति अुनसे बिलकुल अुलटी मालूम होगी। वहां तो खाने-पीनेके विचारोंके सामने काम-धंधेका विचार करनेकी मानो किसीको फुरसत ही नहीं मिलती। घरमें जितनी स्त्रियां होंगी अुन सबका मुख्य कार्यक्षेत्र अुनका रसोअीघर ही होता है। भोजनकी वानगियोंमें नित-नयी विविधताअें कैसे लायी जायं नित-नयी स्वादिष्ट चीजोंमें चाशनी कैसे लगायी जाय अिसीका चिन्तन और अिसीकी खटपट! पुरुष अिससे संबंध रखनेवाले काम-काजमें कभी भाग नहीं लेंगे परन्तु सलाह-मशविरे और डांट-फटकार बरसाकर हमेशा अपना पूरा सहयोग देते रहेंगे। अैसे घरोंमें हम क्या दृश्य देखते हैं? बहनें चूल्हेके पाससे सारे दिन हट ही नहीं सकतीं। और चूल्हेके आसपास अुन्होंने कितनी कलाका विकास कर लिया है? रोटी अुनकी कागज जैसी पतली होगी। भातको धोकर मसलकर, निथारकर अितना खिला हुआ और सुन्दर बना देंगी कि मोगरेकी कलियां ही देख लीजिये। तरह तरहकी दालें साफ करके अैसी बना रखी होंगी कि छिलकेका कचरा अुसमें ढूंढे भी न मिले। अुनके रसोअीमें खास खास चीजोंके लिये दस-बीस तरहके मसाले सदा तैयार मिलेंगे। किस वानगीमें कौनसा मसाला डालना चाहिये किस पकवानके साथ कौनसा साग-भाजी चाहिये यह सब भोजनशास्त्रकी मनुस्मृतिके अनुसार ही होगा! चटनियां पकौड़ियां वगैरा भी

स्वादके स्वरमें ताल मिलानेवाली ही होंगी। समय समय पर मिष्टान्न तो होगा ही। अुसके स्वाद और रंग-रूप किस मौके पर कैसे बनाये जाय ये सब बातें कितनी बारीकीसे अमलमें लाभी जाती हैं! अिसके साथ दिनमें चा चार-छह बार चायपानी और नाश्तेके कार्यक्रम तो चलते ही रहते हैं। यह तो साधारण रोजाना जिन्दगीका चित्र हुआ। परन्तु भोजन पर अिससे कहीं अधिक विचार किया जाता है, समय खर्च किया जाता है और परिश्रम अुठाया जाता है। वर्षमें अेक बार पापड़ बड़ी सेव आचार वगैराके नैमित्तिक सत्र खोले जाते हैं। जब ये सत्र शुरू होते हैं तब पांच-पांच सात-सात दिन तक घर घरमें जिनोंकी धूम और अिन्हींका वातावरण जमा रहता है।

पहलेके जमानेमें भोजनके सम्बन्धमें बहनोंको कुछ काम भी करने होते थे जैसे कूटना पीसना दलना छाछ बिलौना अित्यादि। अब अिन मेहनतके कामोंसे और साथ साथ शरीरकी तंदुरुस्तीसे भी बहनोंको मुक्ति मिल गअी है! आटा मिलसे पिसकर आ जाता है दाल-चावल भी मिलसे तैयार होकर आते हैं और घी-दूध बाजारसे मिल सकता है। बेशक बहनोंने बचा हुआ समय बरबाद नहीं होने दिया। अुन्होंने रसोअीकी कलाको अधिक सूक्ष्म अधिक विविधतापूर्ण बनानेमें अुसका अुपयोग कर लिया!

जहां अैसा पारिवारिक जीवन चलता हो वहां स्त्रियां काम-धंधेमें सहायता दे सकें अैसी अपेक्षा ही कैसे रखी जा सकती है? गरीब ग्रामवासियोंको अैसा करना पुसा ही नहीं सकता। वे तो घरके सारे सशक्त आदमी — पुरुष हों या स्त्रियां — धंधा करें तो भी पूरा नहीं कमा सकते। परन्तु जिस अूपरी वर्गका चित्र यहां दिया गया है अुसे स्त्रियोंकी मददका लालच नहीं है। अुनमें से कुछको तो थोड़ीसी मेहनतसे ढेरों कमाअी हो जाय अैसी युक्ति-प्रयुक्तियां आती हैं। कुछ कर्जा करके परवार चलानेकी हिम्मत बढ़ा लेते हैं। परन्तु अधिकांश लोग अेक और ही रास्ता अपनाते हैं। वे खुराकमें से घी-दूध जैसी जरूरी किन्तु महंगी वस्तुओंमें काटछांट करके और लड़के-लड़कीके बीच बहू-बेटीके बीच कमाअू-बेकमाअूके बीच भेदभाव करके खर्च कम करते हैं। और स्त्रियां खुराकमें स्वादको बढ़ाकर अिन पोषक तत्त्वोंकी कमीको भुला देती हैं।

आश्रममें हम अिन दोनोंमें से अेक भी पद्धति स्वीकार नहीं कर सकते। हम मानते हैं कि गरीब ग्रामवासी आहारके संबंधमें सही विचार करना सीख लें तो अैसी गरीबीमें भी वे अधिक पोषण प्राप्त करके अधिक नीरोग और सशक्त बन सकते हैं। अूपरी स्तरके लोगोंमें भोजनके बारेमें बेशक बहुत विचार हुआ है। परन्तु जैसा हम अूपर देख चुके हैं वह अुलटी दिशामें ही हुआ है। अुन्हें अब दूसरी ही दिशामें विचार करनेकी जरूरत है।

हम सेवक हैं; दरिद्र ग्रामवासियोंके सेवक बननेकी आशा रखते हैं। हम अपना भोजन-खर्च कॉलेजोंके छात्रालयोंकी तरह चाहे जितना नहीं बढ़ा सकते। हमारे माता-

पिता हमें जैसा लाड़ लड़ा सकें अैसी अुनकी स्थिति नहीं है और स्थिति हो तो भी गरीबोंके सेवकोंको अपने स्वामियोंसे अधिक खर्चीला जीवन बिताना शोभा नहीं देता। साथ ही हमें निःसत्त्व आहार खाकर शरीरकी शक्ति भी नहीं खोनी है। अिसलिअे हमें अपने लिअे अैसा आहार खोज निकालना चाहिये, जो बहुत खर्चीला न हो, परन्तु अुससे शरीरको आवश्यक पोषण मिल जाय।

अिस संबंधमें पहला विचार : शुरूमें अैसी बहुतसी वस्तुओं दिखाअी देंगी जो बाजारमें लेने जाने पर खर्चीली साबित होती हैं, परन्तु अुनके लिअे हम आश्रममें शरीर-श्रम करें तो अुन्हें आसानीसे प्राप्त कर सकते हैं। अतः हम मेहनत करके अुन चीजोंको जरूर प्राप्त कर लेंगे, और प्राप्त कर लेते हैं।

दूसरा विचार : आप देखते हैं कि यहां आश्रममें हम स्वयं अपना भोजन बनाते हैं। हम बहनों और रसोअियों पर अपना भार नहीं डालना चाहते। दूसरोंसे काम लेनेवाला आदमी काम करनेवालेकी मेहनतका विचार कम करता है। परन्तु अपने हाथों काम करनेवालेको समय और मेहनतकी किफायत सीखनी ही पड़ती है। नलके नीचे नहानेवाला अिस बातका विचार करना भूल जाता है कि पानी कितना काममें आ रहा है। खींचकर नहानेवालेको खींचनेकी मेहनतका हिसाब लगाना अनिवार्य हो जाता है। हमें अपने हाथसे रसोअी बनानी पड़ती है अिसलिअे लाजमी तौर पर सोचना ही पड़ता है कि रसोअीमें कमसे कम समय लगाने पर भी खाना रुचिकर, सुन्दर, स्वच्छ और ताजा कैसे मिल सकता है।

अूपरी स्तरके लोगोंके भोजनालयोंका अनुकरण हम करने लगें तो अुसमें डूब जायेंगे। दूसरी तरफ, कुछ हमारी मामा पकानेवाले लोग अिकट्ठी दो चार दिनकी रोटियां वगैरा बनाकर बासी खाना खाते हैं और तरकारी वगैरा बनानेमें आलस करते हैं। तथा अरुचिसे काम करते रहनेके कारण अैसे लोग भोजनको हमेशा जला-भुनाकर तथा अरुचिकर बनाकर ही खाते हैं। हम अैसे आलसी भी नहीं बनना चाहते। हमें जितना समय जितनी मेहनत और जितनी कला अिसमें लगानेकी जरूरत हो अुतनी तो प्रसन्नतासे लगानी ही है। हमें समय बचाना है परन्तु वह आलस्य और अरुचिके कारण नहीं। हम अपने दिनका बड़ा भाग हमारा सच्चा अुद्योग शिक्षा आदिका जो मुख्य काम है, अुसे देना चाहते हैं। अिसलिअे हमें शारीरिक तरोताजा सशक्त और सुपुष्ट रहना है ताकि हम अपना मुख्य काम अच्छी तरह कर सकें। अिसलिअे भोजन पर समय, श्रम और विचार लगानेमें हमें जरा भी कंजूसी नहीं करनी है। परन्तु हम सन्तुलन नहीं छोड़ेंगे। आहारको हम अपनी जिन्दगीमें राजाके स्थान पर नहीं बैठने देंगे।

आज तो आपको अितनी ही चेतावनी देकर बन्द करता हूं कि आश्रमका भोजन अच्छा नहीं अिस तरह बिना विचारे कहकर आप अुसके प्रति मनमें अरुचि न बना लें। परन्तु विचार करके हमारे अमुक-भोजनमें जो खूबियां हैं अुन्हें देखना सीखें।

प्रवचन ७

आश्रमी आहारकी दृष्टियां

१ स्वदेशीकी दृष्टि

हमारे आहारमें सबसे पहली तो हम स्वदेशीकी दृष्टि रखनेका आग्रह करते हैं। असलिओ हमारी खानेकी चीजें — अनाज शाकभाजी वगैरा सब हमारे आश्रममें पैदा कर लेना हम पसन्द करते हैं। हम आश्रमवासियोंकी संख्या बड़ी है और हमारे पास जमीन तुलनामें कम है। अिसलिओ हम आवश्यक सारा धान्य आश्रममें पैदा नहीं कर सकते। बाकी आवश्यक अनाज हम अपने गांवमें या नजदीकके गांवोंमें पैदा हुआ ही प्राप्त करते हैं।

अिस तरफके गांवोंमें ज्यादातर जुआर पैदा होती है और मोटे किस्मके चावल पैदा होते हैं।

खुराकमें गेहूं जुआरसे तत्त्वमें ज्यादा पोषक मूंगा है। फिर भी घरकी जुआरको छोड़ कर बाहरी प्रान्तोंके गहूं खाना हम स्वदेशीके सिद्धान्तके विरुद्ध मानते हैं। जुआर-बाजरेमें सत्त्व कुछ कम हों तो भी वह जगह जगहका प्रचलित धान्य है और काफी मात्रामें पोषक तत्त्व रखता है। यह सच है कि गेहूंमें तुरन्त मिठास छूटती है और जुआरमें अच्छी तरह चबाने पर मिठास छूटती है। लेकिन अिसकी कोअी चिन्ता नहीं। हमें चबानेका आलस नहीं है। हम खूब चबायेंगे और जुआरको गहूं बनाकर खायेंगे परन्तु अपने गांवका अनाज ही खायेंगे।

यहांके मोटे और लाल चावल देखकर नाजुक लोग मुंह बिगाड़ते हैं और अुन्हें कीड़ोंकी अुपमा देते हैं। हमने तो कड़ा सबसे बड़ा माना है। सच पूछा जाय तो हमें ये मोटे चावल खूब पसन्द आ गये हैं। कितनी मिठास है अुनमें? अुनका लाल रंग भी हमारी आंखोंको पसन्द आ गया है। वह हमें गेहूंकी याद दिलाता है। ये चावल खाकर दूसरे गांव जानेके लिअे निकले हों तो वे गेहूंकी तरह ही हमें ठेठ तक पहुंचाते हैं। अितना सफेद अुतना खूबसूरत होता है क्या यह अेक भ्रम ही नहीं है? प्रत्येक वस्तु अपने कुदरती रंगमें सुन्दर ही होती है। हमारे चावलोंका रूप हमें अितना पसन्द आ गया है कि अुन्हें पत्तलोंमें देखते ही हमारे मुंहमें पानी आने लगता है। आप प्रचलित भ्रमसे चिपटे न रहें तो आपको भी अैसा अनुभव हुओ बिना नहीं रहेगा।

अितनी स्वदेशी दृष्टि रखनेसे हम आसानीसे भोजनमें मर्यादा रख सकते हैं और आसपासके लोगोंके साथ कुछ न कुछ समानता कायम कर सकते हैं। जिसे सेवक बनना है अुसके लिअे यह जरूरी है।

२ पोषक तत्त्वोंकी दृष्टि

जनताके साथ समानता रखनेके लिअे हम गेहूँके बजाय ज्यादातर जुआर बाजरेकी रोटी खायें यह ठीक है। परन्तु साथ ही खुराकमें पोषक तत्त्व कम न हो जायं, जिसके लिअे भी हमें सावधानीसे प्रयत्न करना ही चाहिये। सौभाग्यसे बहुत खर्चमें पड़े बिना हम अपना आहार अधिक पौष्टिक बना सकते हैं यदि हम समाजमें फले हुअे अन्धविश्वासोंमें न फंस जायं और थोड़ासा शरीर-श्रम करनेको तैयार हो जायं।

लोग मुलायम और सफेद रोटियां पसन्द करते हैं और जिसके लिअे आटा खूब बारीक पिसवाकर अुसमें से भूसा निकाल देते हैं। आहारशास्त्री कहते हैं यह भूसा कचरा नहीं है परन्तु अुसमें कीमती पोषक और पाचक तत्त्व विद्यमान हैं। लोगोंने जिस सुन्दर चोकरका नाम भूसा रख दिया। और वे हमारी खुरदरी सांवली रोटियां देखकर हंसते हैं जिससे क्या हम जिस कीमती चीजको फेंक दें? कभी नहीं। चावलोंमें से भी लोग अुन्हें सुन्दर और चिकने हुअे बनानेके लिअे बहुतसा पोषक तत्त्व फेंक देते हैं। मिलमें धानको अैसा दबाकर पीसा जाता है कि अूपरके छिलकेके साथ भीतरका मिठास और विटामीनवाला कीमती अस्तर बिलकुल छील लिया जाता है। जिस भूसीकी अेक चुटकी मुंहमें रखें तो भी हमें विश्वास हो जायगा कि अुसमें कितनी मिठास है। अुसमें थोड़े ही दिनमें कीड़े पड़ जाते हैं यह भी अुसके भीतरकी मिठासका — पोषक तत्त्वका — सबूत है। हम जिस तत्त्वको क्यों खोयें? भात फूल जैसा अुजला न दिखाअी देगा, परन्तु जरा ललाअीवाला दिखाअी देगा, अुसका दाना-दाना खिला न होगा बल्कि जरा लोंदे जैसा होगा। परन्तु ज्यों ज्यों हम अुसके गुणोंके पुजारी बनेंगे, त्यों त्यों अुसका यही रूप रंग हमारी आंखोंको अच्छा लगने लगेगा। हमें तो अच्छा लगन भी लगा है। भातको खिला हुआ और सुन्दर बनानेके लिअे लोग चावलके पक जानेके बाद मांड़को बेकार समझकर फेंक देते हैं। हम अैसा क्यों करें? और नये चावलोंमें चिकनाअी होती है, जिसलिअे लोग तीन-चार वर्ष पुराने करके अर्थात् अुनका पोषक तत्त्व नष्ट हो जानेके बाद अुन्हें काममें लेते हैं। यह तो कोअी मफर रखवा दौलत भाग्मी छफर बालोंवाला बुढ़ापा पसन्द करे, अैसी ही बात होगी।

चावल, आटा वगैरामें से भूसी निकाल देनेमें अेक सुविधा जरूर हो जाती है। मिठासवाली भूसी न होनेसे व्यापारियोंके माल्में कीड़े नहीं पड़ते। घरमें भी जिससे कीड़े साफ करनेकी मेहनतसे छुटकारा मिल जाता है। परन्तु हम केवल सुविधाकी दृष्टि रखेंगे या पोषणकी? यदि पोषणके रूपमें अुसका कोअी मूल्य न रह जाय तो सुविधा हमारे किस कामकी? आटे और चावलके बड़े भंडार रखनेकी जरूरत ही क्या है? हम तो अनाज और धानका ही संग्रह करते हैं और आवश्यक मात्रामें ही अुसका आटा और चावल बना लेते हैं। हमारे देशमें पीसने और कूटनेकी मिलें चालू होनेसे पहले यही रिवाज था।

यह तो मुख्य मनाजोंकी बात है। आहारशास्त्री जिस बात पर बहुत जोर देने लगे हैं कि खुराकमें फल-फलादि ताजा शाक और हरी तरकारियां बहुत ही आवश्यक हैं। ये बाजारसे खरीद कर लाने हों तो खर्च बहुत बढ़ जाय और किसी भी सेवक अथवा सेवक-संस्थाकी शक्ति-मर्यादाके बाहर चला जाय। परन्तु जमीन और पानीकी जरा भी सुविधा हो तो हम मानते हैं कि कितनी ही मेहनत करनी पड़े तो भी ये वस्तुयें जरूरतके लायक पैदा कर ही लेनी चाहिये।

शुरूमें हम आश्रममें साग भाजी वगैराकी बाड़ी नहीं लगा सके थे। उस वक्त हमारा अेकमात्र आधार प्याज था। प्याजको हिन्दुस्तानमें लोग तामसी खुराक मानकर उसके प्रति अरुचि रखते हैं। जिस मान्यतासे कुछ समय हम भी घिरे रहे थे और अन्य लोगोंकी तरह सिर्फ दालोंको साग मानकर काम चलाते थे। लोग यह मानते हैं कि साग रोटीको पचानेमें मदद करनेवाली अेक वस्तु है। असलमें यह कुछ खास आवश्यक पोषक तत्त्व रखनेवाली खुराकका अेक महत्त्वपूर्ण अंग है जिसके बिना खुराक अपूर्ण रहती है और स्वास्थ्यमें दोष पैदा होता है। जबसे यह बात हमारी समझमें आओी तबसे हमने प्याजको तुरन्त ही स्वीकार कर लिया। उसे गरीबोंकी कस्तूरी कहा जाता है यह गलत नहीं है।

उसके बाद सुविधा मिलने पर अब तो हम आश्रममें बाड़ी करने लगे हैं। आज आप देखते हैं कि हम अैसी स्थितिमें आते जा रहे हैं कि साग और पत्ता भाजियां अच्छी मात्रामें ले सकें। यह सच है कि खुराकमें जिस नओी वृद्धिसे हमारा भोजन साधारण देहातियोंके भोजनसे बहुत समृद्ध हो जाता है। गांवके लोगोंसे अच्छा खानेमें आम तौर पर हमें शर्म आती है। लेकिन यह वृद्धि हमने अपनी मेहनतसे की है, जिसलिअे हमें अैसी शर्म माननका बहुत कारण नहीं है। हम यह भी आशा रखते हैं कि हमें देखकर और यह समझकर कि सच्चा भोजन कैसा होना चाहिये ग्राम वासी भी हमारे रास्ते पर आते जायेंगे।

३ दूधमें गोसेवाकी दृष्टि

लोगोंमें यह भ्रम होता है कि साग भाजी और फल खुराकमें लेना बहुत जरूरी नहीं है और उन्हें खानेसे बीमार हो जाते हैं। परन्तु भगवानकी दया है कि दूध छाछ और घीके बारेमें अैसा कोओी भ्रम लोगोंमें नहीं है। सब कोओी यह मानते हैं कि वे ताकत और आयुवर्धक वस्तुयें हैं। नये युगके आहारशास्त्री भी जिन खाद्यों पर बहुत ज्यादा जोर देते हैं। खास तौर पर निरामिषाहारियोंका तो जिन चीजोंके बिना काम ही नहीं चल सकता अैसी उनकी राय है।

फिर भी हमारे समाजमें तो छोटे बच्चोंको भी दूध-घीके लाले पड़े हुअे हैं। हमारी गरीबीके कारण ये आवश्यक वस्तुअें न रहकर मौजशौककी चीजें हो गओी हैं। लोगोंको दूध घी वगैरा न मिलें और हम सेवक लायें जिससे हमारे हृदयमें अेक प्रकारका संकोच तो रहता ही है। परन्तु स्वास्थ्य और शक्तिके साथ उनका

सम्बन्ध होनेके कारण जिस सकोचको दबाकर भी अुन्हें प्राप्त करना हमारा कर्तव्य हो जाता है।

परन्तु दरिद्रताका जो समुद्र सारे देशमें पर फैल गया है अुससे हम कैसे मुक्त हो सकते हैं? हम कितना ही चाहें सकोचको कितना ही दबायें तो भी दूध, घी आदि काफी मात्रामें प्राप्त करना असंभव हो गया है। प्रत्येक मनुष्यको कमसे कम १ से ५ सेर (कच्चा) तक दूध अथवा अुससे निकलनेवाले छाछ मक्खन वगैरा मिलें तब काफी मात्रा समझी जायगी। जिस मात्रासे अभी हमारा आश्रम कहीं दूर है और यह कहना कठिन है कि वहां तक कब पहुंचा जा सकेगा। आज तो हम मुश्किलसे आधा पौन सेर (कच्चा) तक दूध पाते हैं। अुसीमें से दही छाछ और अुसीमें से आवश्यक हो तो मक्खन बना लेते हैं। जितना भी अब संभव हुआ है जब हमने अपने आश्रममें खास तौर पर गोशाला रखी है और गायोंको दुहने चराने आदिका सब काम हम खुद करते हैं। परन्तु ज्यों-ज्यों हमें अिन कामोंका अधिक अनुभव होता जायगा ज्यों-ज्यों हमारी गायोंको यहांका हवा-पानी माफिक आता जायगा ज्यों-ज्यों अुनके लिअे हम हरे चारेकी पैदावार बढ़ाते जायेंगे त्यों-त्यों हम दूध-घी वगैराकी आदर्श मात्राकी तरफ प्रगति करते जायेंगे।

परन्तु हमारे समाजमें लोग गायको छोड़कर भैंस पालने लगे हैं। बहुतसे मित्र हमें भी आश्रममें भैंसें पालनेकी सलाह देते हैं। गायें काफी दूध नहीं देतीं अुसमें से घीकी मात्रा बहुत थोड़ी निकलती अैसी चेतावनी वे हमें देते हैं। परन्तु हमने तो निश्चय कर लिया है कि खायेंगे तो गायका ही दूध-घी खायेंगे।

गायके प्रति हमारी प्रजाने अितनी लापरवाही दिखाओ है कि अुसका वंश पतित हो गया है अुसकी आयु और दूध भी घट गया है। परन्तु जिस गायको हम ऋषि मुनियोंके जमानेसे पालते आये हैं माता कहकर जिसका दूध हम पीते आये हैं, जिसके बछड़ोंके बिना आज भी हमारी खेती संभव नहीं है अुस गायको हमें फिर पहले जैसी कुम्भस्तनी बनाना होगा। हम जानते हैं कि हम अकेले यह महान राष्ट्रीय कार्य नहीं कर सकते। परन्तु जो राष्ट्रीय प्रयत्न शुरू हो गया है अुसमें तो हम अपना अल्प हिस्सा जरूर दे सकते हैं। अिसीलिअे हम गोशाला चलाते हैं, गायोंकी सेवा करते हैं अुनके पालनकी कला सीखते हैं और अुसका विकास करते हैं। आजकी गायोंसे जितना दूध हम चाहते हैं अुतना न दे तो अिससे निराश होकर हम भैंसकी शरण कैसे ले सकते हैं? गायके वंशको हमींने बिगाड़ा है। अिसलिअे अुसमें सुधार करके दूध-घीकी कमी भुगतनी पड़े तो अुसे भुगत लेना हमारा धर्म हो जाता है।

जिस प्रकार आहारमें हमें धर्मबुद्धि भी रखनी ही चाहिये। यह नहीं कि शरीरके पोषणका विचार करना चाहिये। यही समझानेके लिअे अिन दो दिनोंसे मैं बोल रहा हूं। परन्तु अकेले शरीरका ही विचार करना और धर्मका विचार छोड़कर भी शरीरका ही पोषण करना हम ठीक नहीं समझते। मैं आशा रखता हूं कि

आप सब आश्रमकी यह विचारसरणी अपना लेंगे और आश्रमके गायके दूधके आग्रहको अपना आग्रह बना लेंगे।

अिसमें हम कोअी बहुत बड़ी बात नहीं कर डालते। अैसे कितने ही आग्रह हम स्वाभाविक रूपमें ही रखते हैं। मांसाहारमें कोअी कितना ही फायदा साबित करे, तो भी हम अुसे ग्रहण करनेको तैयार नहीं होते। अुधार-बाजारकी कांजी खाकर जीना पड़े तो भी चोरीका नहीं खायेंगे यह आग्रह भी हम रखते ही हैं न? अिसी तरहका आग्रह हमारे लिअे गोरसका है। यह आग्रह ही हमें सदा याद दिलाया करेगा कि अभी तक हम अपने ५ सेर (कच्चा) दूधसे दूर हैं अभी हमें गोसेवाका प्रयत्न बढ़ानेकी जरूरत है।

प्रवचन ८

सच्चा स्वाद

आश्रमोंमें अस्वाद-व्रत पर जोर दिया जाता है और आप सब स्वीकार करेंगे कि वह दिया ही जाना चाहिये। हम सेवकोंके रूपमें तालीम पाना चाहते हैं। जीभके हुक्मके मुताबिक तरह तरहके स्वाद लेना और अुनके खातिर दिनभर रसोअीघरके बाहर ही न निकलना हमें कैसे पुसा सकता है और कैसे शोभा दे सकता है? जीभके वश होनेसे हमारे अमूल्य समयका नाश होता है और खानेका खर्च भी बढ़ जाता है। अितना ही नहीं अिससे अमूल्य स्वास्थ्यका भी नाश होता है। खाना बनानेमें स्वास्थ्यकी दृष्टि चली जाती है और जीभकी दृष्टि मुख्यतः हम पर सवार हो जाती है। हम अपने पेटमें जीभके स्वादके खातिर जितना मिष्टान्न जाने देते हैं वो पच नहीं सकता और जीभके खातिर हम तलने बघारने वगैराके अनेक प्रकार ढूंढ निकालते हैं, जिससे अन्न आसानीसे पचने योग्य नहीं रह जाता।

असलमें अीश्वरने जीभको मुंहमें चौकीदारके तौर पर रखा है। पेटमें कैसा आहार जाने दिया जाय और कैसा न जाने दिया जाय अिसका ध्यान रखना जीभका मुख्य कर्तव्य है। अुसका वह अच्छी तरह पालन कर सके अिसीलिअे अीश्वरने अुसे स्वाद-शक्ति प्रदान की है। परन्तु हम स्वादोंकी रिश्वत देकर जीभरूपी चौकी-दारको फोड़ लेते हैं और चाहे जैसी चीज चाहे जितनी मात्रामें शरीरमें डालते रहते हैं। अथवा यों कहिये कि स्वादकी लालची बनी हुअी हमारी जीभ चौकीदार न रह कर मालिक बन जाती है, स्वादके लिअे चाहे जैसा और चाहे जितना मांगती है और हमारे शरीरको रोगका घर बना डालती है।

जीभके वश होनेमें जिन सब नाशोंसे बड़ा नाश तो हमारे मनका होता है। अर्थात् हमारा मन बिलकुल कमजोर हो जाता है। व्यसनीकी तरह हमारा मन चौबीसों

घंटे स्वाद लेनेमें ही घूमता रहता है। सेवा जीवनके लिअे आवश्यक तपस्या और ब्रह्मचर्य हमारे लिअे असंभव हो जाता है। दुर्बल मन अुल्टे रास्ते चलकर अैश जीवनके लिअे हमारी श्रद्धाको भी जड़से मिटा देता है, और अैश-आराम और शरीर सुखको ही हम जीवनका सार मानने लगते हैं।

आश्रमसे दूसरा बहुत चाहे हमें न मिल सके, परन्तु अेक यह अस्वादकी आदत अगर हम सिद्ध कर सकें तो भी कहा जायगा कि हमने बड़ी चीजकी कमाअी कर ली। आशा है आप अब अिसे समझ सकेंगे। आश्रम-जीवनके अस्वाद-व्रतका समाजके लोग मजाक अुड़ाते हैं। अुसे सुनकर आप भ्रममें नहीं पड़ेंगे, अैसी भी मैं आशा करता हूं।

परन्तु अब मैं आपको यह समझाना चाहता हूं कि हमारे अस्वादमें वास्तवमें मजाक अुड़ाने जैसी कोअी बात ही नहीं है। अस्वादकी हंसी अुड़ाते समय लोग अुसका अर्थ कुस्वाद करते मालूम होते हैं। हम चीनी मिर्च-मसाले नहीं डालते, चीजोंको तल्ते-जलाते नहीं अिसलिअे अन्न बेस्वाद हो जाता है यह स्वीकार करनेको हम तैयार नहीं हैं। हम मिर्च, हींग जैसे अुग्र स्वाद अपनी सामग्रियोंमें नहीं डालते अिससे अुनके आदी लोग भले ही हमारे अन्नको फीका कहें परन्तु हम अुसे स्वाद रहित अथवा बेस्वाद माननेको तैयार नहीं हैं।

अतिस्वाद कोअी सच्चा स्वाद नहीं है। खानेके हरअेक पदार्थमें कुदरतने अुसका अपना स्वाद रख ही दिया है। मीठापन, खारापन, तीखापन, खट्टापन, तीतापन और कड़वापन — ये ६ रस तो मूल मूल पदार्थोंमें होते ही हैं। परन्तु कुदरतने हमारी तरह अंजलि भर भर कर अुनमें स्वाद नहीं रखे हैं। अुसकी कृतिमें विकासमय है; जितना ही नहीं परन्तु अूंचे प्रकारकी सूक्ष्म रसदृष्टि है, यह किसी भी रसज्ञ मनुष्यको स्वीकार करना पड़ेगा। प्रकृति द्वारा रंग और सुगंधसे मंडित फूलों पर कोअी झूठा कलाकार कृत्रिम रंग चढ़ाये और अित्र छिड़के तो सच्चे कलाकार अुसकी कलाको स्थूल मानेंगे। अुसी तरह कुदरतके रखे हुअे स्वादोंका बनावटी तौर पर अतिस्वाद वाले बनानेमें स्वादकी सच्ची रसिकता नहीं होती। जो जीभ प्रकृतिके बनाये हुअ सूक्ष्म और बढ़िया रस-मिश्रणोंकी लज्जत समझना जानती है अुसे कृत्रिम स्थूल मिश्रण बेस्वाद और नीरस लगे बिना नहीं रहते।

जीभकी शक्तिको अत्यन्त सूक्ष्म होने दें, अतिस्वादसे मारी न डालें तो ही वह अपना मूल कार्य कुशलतासे कर सकती है। अर्थात् स्वाद परख वह हमें कह सकती है कि अमुक वस्तु शरीरमें भरने लायक है और अमुक नहीं है। वस्तु खाने लायक स्वादिष्ट हो तो भी हमारा शरीर अुसे चाहता है या नहीं अुसका ग्रहण करनेकी स्थितिमें है या नहीं अर्थात् भूख लगी है या नहीं यह भी कहनेका काम जीभका ही है। जीभकी अिन शक्तियोंको लोग अतिस्वादसे नष्ट कर डालते हैं। हम अिन शक्तियोंका विकास करके सच्चा स्वाद लेना चाहते हैं। अिसी तरह सच्चा अन्न पहचान कर अुसे ग्रहण करना चाहते हैं।

हम अपने भजनको जीभके लिअे न केवल रुचिकर ही बनाना चाहते हैं बल्कि अुसका रूप-रंग भी हमारी आंखोंको प्रिय लगे अैसा चाहते हैं। और गंध भी नाकको प्रिय हो अैसी चाहते हैं। परन्तु ये सब हम अैसे ही चाहते हैं, जो हमारे तालीम पाये हुअे आंख-नाकको प्रिय लगें।

अेक तरफ गरम गरम रोटियां और ताजा मक्खन हो और दूसरी तरफ तली हुअी पूरियां हों और हमारी जीभ अगर सधी हुअी हो तो वह हमें पहली तरफ ही ले जायगी, नाक भी अुसी तरफ पक्षपात दिखायेगी। अेक तरफ फलोंकी टोकरी हो दूसरी तरफ मिठाअियोंकी रकाबियां हों और हमारी जीभ सधी हुअी हो तो हम टोकरीकी तरफ ही मुड़ेंगे। आंख और नाक तो फलोंके मोहक रंग और सुगन्धसे हटना पसन्द ही नहीं करेंगे। अेक तरफ दोनमें ताजी ताजी मूली प्याज और लाल लाल टमाटर हों दूसरी तरफ सेव गाठिया वगैरा हों और हमारी जीभ सधी हुअी हो तो वह पहला दोना ही मांगेगी। आंखें और नाक तो बहुत सधे हुअे न हुअे तो भी अुसी तरफ दौड़ेंगे। यह नअी दृष्टि है और विकसित करने लायक है।

पड़ी हुअी आदतों पर विजय पाना मुश्किल तो है ही। प्रचलित लोकरूढ़ियोंसे अलग मार्ग पर चलनेमें अेक प्रकारकी लोकलाज मनुष्यको बाधक होती है। अिसलिअे सुधार अच्छा लगता हो तो भी अुस पर अमल करनेकी अुसकी हिम्मत नहीं होती। अैसी साहसहीनताके विरुद्ध हमें लड़ना होगा। आश्रमके अनुकूल वातावरणमें हम आसानीसे अैसा कर सकते हैं।

आहारके मामलेमें पुरानी आदतें कितनी प्रबल होती हैं और नये विचार बनानेमें कितनी दिक्कत होती है, अिसका अनुभव आपको शुरूके दिनोंमें यहां अच्छी तरह होगा। आपके मनमें अिन दोनोंके बीच व्यवस्थित युद्ध ही चलेगा। हम अिस अनुभवमें से अच्छी तरह गुजरे हैं। खटमीठे और लाल टमाटर आज हम सबको खूब आनन्द्दायक लगते हैं और जिस दिन वे थालीमें नहीं होते अुस दिन भोजनमें कुछ कमी मालूम होती है। परन्तु यहां अपने पुराने मित्रोंसे आप पूछेंगे तो वे बतायेंगे कि शुरूके दिनोंमें अुन्हें देखकर वे कैसे नाक-भौं सिकोड़ते थे। अुनका स्वाद अुन्हें भाता नहीं था और अितना सुन्दर रंग भी न जाने क्यों अुनकी आंखोंको अच्छा नहीं लगता था। आपकी तरह वे भी घर पर तेलमें बघारी हुअी साग भाजी खा खाकर आये थे। यहां आश्रममें सभी तरकारियां अुबाली जाती हैं और तेल अूपरसे लिया जाता है। घर पर छौंकी हुअी और हल्दीके रंगसे पीली की हुअी दाल खाकर वे आये थे। यहां आश्रममें दालको अच्छी तरह अुबालते हैं वह छिलकेवाली ही होती है अुसमें तेल अूपरसे लेते हैं और पीला रंग डालनेकी जरूरत नहीं मानते। अेक दिन हमें यह सब बेस्वाद फीका और खानेमें कठिन लगता था। अब प्रत्येक वस्तुके सूक्ष्म रस हमारी जीभको पसन्द आ गये हैं। अुन्हें तेज मसालोंसे दबा देना अब हम अत्याचार करने जैसा मानते हैं। हल्दीके रंगसे कुदरती रंग अब हमारी आंखको सचमुच अधिक मोहक लगने लगे हैं। यहां तक कि कितनी ही साग भाजी तो अब हमें बिना पकाअी हो

चटोरे स्वाद लेनेमें ही घूमता रहता है। सेवा-जीवनके लिये आवश्यक तपस्या और ब्रह्मचर्य हमारे लिये असंभव हो जाता है। दुर्बल मन अुल्टे रास्ते चलकर असे जीवनके लिये हमारी श्रद्धाको भी जड़से मिटा देता है, और अैश-आराम और शरीर सुखको ही हम जीवनका सार मानने लगते हैं।

आश्रमसे दूसरा बहुत चाहे हमें न मिल सके परन्तु अेक यह अस्वादकी आदत अगर हम सिद्ध कर सकें तो भी कहा जायगा कि हमने बड़ी चीजकी कमाओी कर ली। आशा है आप अब अिसे समझ सकेंगे। आश्रम-जीवनके अस्वाद-व्रतका समाजके लोग मजाक अुड़ाते हैं। अुसे सुनकर आप भ्रममें नहीं पड़ेंगे अैसी भी मैं आशा करता हूं।

परन्तु अब मैं आपको यह समझाना चाहता हूं कि हमारे अस्वादमें वास्तवमें मजाक अुड़ाने जैसी कोओी बात ही नहीं है। अस्वादकी हंसी अुड़ाते समय लोग अुसका अर्थ कुस्वाद करते मालूम होते हैं। हम तीखे मिर्च-मसाले नहीं डालते चीजोंको तलते-बलाते नहीं अिसलिये अन्न बेस्वाद हो जाता है यह स्वीकार करनेको हम तैयार नहीं हैं। हम मिर्च हींग जैसे अुग्र स्वाद अपनी वानगियोंमें नहीं डालते अिससे अनके आदी लोग भले ही हमारे अन्नको फीका कहें परन्तु हम अुसे स्वाद रहित अथवा बेस्वाद माननेको तैयार नहीं हैं।

अतिस्वाद कोओी सच्चा स्वाद नहीं है। खानेके हरअेक पदार्थमें कुदरतने अुसका अपना स्वाद रख ही दिया है। मीठापन खारापन तीखापन खट्टापन तोरापन और कड़वापन — ये ६ रस तो मूल अुन पदार्थोंमें होते ही हैं। परन्तु कुदरतने हमारी तरह अंजलि भर भर कर अुनमें स्वाद नहीं रखे हैं। अुसकी कृतिमें किफायत है अितना ही नहीं परन्तु अूंचे प्रकारकी सूक्ष्म रसवृष्टि है, यह किसी भी रसज्ञ मनुष्यको स्वीकार करना पड़ेगा। प्रकृति द्वारा रंग और सुगन्धसे मंडित फूलों पर कोओी झूठा कलाकार कृत्रिम रंग चढ़ाये और अितर छिड़के तो सच्चे कलाकार अुसकी कलाको स्थूल मानेंगे। अुसी तरह कुदरतके रख हुअे स्वादोंको बनावटी तौर पर अतिस्वाद वाले बनानेमें स्वादकी सच्ची रसिकता नहीं होती। जो जीभ प्रकृतिके बनाये हुअे सूक्ष्म और बढ़िया रस-मिश्रणोंकी कदर समझने लगती है अुसे कृत्रिम स्थूल मिश्रण बेस्वाद और नीरस लगे बिना नहीं रहते।

जीभकी शक्तिको अत्यन्त सूक्ष्म होने दें अतिस्वादसे मोगी न बना दें तो ही वह अपना मूल कार्य कुशलतासे कर सकती है। अर्थात् स्वाद परसे वह हमें कह सकती है कि अमुक वस्तु शरीरमें भेजने लायक है और अमुक नहीं है। वस्तु खाने लायक स्वादिष्ट हो तो भी हमारा शरीर अुसे चाहता है या नहीं अुसका त्यागन करनेकी स्थितिमें है या नहीं अर्थात् भूख लगी है या नहीं यह भी कहनेका काम जीभका ही है। जीभकी अिन शक्तियोंको लोग अतिस्वादसे नष्ट कर डालते हैं। हम अिन शक्तियोंका विकास करके सच्चा स्वाद लेना चाहते हैं। अिसी तरह सच्चा अन्न पहचान कर अुसे ग्रहण करना चाहते हैं।

हम अपने अन्नको जीभके लिअे न केवल रुचिकर ही बनाना चाहते हैं बल्कि अुसका रूप-रंग भी हमारी आंखोंको प्रिय लगे अैसा चाहते हैं। और गंध भी नाकको प्रिय हो वैसी चाहते हैं। परन्तु ये सब हम अैसे ही चाहते हैं, जो हमारे तालीम पाये हुअे आंख-नाकको प्रिय लगें।

अेक तरफ गरम गरम रोटियां और ताजा मक्खन हो और दूसरी तरफ तली हुअी पूरियां हों और हमारी जीभ अगर सधी हुअी हो तो वह हमें पहली तरफ ही ले जायगी, नाक भी अुसी तरफ पक्षपात दिखायेगी। अेक तरफ फलोंकी टोकरी हो दूसरी तरफ मिठाअियोंकी रकाबियां हों और हमारी जीभ सधी हुअी हो तो हम टोकरीकी तरफ ही मुड़ेंगे। आंख और नाक भी फलोंके मोहक रंग और सुगन्धसे इतना पसन्द ही नहीं करेंगे। अेक तरफ दोनेमें ताजी ताजी मूली प्याज और लाल टमाटर हों दूसरी तरफ सेव गांठिया वगैरा हों और हमारी जीभ सधी हुअी हो तो वह पहला दोना ही मांगेगी। आंखें और नाक तो बहुत सधे हुअे न होंगे तो भी अुसी तरफ दौड़ेंगे। यह नअी दृष्टि है और विकसित करने लायक है।

पड़ी हुअी आदतों पर विजय पाना मुश्किल तो है ही। प्रचलित लोकरूढ़ियोंसे अलग मार्ग पर चलनेमें अेक प्रकारकी लोकलाज मनुष्यको बाधक होती है। अिसलिअे सुधार अच्छा लगता हो तो भी अुस पर अमल करनेकी अुसकी हिम्मत नहीं होती। अैसी साहसहीनताके विरुद्ध हमें लड़ना होगा। आश्रमके अनुकूल वातावरणमें हम आसानीसे अैसा कर सकते हैं।

आहारके मामलेमें पुरानी आदतें कितनी प्रबल होती हैं और नये विचार बनानेमें कितनी दिक्कत होती है, अिसका अनुभव आपको शुरूके दिनोंमें यहां अच्छी तरह होगा। आपके मनमें अिन दोनोंके बीच व्यवस्थित युद्ध ही चलेगा। हम अिस अनुभवमें से अच्छी तरह गुजरे हैं। खटमीठे और लाल टमाटर आज हम सबको खूब आकर्षक लगते हैं और जिस दिन व थालीमें नहीं होते अुस दिन भोजनमें कुछ कमी मालूम होती है। परन्तु यहां अपने पुराने मित्रोंसे आप पूछेंगे तो वे बतायेंगे कि शुरूके दिनोंमें अुन्हें देखकर वे कैसे नाक-भौं सिकोड़ते थे। अुनका स्वाद अुन्हें भाता नहीं था और अितना सुन्दर रंग भी न जाने क्यों अुनकी आंखोंको अच्छा नहीं लगता था। आपकी तरह वे भी घर पर तेलमें बघारी हुअी साग भाजी खा खाकर आये थे। यहां आश्रममें सभी तरकारियां अुबाली जाती हैं और तेल अूपरसे लिया जाता है। घर पर छौंकी हुअी और हल्दीके रंगसे पीली की हुअी दाल खाकर वे आये थे। यहां आश्रममें दालको अच्छी तरह अुबालते हैं वह छिलकेवाली ही होती है अुसमें तेल अूपरसे लेते हैं और पीला रंग डालनेकी जरूरत नहीं मानते। अेक दिन हमें यह सब बेस्वाद फीका और खानेमें कठिन लगता था। अब प्रत्येक वस्तुके सूक्ष्म रस हमारी जीभको पसन्द आ गये हैं। अुन्हें तेज मसालोंसे दबा देना अब हम अत्याचार करने जैसा मानते हैं। हल्दीके रंगसे कुदरती रंग अब हमारी आंखको सचमुच अधिक मोहक लगने लगे हैं। यहां तक कि कितनी ही साग-भाजी तो अब हमें बिना पकाअी हो

सभी स्वादिष्ट, सुन्दर और सुगंधयुक्त लगती है। असे अुबालना सुन्दर फलोंको मसल डालने जैसा अरसिक कृत्य लगता है। यह तो सालीमका प्रश्न है। आप नअी दृष्टि समझ लेंगे तो आपको भी अैसा ही अनुभव हुअे बिना नहीं रहेगा।

आशा है कि आप कोअी हमारा आश्रमी आहार देख कर तथा अुसके बारेमें आलोचनाअें सुनकर घबराहटमें नहीं पड़ जायेंगे। हमने आहारकी पद्धतिमें जो परिवर्तन किये हैं वे आलस्यमें नहीं कुशलता न होनेसे भी नहीं हमें कंजूसी करनी है अिसलिअे भी नहीं परन्तु सच्ची रुचि सच्चा रूप-रंग सच्ची सुगंध और अिन सबके साथ सच्चा पोषण कायम रहे अिसीलिअे किये हैं। आजकल आपके मनमें अभी और पुरानी रुचिके बीच युद्ध होने लगा होगा। अुसमें आपको मदद देनेके लिअे हमारी नअी दृष्टि अितने विस्तारसे आपको मैंने समझाअी है। मुझे विश्वास है कि आपकी रुचि जरूर विकसित होगी और आप भी अिस सुन्दर अन्नके भोक्ता बन जायेंगे। विश्वास रखिये आप सोचते होंगे अुससे कहीं कम समयमें आपके मनमें यह परिवर्तन हो जायगा।

प्रवचन ९

सात्त्विक आहार

आहार-संबंधी अपना प्रवचन मुझे आज भी जारी रखना है। मड़ जितना मल बूत हो गोलाकारी भी अुतनी ही सख्त करनी चाहिये न?

गीताजीमें भोजनके सात्त्विक राजसी और तामसी तीन प्रकार बताये गये हैं। ये श्लोक गीताके १७ वें अध्यायमें अिस प्रकार आये हैं

आयुः सत्त्व बलारोग्य सुख-प्रीति विवर्धनाः ।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः सात्त्विकप्रियाः ॥
कट्वम्ल-लवणात्युष्ण तीक्ष्ण-रूक्ष विदाहिनः ।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः ॥
यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत् ।
अुच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम् ॥*

---

* आयु सत्त्व बल स्वास्थ्य सुख प्रीति विवर्द्धक ।
रसाल स्थिर सुस्निग्ध हृद्य आहार सात्त्विक ॥
कटु अम्ल तथा खारा रूक्ष अत्युष्ण दाहक ।
तीक्ष्ण रोगादिकारी जो आहार वह राजस ॥
टरका रससे सूखा बासी हो अपवित्र हो ।
जो दुर्गन्धित अुच्छिष्ट, आहार वह तामस ॥

हम सेवकोंके सात्त्विक जीवनका विकास करना चाहते हैं, जिसलिअे हमें अपना आहार सात्त्विक रखनेकी दृष्टि रखनी होगी। यह तो हम जानते ही हैं कि जैसा आहार वैसी ही डकार आती है। परन्तु यह नहीं जानते कि जैसा आहार वैसा ही मनुष्यका मन भी बनता है। मन बहुत सूक्ष्म है, परन्तु वह शरीरका ही भाग है। और शरीर यदि शुद्ध न हो तो मनकी शुद्धता कायम रखना आसान नहीं है। हमारा शरीर यदि रोगसे ढीला पड़ गया हो, तो मन भी ढीला और अुत्साहहीन बन जायगा। तीखे चरपरे भोजनसे जैसे जीभ जलती है, आंख-नाकमें पानी आता है, आमाशयकी नाजुक चमड़ी जलती है, चमड़ीमें कोअी विकार भी फूट निकलते हैं, वैसे ही अिस तरहके आहारसे मन भी अस्थिर और अुत्तेजित रहता है, अेकाग्रता रखना कठिन हो जाता है और शान्तिसे विचार करनेमें बाधा पड़ती है। तरह तरहके गरम मसाले डाला हुआ भोजन खानेसे शरीरमें अेक तरहकी अुत्तेजना और जलन पैदा होती है, रक्तका वेग बढ़ा हुआ मालूम होता है, सिरमें चक्कर आने लगते हैं। अिसीसे मिलता-जुलता असर मन पर होता हो तो कोअी आश्चर्य है? और वह असर होता ही है। जिस दिन अैसा भोजन करते हैं अुस दिन हमारी नींद अस्वस्थ और अशांत हो जाती है, अक्सर सपने आते हैं और कभी-कभी स्वप्नदोष भी हो जाता है। अैसा परिणाम लानेवाले मसालोंका स्वाद किसीके लिअे भी लाभप्रद नहीं है, तो फिर हम सेवकोंके लिअे तो लाभप्रद हो ही कैसे सकता है?

यह बात सही है कि गरम मसाले और रसोअीमें काम आनेवाले दूसरे मसाले अच्छी औषधियां हैं। वैद्य अुन्हें बीमारोंको देते हैं और विलायती दवाओंमें भी अुनके अर्क अिस्तेमाल किये जाते हैं। हम अैसे जड़ नहीं हैं कि औषधिके रूपमें भी अुनके गुणोंको अस्वीकार कर दें। परन्तु दवाअियां बीमारीमें ही लेना अुचित है और वह भी अुचित मात्रामें ही। रोज लेनेसे तो शरीरको अुनकी आदत पड़ जाती है, जिससे रोग पर अुनका कोअी असर नहीं होता।

मजाक अुड़ानेवाले मित्र दलील देते हैं कि हम मिर्च और मसाले खाते हैं जिस-लिअे हमारा दिमाग तेज रहता है, जब कि तुम्हारी खुराकमें ये अुत्तेजक पदार्थ न होनेसे तुम आश्रमवासी ठंडे रहते हो! दलील करते समय वे अुछल अुछल कर चिल्लाते हैं और अपने भीतर मसालेसे आया हुआ तेज बतानेकी कोशिश करते हैं। सेवकोंमें भी बहुतसे अैसे होते हैं, जो अुनकी चिल्लाहटको दबा देने जितनी चिल्लाहट करके दलील देते हैं और मिर्च-मसाले खाये बिना ही आंखें लाल कर सकते हैं और नाकके नथुने फुला सकते हैं! परन्तु यह स्वीकार करना चाहिये कि अधिकांश सेवक यदि वे सच्चे सेवक होंगे तो अपनी दलील और आवाजमें मिर्चका अुपयोग करना पसंद नहीं करेंगे। जिससे मिर्चवाले मित्रोंको वाक्‌कि सम्बन्धमें तो प्रत्यक्ष विजय मिल ही जायगी! सेवक यदि कच्चा होता है तो बेचारा अपनी हारसे खिसिया जाता है। आप स्वीकार करेंगे कि खिसियानेकी हमें जरा भी जरूरत नहीं है। हम तेजवान अवश्य बनना चाहते हैं परन्तु हम बुद्धिका तेज चाहते हैं जिसका तेज

नहीं! और बुद्धिका सच्चा तेज चिल्लाहट और वितंडावादके रूपमें कैसे प्रगट हो सकता है?

आहारके मामलेमें कुछ लौकिक कल्पनायें हमारे समाजमें बहुत ही गलत और अुलटी चली आ रही हैं। अुन्हें हमें सुधार लेना पड़ेगा। मिर्च-मसालोंके बारेमें तो मैं कह ही चुका हूं। अुससे अुलटा भ्रम प्याजके विषयमें है। वह तामसी और धार्मिक मनुष्योंके न खाने योग्य मान लिया गया है। अुसे क्यों न खाना चाहिये अिसकी तरह तरहकी कहानियां भी लोगोंने गढ़ ली हैं। परन्तु असलमें देखें तो अैसा मालूम होता है कि अुसकी निंदा अुसके अुग्र स्वाद और गन्धके ही कारण है। यह नहीं कहा जा सकता कि अुसमें मसालों जैसा अवगुण है। अुसके गुण आहार शास्त्री अितने बताते हैं कि हमारे गरीब देशमें अिस सस्ती सुलभ वस्तुका त्याग करना राष्ट्रीय आपत्ति हो जायगी।

दूसरा अंधविश्वास लोगोंमें यह है कि साग-भाजीसे पित्त हो जाता है बुखार आ जाता है। जिस ऋतुमें साग-भाजी अधिक मात्रामें पैदा होती है, अुसीमें बरसातके पानीके गढ़े जहां-तहां भरे रहते हैं वनस्पति जहां-तहां सड़ती है और मच्छरों वगैराकी अुत्पत्ति बढ़कर बीमारियां फैल जाती हैं। लोगोंने और वैद्योंने भी अिन बीमारियोंका सम्बन्ध कुदरतकी दी हुअी समकालीन साग-भाजीके साथ जोड़ दिया है।

अिसके अलावा साग-भाजी और कंदमूल खानेमें हमारे देशके धार्मिक वृत्तिवाले लोगोंको हिंसाकी भी शंका रहती है। अपनी अहिंसाकी भावनाको हम ठेठ वनस्पति-सृष्टि तक पहुंचा सकें यह तो बड़ी अुन्नत स्थिति होगी। परन्तु जिसकी दया साग-भाजी तक पहुंचती हो, अुसका तो सारा जीवन ही दूसरी तरहका होगा। वह खाते समय ही नहीं परन्तु चलते बैठते अुठते बात करते और सांस लेते समय भी दयावृत्तिसे अितना भरा रहता होगा कि अिनमें से अेक भी क्रिया करना अुसे अच्छा न लगेगा। अुसे अपनी अिन क्रियाओंमें अनेक अदृश्य और दृश्य जीवोंके प्रति क्रूरता दिखाअी देगी। अर्थात् अैसे मनुष्यका शरीर धारण करना ही असंभव हो जायगा। साग-भाजी छोड़कर पुण्य कमानेका प्रयत्न करनेवालोंका जीवन क्या अितनी अूंची दया तक पहुंचा हुआ होता है? वे जीवनके दूसरे सब कामोंमें दूसरोंसे अधिक विचार शीलता शायद ही दिखाते हैं। खानेमें भी वे साग-भाजी छोड़नेके सिवा कोअी सूक्ष्म विचार बताते नहीं पाये जाते। और अिसलिअे अुनके व्रतोंमें न तो गहराअी होती है न धार्मिकता होती है और न तपस्या होती है। तुलसके कीमती तत्त्व स्पर्श जैसा देनेके सिवा वे कोअी भी पुण्य नहीं कमाते।

अिसी प्रकार टमाटर, गाजर और तरबूज जैसी महा गुणकारी सुन्दर, स्वादिष्ट और सुलभ वस्तुओंको भी धर्मने अधार्मिक मान लिया है। और अिस तरह माननेके कारणोंमें जायें तो कुछ भी स्पष्ट कारण प्रतीत नहीं होता। जो कारण बताये जाते हैं वे बिलकुल बेहूदे और हास्यास्पद हैं। टमाटर और तरबूज क्या न खाये जायें?

अैसा पूछा जाय तो कहेंगे वे लाल है और मांस जैसे दिखाओी देते हैं। और गाजर? कौन जाने यह अत्यंत सस्ता और ढेरों पैदा होनेवाला कंद अधार्मिक कैसे मान लिया गया! क्या गाजर शब्दका 'गा' अक्षर अुन्हें गायके मांसकी याद दिलाता होगा?

साग भाजीकी तरह फलों पर भी हमारे लोगोंकी बहुत ही नाराजी है।

हमें बचपनसे सिखाया जाता है कि नींबूसे बुखार आता है और केलेसे भी बुखार आता है। आज हम सब जानते हैं कि ये फल तो बुखार मिटानेमें भी मदद करते हैं। अब भी अमरूद सीताफल और बोर जैसे गांवोंकी सीमामें पैदा होनेवाले फलोंके बारेमें हमारी जनताके भ्रम कहां मिटे हैं? अब भी पपीता गरमी करनेवाला माना जाता है। सचमुच यह हमारा बड़से बड़ा दुर्भाग्य नहीं तो क्या है? सच पूछा जाय तो फल मनुष्यके लिअे ही अीश्वरका पैदा किया हुआ आहार है। कैसा मधुर अुसका स्वाद! कैसा मोहक अुनका रूप-रंग! कैसा सुपाच्य अुनका गूदा! न अुबालना पड़े, न सेंकना पड़े। प्रकृति-माता स्वयं ही अपनी अलौकिक कला द्वारा अुन्हें पकाकर तैयार — मुंहमें खाने लायक स्थितिमें हमें देती है। अुन्हें पेड़से तोड़ते समय पेड़ोंको कोअी नुकसान पहुंचानेकी जरूरत नहीं पड़ती। पेड़ तो खुद ही चाहते हैं कि पशुपक्षी और मनुष्य अुनके फलोंका लें और भक्षण करें। वे तो हमारे सामने आग्रह कर करके अपने फल रखते हैं। फलोंका मीठा रस और सुन्दर रंग अुनकी भाषामें आग्रह नहीं तो और क्या है? हम फल ग्रहण करें तो वे हमारा अुपकार भी मानते होंगे क्योंकि हम फल खाकर कहीं गुठलियां डाल दें और पृथ्वी पर अुनके वंशका विस्तार करें यह आशा अुनके मनमें छिपी रहती है।

फलोंके बारेमें हम अपने भ्रम छोड़ दें तो भी हमारे देशमें फल हैं ही कहां? हमारी खेती-बाड़ी अत्यन्त अधोगतिको पहुंची हुअी है। अिस कारण हमारे देशमें फलोंकी अुत्पत्ति ही कम होती है। तात्कालिक लाभ देखनेवाले जमींदार कपास गन्ना तम्बाकू वगैराकी खेती करना पसन्द करते हैं जिसमें मेहनत और रखवाली कम करना पड़ती है बाजारमें रुपया अच्छा पैदा होता है और तुरन्त हाथमें आता है। फलोंके पेड़ तो मेहनत मांगते हैं संभाल चाहते हैं, दो-चार या अिससे भी अधिक बरसका धीरज मांगते हैं। और फल पक जायें तब बेचकर दाम खड़े करनेकी भी बड़ी चिन्ता होती है। क्योंकि बे तो हमें खा लो हमें खा लो का शोर मचाते हुअे ही पेड़से अुतरेंगे और देर की जाय तो सड़ जानेकी धमकी देकर किसानको परेशान करेंगे। अिस स्थितिमें किसान मनचाहा भाव नहीं अुपजा सकता। अैसा फलोंका बगीचा लगानेमें अुसे क्या दिलचस्पी हो सकती है? अपने घरके लिअे थोड़ेसे फलोंके पेड़ लगानेकी भी अुसे आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। अुसे यह डर होता है कि फल खाकर बच्चे बीमार पड़ जायेंगे। अिन कारणोंसे फल हमारे देशमें दुर्लभ रहे हैं। अुनके विरुद्ध यह गलत खयाल भी ज्यादातर अुनके सेवनका अनुभव हमें थोड़ा होनेके कारण ही बना मालूम होता है।

आहारशास्त्री फल-फलादिके गुण गिनानेमें कमी थकते ही नहीं। गीताके अुपरोक्त श्लोकोंमें सात्त्विक आहारके जितने लक्षण बताये गये हैं, वे सब फलोंमें समाये हुओ हैं। रस्याः स्निग्धाः रोचक सुख प्रीति बढ़ानेवाले — ये सारे विशेषण देखकर मैं तो यह अनुमान लगाता हूं कि यह फलोंका ही वर्णन है। सात्त्विक आहारका वर्णन करते समय व्यासजीकी आंखोंके सामने फल ही रहे होंगे। अुनके दूसरे विशेषण हैं — आयु, सत्त्व बल स्वास्थ्य बढ़ानेवाले और स्थिर। ये गुण रखनेवाले तत्त्व फलोंमें अच्छी मात्रामें हैं जिसकी साक्षी आजकलके आहार-वेत्ता मुक्त-कण्ठसे देते हैं।

अैसे फलोंको आहारमें प्रमुख स्थान न देकर हम क्यों तरह तरहकी मिठाअियां आटा घी डालकर, मावा वगैराके मिश्रणसे बनाते हैं जिसका मुझे बड़ा आश्चर्य है। वास्तवमें मिठाअियां और कुछ नहीं रसोअीघरमें फलोंकी ही बनाअी हुअी नकल जान पड़ेंगी। हम मनुष्य विचित्र प्राणी हैं। हमें असलसे अुसकी नकलके प्रति अधिक आकर्षण रहता है। अुसे हम कलाका नाम देते हैं। रमणीय सूर्योदयका सच्चा दृश्य सामने फैला होगा तो अुसकी तरफ हमारा ध्यान नहीं जायगा परन्तु अुसके चित्रका हम बखान करते रहेंगे। सिलावट पत्थरका खम्भा घड़ेगा तब अैसा दिखायेगा मानो वह लकड़ीका हो! और बढ़अी लकड़ीका खम्भा घड़ेगा तब अैसा आभास करायगा मानो वह पत्थरका हो! मिठाअी-रूपी नकली फल कितने ही सुन्दर बनाये जायें तो भी वे सच्चे फलोंकी बराबरी कैसे करेंगे? अुनमें मिठास आ जायगी परन्तु मधुरता नहीं आ सकती केसर आदिके रंग दिये जायेंगे परन्तु कुदरती रंगकी सुन्दरता आना संभव नहीं, विलायची वगैराकी सुगन्ध डालेंगे परन्तु स्वाभाविक सुगन्ध आना सम्भव नहीं। और आपके कृत्रिम फल गुणोंमें तो कुदरती फलोंकी बराबरी कभी कर ही नहीं सकते। अुन्हें आप घी मावा वगैरा डालकर पौष्टिक बनानेकी कोशिश करेंगे परन्तु पचनेमें बहुत भारी होनेके कारण अुनकी पौष्टिकता अधिकतर व्यर्थ जायगी। फिर भी मनुष्य असली फलोंको छोड़कर नकल — मिठाअियोंका ही सेवन करना पसंद करता है!

सात्त्विक आहारका गीतामें दिया हुआ वर्णन जैसे फलों पर लागू होता है वैसे दूध पर भी लागू होता है अैसा कहा जा सकता है। वह भी रस्य रोचक और स्निग्ध होता है और बल स्वास्थ्य आदिका बढ़ानेवाला है। हमारे लोग पुराने जमानेसे गायके दूधको सात्त्विक भोजन मानते आये हैं। दूध दही छाछ और मक्खनके गुणोंको आजकलके आहारशास्त्री भी स्वीकार करते हैं। अुनका आग्रह है कि निरामिष आहारके साथ जिन्हें जोड़ना जरूरी है।

हमारे देशमें ताजे दूधसे लोग घीके लिअे और अुससे बने हुअे पदार्थोंके लिअे अधिक पक्षपात रखते मालूम होते हैं और अिसलिअे गायका स्थान करके अधिक चरबी युक्त दूध देनेवाली भैंसका पालने लग गये हैं। कोअी भी चीज मर्यादासे बाहर जानेसे अुसके गुण बिगड़ जाते हैं यह स्पष्ट है। घी दूधमें बनता है जिसलिअे मर्यादासे अधिक

खायें और पकवानोंके रूपमें खायें तो भी वह सात्त्विक आहार कैसे रहेगा? अति घी खानेवालेके शरीरमें मेद बढ़ जाता है, चपलता और कार्यशक्ति घट जाती है और शायद अुसे ब्रह्मचर्य-पालनमें भी बाधा होती है।

दूध सात्त्विक आहार तो जरूर है, परन्तु गायको चाहे सो खिलानेसे अुसकी सात्त्विकता नहीं रहती, अथवा कम हो जाती है। हमारे घी-भक्त लोग गायोंको बिनौले वगैरा जैसा चरबी बढ़ानेवाला दाना बड़ी मात्रामें देना पसन्द करते हैं। वास्तवमें गायोंको हरा चारा ही अधिक देना चाहिये। अुसमें हरी कड़बी और मोठ़-घास जैसे रसवाले घास भी देने चाहिये। असी खुराक खानेवाली गायका दूध पतला सा होगा परन्तु गुणों और पाचकतामें अधिक अच्छा होगा। और अिसीलिअे अुसमें सात्त्विक गुण ज्यादा होंगे।

अिसके सिवा, गायोंको दिनभर भैंसोंकी तरह खूंटसे बांध रखनेमें भी अुनके दूधकी सात्त्विकता चली जाती है। गाय अपनी खुराक पूरी तरह पचा नहीं सके और मनसे भी प्रसन्न न रहे, तो अुसका असर दूधमें आये बिना कैसे रहेगा? खुली हवामें आजादीसे खूब चरनेवाली गायें ही सात्त्विक गुणोंवाला दूध दे सकती हैं।

अिस प्रकार यह नहीं मान लेना चाहिये कि कोअी भी दूध सात्त्विक है। हम प्रयत्नपूर्वक सात्त्विक बनायें तो ही वह सात्त्विक बनेगा और अुचित रूप तथा अुचित मात्रामें ग्रहण करें तो ही वह सात्त्विक गुण देगा।

सात्त्विक आहारमें कौन कौनसी वस्तुअें आती हैं अिसका हमने विचार किया है। आश्रमका अपना आहार हम यथासाध्य सात्त्विक रखनेका प्रयत्न करते हैं। परन्तु कोअी भी सात्त्विक चीजें खानेसे ही हमारा स्वभाव हमारे आचार-विचार सात्त्विक हो जायंगे यह मान लेनेकी भूल कोअी न करें। और अिससे भिन्न प्रकारके पदार्थ खानेवालोंको रजोगुणी या तमोगुणी भी न मान बैठें। सात्त्विक चीजें खानेसे जीवनको सात्त्विक बनानेका प्रयत्न करनेवालेको कुछ मदद जरूर मिलती है परन्तु केवल अितना करनेसे जीवन सच्चा सात्त्विक हो जाय तब तो क्या चाहिये? अिसलिअे सात्त्विकताकी दृष्टिसे आहारका विचार करें तो अुसमें केवल अितना ही विचार नहीं करना होता कि कौनसे पदार्थ खाये जायं और कौनसे न खाये जायें बल्कि अिससे अधिक गहरे अुतरकर विचार करनेकी जरूरत है।

हम कितनी ही सात्त्विक वस्तुअें क्यों न खायें परन्तु अुनमें भी स्वाद तो होंगे ही। यदि हम जीभके वश होकर खायें खानेमें सन्तुलन न रखें तो सात्त्विकसे सात्त्विक वस्तु भी दुःख शोक और व्याधि पैदा करनेवाली होगी और अिसीलिअे राजसी सिद्ध हुअे बिना नहीं रहेगी। लड्डू मिठाअी है अिसलिअे वह अपने पर हाथ मारनेवालेको तंग करेगा अुसी तरह आम सात्त्विक फल होने पर भी यदि हम अुन पर हाथ मारेंगे तो वे भी हमें अुसने ही दुःखी करेंगे तथा बीमार, जड़ और आलसी बना देंगे।

जूठे और बासी अन्नको तामसी कहा गया है। गरीबी और अपमानसे पतित हुअे लोगोंको जब हम जूठी पत्तलें चाटते देखते हैं तो हमें घृणा होती है। परन्तु अेक तरहसे हम भी जब स्वाद-लम्पट होकर जरूरतसे ज्यादा खाते हैं तब और क्या करते हैं? अमृत जैसे अन्नको हम अपने पेटमें दुर्गन्धवाला बनाते हैं सड़ाते हैं और तामसी बना देते हैं।

सात्त्विक आहारका विचार करते समय अिससे भी अधिक बारीकीमें जाना पड़ेगा। हम अपना आहार कमाते किस तरहसे हैं? ओमानदारीसे प्राप्त की हुआी सूखी रोटी और मिर्च सात्त्विकताकी किसी व्याख्यामें आये या न आये तो भी वह सात्त्विक ही है। अुसे खाकर मनुष्य सुखी सन्तुष्ट और प्रेमपूर्ण बनेगा। क्योंकि अुसने अकेली रोटी ही नहीं खाओ है बल्कि सचाओ और महनतकी खुराक भी खाओ है। अिसके विपरीत हम केवल सात्त्विक फलों पर गुजर करें, परन्तु हमारा धन्धा पापका हो तो हमने फलोंके साथ साथ पाप भी खाया है। अिसलिओ अुसकी दुर्गन्ध हमारे जीवनमें से निकले बिना कैसे रहेगी? सांप शुद्ध दूध पिये तो भी अुससे जहरके सिवा और क्या पैदा होगा?

अिसी प्रकार हमें यह भी देखना पड़ेगा कि हम अपने आहारकी वस्तुअें कहांसे लाते हैं और अुनके अुत्पादनमें स्वदेशीके सिद्धान्तका पालन करते हैं या नहीं। क्या हम अुन्हें प्राप्त करनेमें स्वावलम्बनका त्याग करके बाजारके जालमें फंसते हैं? अुनके अुत्पादनमें गांवके लोगोंको अपने हकका हिस्सा लेने देते हैं या अुनके पेट पर पट्टी बांधकर मशीनोंकी शरणमें जाते हैं? यह विचार न करें तो भी सात्त्विक अन्न असात्त्विक बन जायगा।

और अन्तिम दृष्टि है यज्ञकी। अर्थात् हम केवल खानेकी ही बात समझते हैं या देनेकी अुदारता भी दिखाते हैं? औश्वरकी कृपासे हमें जो आहार मिला है, अुसे ग्रहण करते समय यदि आसपास कोअी भूखा हो तो क्या अुसे याद नहीं करना चाहिये? खाते समय कोअी अतिथि-अभ्यागत आ पहुंचे तो हमारे मनमें क्या विचार आता है? हमारा हृदय भीतरसे प्रसन्न होता है या मनमें चोरीकी यह भावना अुठती है कि मुश्किलसे खाने बैठे थ बीचमें यह आफत कहांसे आ गअी? छोटोंको हिस्सा देना पड़ेगा अिस चोरीसे बड़े लोग छिप छिपकर खा लेते हैं अथवा अुन्हें देकर खुद खानेका सूक्ष्म आनन्द भोगते हैं? गीताजीमें अिस तरह मनकी चोरीसे खाये हुअे अन्नको चोरीका अन्न कहा गया है और अुपदेश दिया गया है कि अपने अकेलेके लिअ कभी भोजन न बनाओ, भोजन बनाओ तो अुसमें से पहले यज्ञ करो जिसे देना अुचित हो अुसे दो और फिर जो बचे अुसे अमृत मानकर खाओ। यज्ञ करनेके बाद जो बचता है वही अमृत है, वही सात्त्विक अन्न है।

यदि हम अपना जीवन सात्त्विक और सेवाके योग्य बनाना चाहते हैं तो हमें भोजनमें ये सारे सिद्धान्त अमलमें लाने चाहिये। यह आशा नहीं रखी जा सकती कि

केवल सात्विक मानी जानेवाली वस्तुयें खा लेनेसे हमारे जीवन अेकदम भुन्नत हो जायेंगे। सात्विक आहार खा लेनेसे ही हम बड़े सिद्ध बन गये, अैसा ढोंग करेंगे तब तो समझ लीजिये कि हम खड्डेमें ही पड़ गये।

यह सब जानने और विचारनेके बाद भी जो पदार्थ हम खाते हैं अुनके चुनावमें विचारहीन होना किसी हालतमें ठीक नहीं। सात्विक प्रकारका आहार पसन्द करके अुसीको खानेका आग्रह रखनेमें बड़ा लाभ है, और न रखनेमें बड़ी हानि है।

प्रवचन १०

कैसे खाना चाहिये ?

आज हम जिस बात पर विचार करेंगे कि हमें किस ढंगसे खाना चाहिये। खानेके ढंगमें आश्रमके नाते कोओी विशेषता हो सो बात नहीं यहां जिस ढंगसे हम चलना चाहते हैं, वह ढंग सभी स्वास्थ्य चाहनेवालोंका होता है और होना चाहिये।

जिसमें सबसे पहली बात यह है कि हमारा खूब चबाकर खानेमें विश्वास है। हमें भीश्वरने सुन्दर मजबूत दांत दिये हैं। वे बाघ और भेड़ियेकी तरह बाहर निकले हुमे लम्बे लम्बे और तीखे नहीं हैं परन्तु मुंहके अन्दर व्यवस्थित रूपमें रखे हुमे हैं। जिसलिअे यह तो स्पष्ट है कि वे किसीको काटनेके लिअे नहीं परन्तु खुराकको चबानेके लिअे ही हैं।

शरीरशास्त्री कहते हैं कि हमारे आमाशयकी बनावट अैसी है कि वह साबुत खुराकको पचा नहीं सकता परन्तु जो अच्छी तरह चबानेके बाद भीतर आये अुसीको पचा सकता है। वे हमें यह भी सिखाते हैं कि हम ज्यों-ज्यों कौरको चबाते हैं त्यों-त्यों हमारे मुंहका रस अुसमें मिलता है और न पच सकनेवाला स्टार्च (श्वेतसार) मीठी सुपाच्य शर्कराके रूपमें बदल जाता है। हम ज्यों-ज्यों खानेको चबाते हैं त्यों-त्यों मिठास छूटती है यह किसका अनुभव नहीं है? जिसका अर्थ यह हुआ कि पचनेकी क्रियाका आरंभ मुंहमें ही हो जाता है। चबानेमें मेहनत तो होती है परन्तु वह जरूरी मेहनत होनेके कारण कुदरतने अुसके साथ मिठास जोड़ दी है।

फिर भी लोगोंको चबानेमें अरुचि होती है। अन्य सब शरीर-श्रम करनेमें लोगोंकी अरुचि हो यह तो समझमें आता है परन्तु चबानेमें अरुचि होना जरा भी समझमें नहीं आ सकता। मनुष्य अस्वादके सिद्धान्तकी हंसी अुड़ानेवाला और स्वादका आदी हो तो अुसे कौरका स्वाद जैसे बने वैसे लम्बे समय तक भोगनेकी जिच्छा रखनी चाहिये। कौरको अधूरा चबाकर पेटमें अुतार देनेमें अुसे क्या मजा आ सकता है? अैसा करके तो वह खुद ही अपनी स्वादकी लज्जत गंवाता है। फिर भी मनुष्यको स्वादके भोगसे मालपुअेका रस अधिक मीठा लगता मालूम होता है।

विचार करने पर क्या असा नहीं लगता कि रसोअीकी हमारी सारी कलाका विकास मानो चबानेकी भयंकर मेहनतसे बचनेके लिअे ही किया गया है? पाक-कलामें कुशल बहनें दिन-दिन अपनी रोटियोंको अधिक पतली, भुरभुरी और कोमल बनाती रहती हैं। अैसी नरम रोटियोंको भी खानेसे पहले दालमें भिगोकर अधिक नरम बना लिया जाता है। अिससे चबानेकी मेहनत ही खतम हो जाती है। आटेमें रहा स्टार्च शर्करा बने बिना — पचे बिना आमाशयमें पहुँच जाता है। बिचारी जीभ भी अपने हककी मिठास खो बैठती है। फिर जीभ झगड़ा न करे, अिसके लिअे पकानेवाले कितनी करामातें करते हैं! अुसे शक्कर खिलाते हैं, मुरब्बे और अचार चटाते हैं और दाल-सागको तो छहों रसोंके मिश्रण और अुपमिश्रणका काढ़ा बना डालते हैं। अिससे भी जीभ खुश न हो तो अुसे शक्कर-घीसे तर मिठाअियां खिलाते हैं! कुपाचनसे बिगड़ी हुअी जीभ ज्यों-ज्यों अधिक नाराज होती जाती है त्यों-त्यों हम भी मिठास और तीखेपनका लालच बढ़ाते जाते हैं!

यह बात आप सब समझ लें और अपनी स्वीकृति दें तो हम आश्रमकी खुराकमें मुख्य वस्तु अैसी ही रखना चाहते हैं जो चबाअी जा सके। अिसलिअे हम रोटी और भाखरी ज्यादा पसन्द करेंगे। फुल्के बनायेंगे, परन्तु कागज जैसे नहीं बनायेंगे। अुसे हम अच्छी तरह चबायेंगे और अुसमें से जो मिठास मिलेगी वह हमारे अधिकारकी होनेके कारण हम आनन्दसे अुसका अुपभोग करेंगे। दाल-सागमें भी हम जीभको ललचानेके लिअे तरह तरहके मसाले नहीं डालेंगे। अनाज और दालके पचनेके लिअे अूपरसे नमक मिलानेकी जरूरत होती है, अैसी आहारशास्त्रियोंकी राय है। अुसे मानकर हम आवश्यक मात्रामें नमक लेंगे। मसाले तो औषधियां हैं। वे रोग मिटानेके लिअे काममें लाये जाने चाहिये। संयोगवश हम बीमार पड़ेंगे तब अुनका अुपयोग करेंगे परन्तु जीभको धोखा देनेके लिअे हम अुन्हें क्यों काममें लें?

रोजके आहारमें खास तौर पर विचार करने योग्य दूसरी चीज भात है। भात हम लोगोंकी प्रिय और मानी हुअी वानगी है। अतिप्राचीन कालसे भातका हम भारतीयोंको शौक रहा है। कुछ प्रान्तोंमें तो भात ही मुख्य आहार है। हमारे अिलाकेमें भी दोपहरके भोजनमें लोग भात ही खाते हैं। भात न मिले तो खानेसे अुन्हें सन्तोष नहीं होता।

परन्तु हमारे अिस पुराने और प्रिय भातके सम्बन्धमें आहारशास्त्रियोंने शंका खड़ी कर दी है। अुसमें पोषक तत्त्वोंकी मात्रा कम है और खुमारी पैदा करनेवाला स्टार्च ही अधिक है। जो भातसे पेट भरते हैं अुन्हें नशा चढ़ता है और खानेके बाद कुछ देर तक कोअी काम नहीं सूझता। अुन्हें नींद और आलस्यमें करवटें बदलते रहना पड़ता है। अुसमें पोषणके तत्त्व कम होनेसे बहुत अधिक मात्रामें खाने पर ही पेटको सन्तोष होता है। अिसलिअे भात खानेवालोंका पेट तन जाने तक खानेकी आदत पड़ जाती है। परिणाम-स्वरूप आमाशयकी थैली तनकर बड़ी हो जाती है और वह भरकर तन न जाय तब तक खानेवालोंको तृप्ति होती ही नहीं। फिर तो अैसे लोग रोटी या

मिष्टान्न खायें तो भी पेटके तन जाने तक खाये बिना अुन्हें संतोष नहीं होता। और अुसे वे पचा नहीं सकते अिसलिये रोगोंके शिकार होते हैं।

और फिर भात खानेका हमारा तरीका भी कैसा है? हम अुसे दाल कढ़ी वगैरामें मिलाकर मुंहमें डालते हैं। सादा भात हो तब तो दांतकी पकड़में थोड़े-बहुत दाने आ जानेकी संभावना रहती है परन्तु दालमें मिलाकर तो हम हरअेक दानेको चबाये जानेके खतरेसे पूर्ण मुक्ति दे देते हैं। भात हमारे लोगोंको अच्छा लगता है अिसका कारण कदाचित् भातका स्वाद नहीं है। अुसमें जो भी स्वाद होता है अुसे तो लोग कूटकर भूसी निकालकर और मांड निकालकर बिलकुल हल्का कर देते हैं और अिस हल्के स्वादको भी दाल वगैरामें मिलाकर पूरी तरह नष्ट कर देते हैं। मुझे तो लगता है कि भातमें चबानेका कष्ट नहीं अुठाना पड़ता वह गटसे गलेके नीचे अुतारा जा सकता है, अिसीलिये वह हम लोगोंको पसंद आ गया है। अुसके अच्छा लगनेका दूसरा कारण बहुत करके अुसकी मादकता भी हो सकती है। भात खाकर खानेवालेका पेट तन जाता है और अुसे लेटना पड़ता है। परन्तु अिस स्थितिमें मनुष्यको अेक प्रकारका सुख मालूम होता है। व्यसनी लोगोंको अपने व्यसनोंमें जो लज्जत आती है अुससे मिलती-जुलती ही यह लज्जत मालूम होती है।

भातके विषयमें ये विचार सुनकर आपको बहुत आश्चर्य तो होगा। परन्तु अब आप समझ सकेंगे कि आश्रमकी खुराकमें से हम अुसे प्रधान पदसे क्यों हटा देना चाहते हैं। अुसे आप बिलकुल तो नहीं छोड़ेंगे परन्तु हिम्मत हो तो अुसे दालमें मिलानेका रिवाज बन्द कर दीजिये और रूखा खाकर अुसके भीतरका थोड़ा स्वाद पहचाननेका प्रयत्न कीजिये।

भातकी मात्रा घटायें तो शुरूमें सावधान रहनेकी जरूरत है। भात भर भरकर बड़ी बनी हुअी पेटकी थैलीको ठोस खुराकसे अुतनी ही तंग होने तक भरने लगें तो अपच होनेसे आप परेशान हो जायेंगे। भूखे रहनेका आभास हो तो भी थोड़े दिन तक आप सावधानी रखें और यह देखें कि ठोस खुराककी मात्रा बढ़ न जाय। थोड़े ही दिनोंमें आपका पेट नअी खुराकका आदी हो जायगा और फिर थोड़ी मात्रासे भी आपको तृप्ति होने लगेगी।

आहारशास्त्रियोंकी अेक और सलाह भी मानने लायक है। वे कहते हैं कि आगसे अपनी खुराकके भीतरी तत्त्वोंको जलाकर नष्ट न कर डालिये। हमें यह सलाह माननेमें आपत्ति नहीं हो सकती। खुराकको नरम बनाकर दांतका कष्ट बचाया न जाय यह हमारा निश्चय हो जानेके कारण जो चीजें पकाये बिना खाअी जा सकती हैं अुन्हें हम मूल रूपमें ही खायेंगे। अनेक प्रकारकी साग-भाजियां और फल कुदरती रूपमें बिना पकाये खाये जा सकते हैं फिर भी अुन्हें हम क्यों पकाते हैं यह सचमुच समझमें नहीं आता। केवल अनाज ही अैसे होते हैं जिन्हें पीसकर और अुबालकर न खायें तो हमारा पेट पचा नहीं सकता। अुन्हें भी जरूरतसे ज्यादा न पका डालनेकी हम सावधानी रखेंगे।

आप देखते हैं कि हमारी खानेकी चीजें तो वही हैं, केवल अुन्हें खानेके ढंगमें फर्क पड़ जाता है। हम बहुतसी चीजोंको पकाकर निर्जीव बनाये बिना लेना पसंद करते हैं, और जिन्हें आग पर पकाते हैं अुन्हें भी अत्यन्त गरम नहीं बना डालते। पुराणवादी मन यह भोजन देखकर भड़का भुठता है। अुसे सब कुछ विचित्र और नया नया लगता है। वह शिकायत करता है कि किसलिअे अुससे यह बड़ा त्याग कराया जाता है? किसलिअे अुसके स्वाद लूट लिये जाते हैं? वास्तवमें अुसकी शिकायत निर्मूल है। पुराककी मूल वस्तुअें तो वही हैं। आम तौर पर लोगोंके खानेमें साग फल वगैरा कम होते हैं या बिलकुल होते ही नहीं। हमने तो अुलटे शरीर-श्रम करके अुन्हें अधिक मात्रामें भोजनमें शामिल किया है। स्वादमें या दीखनेमें हमारा खाना भिन्न है, परन्तु गुणमें घटिया नहीं है, अुलटे बढ़कर ही है। पोषक तत्त्वोंकी दृष्टिसे तो वह श्रेष्ठ है ही। अितना सही है कि यह भोजन हम लपालप खाकर अुठ नहीं सकेंगे। हमें अुस पर काफी समय खर्च करना होगा और चबानेका कष्ट अुठाना पड़ेगा। परन्तु अिस मेहनतका बदला अुसमें से निकलनेवाले मधुर रसों द्वारा हमें मिल जायगा।

प्रवचन ११

अमृत-भोजन

आहारके बारेमें हमने कभी दृष्टियोंसे विचार कर लिया। हमने अिस अमृत-भोजनका सुन्दर और पवित्र नाम दिया है। अैसे पवित्र नामको शोभा देनेवाले ढंगसे ही हमें अुसे ग्रहण करना चाहिये।

भोजन करनेकी दो पद्धतियां हैं। अेक मनुष्यकी और दूसरी पशुकी। पशुके पेटमें भूख हो और आंखके सामने खानेकी चीज हो, तो फिर वह खानेके सिवा दूसरा विचार ही नहीं करेगा। परन्तु मनुष्यके लिअे तो ये दोनों बातें अिकट्ठी होनेके बाद भी कुछ विचार करना बाकी रहता है। अुसे भोजनमें अमृतकी भावना अुत्पन्न करनी है।

आप विचारमें पड़ जाते हैं — "यह क्या बला है? भोजनके समारोह रखे जाते हैं तब लोग भोजनके स्थानको चौक पूर कर और धूप आदि जला कर सुहावना बनाते हैं। क्या अैसा ही कुछ करना है?"

नहीं, अैसे समारोह तो किसी किसी दिन शोभा देते हैं। हम तो रोजके भोजनको अमृत बनाना चाहते हैं। हम सब भोजन करनेके लिअे साथमें बैठते हैं। साथ बैठनेमें जो आनन्द पैदा होता है वह हमारे सादे और स्वच्छ अन्नको अमृत बना देता है।

आप अुतावले होकर कहेंगे "ठीक है। खाते खाते हम खूब बातें करें, विनोद करें और प्रेमसे अेक-दूसरेको आग्रह करें, तो ही खानेमें सच्चा आनन्द आ सकता है।"

आपका अनुमान ठीक नहीं है। आग्रहको लोग प्रेमकी निशानी मानते हैं, परन्तु हम अुसे बहुत हलकी चीज मानते हैं। कभी बार तो अुस प्रेमके बजाय झूठा बड़प्पन

न्यानका ही साधन बनाया जाता है। असंस्कारी मनुष्य आपसमें झगड़ा करके अेक-दूसरेसे खींचतान या मारपीट करके नीचे दर्जेका मजा लेते हैं। अुसी तरहका मजा भोजनमें आग्रह करनेका माना जा सकता है। अिससे सच्चा आनन्द बिलकुल नहीं आता केवल अन्नका बिगाड़ होता है और आग्रहके वश होनेवालेका पेट बिगड़ता है। यहां आश्रममें हम कभी किसीसे आग्रह नहीं करते। अिसलिअे कोअी आग्रहकी प्रतीक्षा नहीं करता। सब अपनी भूखके अनुसार निःसंकोच मांग लेते हैं।

तब मनुष्यको शोभा देनेवाली भोजन-पद्धति कौनसी है? आश्रमकी हमारी पद्धतिमें अैसी क्या विशेषता है?

आप देखते हैं कि हम यहां अपनी सारी मण्डलीके साथ बैठकर भोजन करते हैं। जिसके मनमें आया वह भोजनालयमें घुस गया और छीना-झपटी करके खा लिया यह पद्धति पशुओंकी है। यों तो आप अकेले अेक कोनेमें छिपकर खा लें तो भी पेट भर जायगा। परन्तु केवल पेट भरनेसे हमें सच्ची तृप्ति कैसे होगी?

हमारे यहां भोजनका समय निश्चित किया हुआ है। घंटी बजाकर वह समय सब आश्रमवासियोंको सूचित किया जाता है। घंटी सुनकर सब अपने अपने कामोंसे निबटकर जल्दी भोजनालयमें पहुंच जाते हैं। कड़ाकेकी भूख लगी होनेके कारण भोजनालयकी तरफ आनेमें आनन्द होता है। परन्तु सब मित्र साथमें अमृत-भोजन करने बैठेंगे अिस विचारसे तो यहां आनेमें मन कुछ और ही प्रसन्नता अनुभव करता है। देर करेंगे तो दूसरे सब मित्रोंको तकलीफ होगी अिस विचारसे हममें से किसीको देर करना अच्छा नहीं लगता। भोजनके समय कोअी दिखाअी न दे तो सब मित्र अुसे याद करते हैं अुसकी राह देखते हैं अुसकी चिन्ता करते हैं।

भोजनालयमें व्यवस्थित बैठ जानेके बाद हमारे कुछ मिनट बड़ी परीक्षामें गुजरते हैं। परोसनेवाले चपलतासे परोसते हैं फिर भी सब वानगियां परोसनेमें कुछ समय तो लगेगा ही। अेक तो हमें घरमें अिस तरह लटकते बैठे रहनेकी आदत नहीं होती और फिर पेटमें भूख होती है। भूखके आगे हम लाचार हो जायं तब तो वह कुछ अनुचित दलीलें हमारे दिमागमें पैदा करती है, अिस तरह बैठे रहनेसे हमारा वक्त खराब होता है, हमारा खाना ठंडा हो जाता है वगैरा। कोअी सोचेगा यहांका नया और विचित्र भोजन तो जैसे-तैसे सहन कर लें परन्तु यह प्रतीक्षा करते रहना कैसे बरदाश्त हो सकता है? परन्तु नहीं हम अिस तरह धीरज नहीं खोयेंगे। सब आश्रमवासी अपना भोजन अेकसाथ आरम्भ कर सकें अिस आनन्दके लिअे हम धीरज रखेंगे। अिसमें समय तो जायगा परन्तु जब सारी चीजें परोसी जाने पर सब आश्रमवासी साथ मिलकर परमेश्वरकी प्रार्थना करेंगे और साथ भोजन शुरू करेंगे तब कितना आनन्द आयेगा? सचमुच अुस क्षण हमारे सारे धीरजका बदला मिल जायगा।

"खाते समय भी प्रार्थना करनी होगी? —किसीके मनमें शंका अुठेगी। "किसी बड़े महत्त्वके और गंभीर कार्यका आरम्भ प्रार्थनासे किया जाय यह तो समझमें

जा सकता है। लेकिन भोजन जैसे अेक मामूली कामके आरम्भमें प्रार्थना कैसी?"
परन्तु नहीं भोजनको हम अेक तुच्छ निकम्मा, सिर पर आ पड़ी आफत, किसी न किसी तरह पूरा कर डालने जैसा काम नहीं बनाना चाहते। जिस तरह हम सब साथ मिलकर पढ़ाअी करते हैं, साथ मिलकर सेवा करते हैं अुसी तरह साथ मिलकर अमृत-भोजन ग्रहण करते हैं। यह हमारा अेक गंभीर और महत्त्वपूर्ण कार्य ही है। अुससे हम शरीरका पोषण लेते हैं अितना ही नहीं साथ बैठकर भोजन करनेसे हमारे पारस्परिक प्रेम और मैत्रीको भी पोषण मिलता है। हमारी आत्माको अैसा बल मिलता है कि "हम अकेले नहीं हैं, समान भोजनसे समान विचारोंसे पोषित हमारा अेक मण्डल है, हम अपने देशके लिअे बड़े बड़े पराक्रम करेंगे। हमारा प्रार्थनाका मंत्र हमारी अिन भावनाओंको पोषण देनेवाला है।

हमारा भोजन सादा और सस्ता है, परन्तु वह हमारा अमृत-भोजन है। वह हमारे लिअे केवल भोजन नहीं है वह तो हमारी शिक्षा है। हमें आशा है कि अिसीमें से हमारे देशकी जनताके लिअे सर्वसामान्य राष्ट्रीय आहारकी खोज होगी।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

तीसरा विभाग

समय-पालनका धर्म

प्रवचन १२

आकाशका अमृत

मैं अमृत-भोजनकी बात कर रहा था अभी मेरे मनमें आया कि आपका ध्यान आकाशके अमृतकी ओर जल्दीसे जल्दी खींचूं। हम सब चाहते हैं कि देशमें सबको अैसा भोजन मिलने लगे जिसका अमृत कहकर वर्णन किया जा सके। परन्तु वह दिन कब आयेगा? अुसके लिअे हमारा महान प्रयत्न कब सफल होगा? परन्तु आकाशका अमृत तो रोज रातको बरसता ही रहता है। अुजियाली रातमें चंद्रमा अमृत बरसाता है और अंधेरी रातमें कोटि-कोटि तारागण अमृत बरसाते हैं। अुस अमृतसे पेट तो नहीं भरता परन्तु हमारी थकान अुतार कर वह हमें ताजगी और आनन्द प्रदान करता है। अुसे लूटनेकी किसीको मनाही नहीं है। जो लूटते नहीं वे अपनी लापरवाहीसे — अपनी भूलसे वह लाभ गंवाते हैं।

आप देखते हैं कि आश्रममें हम सब रातको अमृत बरसानेवाले आकाशके नीचे खुले चौकमें सोते हैं। शरीरमें कुछ व्याधि हो अथवा बरसात जैसी कोअी कुदरती रुकावट हो अुसके सिवा खुलेमें सोनेका आनंद खोनेके लिअे यहां कोअी भी तैयार नहीं है।

मैं देखा करता हूं कि नये आये हुअे मित्रोंमें से भी थोड़ेसे हमारी अमृतकी लूटमें रोज शरीक होने लगे हैं। शुरूमें तो आप घरमें अथवा चबूतरे पर बिस्तर करते हैं। बिस्तर करते समय आपके मनमें क्या विचार चलते होंगे सो बताअूं? अरर! बिलकुल खुलेमें तो कैसे सोया जाय? हाथ-पांव अकड़ जायं तो? आश्रमवाले सब पागल होते हैं, अैसा लोगोंका कहना गलत नहीं मालूम होता! ये सब लोग तो आदी हो गये हैं, अिसलिअे अिन्हें कुछ नहीं होता। पर मैं अुनकी नकल करने लगूं तो बीमार पड़ जाअूं। मुझे सर्दी लग जाय बुखार आ जाय मेरी हड्डी-हड्डी दुखने लगे। फिर बिस्तर करके आप दो घड़ी बातचीत करनेके लिअे सुरमें छोटी हुअी मण्डलीमें घूमने निकलते हैं। फर फर चलनेवाली हवा आपके अंग अंगमें गुदगुदी पैदा करती है। आपको पता नहीं चलता परन्तु आकाशके अमृतका आपको नशा चढ़ता है। अब बातें करके आप बिस्तर पर सोने जाते हैं तब बिस्तर आपको काटने लगता है। अैसा लगता है मानो घरकी मन्द हवा आपको जला रही है। सिरके अूपरका छप्पर आंखों पर बंधी हुअी पट्टीके समान लगने लगता है। और अन्तमें किसीकी छातीमें हिम्मत अिकट्ठी होती है। वह चुपचाप बिस्तर समेटकर अुठता है और चौकमें अच्छी जगह देखकर अपना बिस्तर लगा लेता है।

देर-सबेर सबको यह साहस हुअे बिना नहीं रहेगा। थोड़े दिनमें ही यह हालत हो जायगी कि कोअी आपको घरमें बांधकर रखे तो भी बंधे रहनेको आप तैयार

नहीं होंगे। आप अनुभवसे देखेंगे कि खुलेमें सोनेसे बीमार पड़ जानेकी मान्यता निरा भ्रम ही है। खुले मुलेमें — आकाशके अमृतमें — रातभर स्नान करनेसे आपको मीठी नींदका वह अनुभव होगा जो पहले कभी नहीं हुआ होगा। आपको लगेगा मानो आज तक आपने कभी सच्ची निद्राका आनंद ही नहीं।

आहार कितना ही विचारपूर्वक लें तो भी अकेले आहारसे ही हमारा स्वास्थ्य नहीं बनता। सूर्यकी धूप, खुली हवा आकाशसे बरसनेवाला अमृत ये सारे तत्त्व भी हमें बड़ी ताजगी और चेतना देनेवाले हैं। यह एक भ्रम है कि जिन तत्त्वोंसे मनुष्य बीमार होता है। हमारे पुराने लोग रोगी मनुष्यका अंधेरे और बन्द हवावाले मकानमें रखना अच्छा समझते हैं परन्तु सही बात इससे उल्टी है। ताजी हवा बीमारीको मिटानेमें मदद करती है और मनुष्य रोग-पीड़ित हो तब भी उसे आराम देती है। कुछ क्षय जैसे रोगसे पीड़ित रोगियोंको तो खुलेमें सोने और सूर्यस्नान करनेकी खास तौर पर सिफारिश की जाती है। इसलिये अमृतमें सोनेसे बीमार पड़ते हैं यह भ्रम मनसे बिलकुल निकाल देना चाहिये।

अच्छा है कि अभी गरमीका मौसम है। इस मौसममें किसीको ठंडक पानीसे स्नान करनेकी सिफारिश नहीं करनी पड़ती और रातको आकाशके मधुर अमृतमें सोनेकी भी सिफारिश नहीं करनी पड़ती। परन्तु हम मनुष्य विचित्र प्राणी हैं। हम लोगोंमें बहुतसे इतने नाजुक हो जाते हैं कि गरमीमें भी ठंडे पानीका स्नान सहन नहीं कर सकते। उन्हें गरमीकी मन्द मधुर हवामें भी रजाई ओढ़नेको चाहिये। ऐसी आदतवाले कोई भाई आपमें होंगे तो उनके शुरूके दो दिन जरा कठिन बीतेंगे। शायद सरदीका असर भी मालूम होगा। परन्तु इससे घबराइये नहीं। आदत डालकर जैसे चमड़ी इतनी कमजोर बनाई जा सकती है उसी प्रकार आदत डाल कर उसे मजबूत भी बनाया जा सकता है और बनाना चाहिये। आज गरमीकी अनुकूल हवामें आप इसकी शुरुआत करेंगे तो जाड़ा आने तक ठंडमें भी आकाशके नीचे सोने लायक हिम्मत और शक्ति आपमें आ जायगी।

आकाशके अमृतके प्रेमियोंको एक सूचना शुरूसे ही देना जरूरी है। खुलेमें सोयें तो एक पर एक कपड़े ओढ़कर और वह भी मुंह पर ओढ़कर अपना सोना बेकार न बनाइये। सोते समय कितना ओढ़ें, इसका ठीक विचार लोग नहीं करते और गुदड़ी पर गुदड़ी ओढ़कर चले जाते हैं। जाड़ेमें कुछ ओढ़ना पड़े यह ठीक है परन्तु हम यह दृष्टि भूल जाते हैं कि हमें अपनी चमड़ीकी सहन-शक्तिको कम नहीं होने देना चाहिये।

चमड़ीको तालीम द्वारा ऐसी बना लेना चाहिये कि मामूली ठंड हमें बुरी न लगे, बल्कि मीठी लगे। ठंड भी बहुत अधिक न हो तब बड़ा आरोग्यवर्धक होती है। ठंडक लगनेसे चमड़ी कैसी सिकुड़ती है? शरीरकी भीतरी गरमी कैसी बढ़ जाती है? नाक और मुंहसे कितनी गरम भाप निकलती है? सवारे गरमागरम लड्डू जैसा दौड़ने

लगता है? तन्दुरुस्त आदमीका क्या अिससे नुकसान होता है? नहीं अुसे तो यह सारा अनुभव आनन्द और अुत्साहप्रद ही लगता है। जरूरतसे ज्यादा ओढ़नकी आदत डालकर यह मीठा अनुभव खोना कितना बड़ा नुकसान है?

आश्रममें आकाशके अमृतका जो स्वाद हम भोगते हैं अुसकी कदर हमारे समाजमें किसीको नहीं यह कितने दुःखकी बात है? हां धरती-माताके पुत्रों — किसानों — को किसी हद तक अुसका लाभ जरूर मिलता है। परन्तु वह कुछ हद तक ही। क्योंकि वे अुसकी कीमत नहीं जानते। अुन्हें वर्षमें अनेक दिन रातको खेतोंमें सोने जाना पड़ता है। परन्तु अुस समय क्या अुनके मनमें यह अुल्लास होता है कि आज तो आनन्दकी रात्रि मनाने जा रहे हैं? बिलकुल नहीं। वे यही मानकर जाते हैं कि खेतीके रद्दी धंधेके कारण सिर पर आ पड़ी आफतको भोगे बिना छुटकारा नहीं है और वे घरमें बन्द होकर सोनेवालोंसे अपने मनमें ओर्ष्या करते हैं। अुनकी यह निश्चित मान्यता होती है कि सुखका सोना तो बन्द कमरेका ही है।

अिसलिअे वे खुले खेतमें सोते हैं तो भी अमृतको जहां तक संभव हो बिगाड़ देते हैं। खेतमें भी अैसा कोअी बन्द कोना या झोपड़ा ढूंढ़ निकालते हैं जहां हवा न लगे। फिर यह तो बगका स्थान ठहरा अिसे साफ-सुथरा रखनेकी क्या जरूरत? अुसमें कचरे-कूड़ेके सिवा पिस्सू, जूं आदि भी किलबिलाते होंगे। यहां क्या रोज सोना है जो अिन सबको स्वच्छ रखनेकी झंझट अुठाअी जाय? खाट रखी होगी तो वह भी टूटी हुअी और खटमलोंसे भरी होगी। और सोते समय वे बदबूदार गुदड़ी मुंह और सिर पर ओढ़ लेंगे खुले खेतमें सोने पर भी आकाशके अमृतके बजाय गुदड़ीकी गंधमें ही करवटें लेते रहेंगे! रातको भूलसे सिर खुल जाय तो आसपाससे दुर्गंधयुक्त हवा आयेगी क्योंकि स्थानके नजदीक ही टट्टी-पेशाब किया होगा। गांवमें भी जब दूर जानेकी जरूरत न समझी जाती हो तो यहां जंगलके निवासमें तो दूर जानेकी बात सूझे ही कैसे? अिस प्रकार आकाशी अमृतका रसायन जिन जिन शुभ तत्त्वोंसे बना है अुन सबको खेतमें सोने पर भी किसान गंवा देते हैं।

हां यह रसायन ही है। आकाशी अमृतमें अनेक जीवनदायी तत्त्वोंका मिश्रण होता है अिसीलिअे हम अुसे अमृत कहते हैं। अूपरसे आकाश चांदनी बरसाता है या तारे जगमगाते हैं नीचेसे धरती-माता गरमी देती है। खुली हवा किसी तरहकी रोकटोकके बिना हमारे अंगोंको गुदगुदा जाती है। मधुर शीतलता हमारे रोम-रोममें अुष्णताका संचार करती है। अिसके सिवा स्वच्छता भी अिस अमृतका अेक अत्यंत महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। हवा स्वच्छ होनी चाहिये। आकाश तो स्वच्छ होता ही है। नीचेकी जमीन भी हमें मेहनत करके आकाश जैसी ही स्वच्छ रखनी चाहिये। और हमारे अमृतका सबसे बड़ा तत्त्व है विशाल विशाल और विशाल आकाश। वह हमें कितना मानव देता है! कितना आसरा देता है! विशाल आकाशके नीचे सो रहे हों तब हमारे हृदयमें अैसा भाव रहता है कि हम सबसे अलग होकर अेक छोटीसी कोठरीमें बन्द नहीं हैं परन्तु विशाल पृथ्वीके पट पर अपने प्रियजनोंके साथ आनंदसे सोये हैं।

किसी खेत पर कहीं हमारे जैसे मनुष्योंके समूह सो रहे हैं, कहीं पशु सो रहे हैं, पेड़ पर घोंसलोंमें पक्षी सो रहे हैं। हम सब भाअी धरती-माताकी गोदमें आनन्दसे मीठी नींद ले रहे हैं और आकाश-पिता हम सबके सिर पर छत्ररूपमें जाग रहे हैं। अूपर बताये सब तत्त्व अेकत्र हों तभी आकाशका अमृत अुनमें से अुत्पन्न होता है।

आश्रममें अिस आकाशी अमृतके भोक्ता बन कर जब हम अपने गांवोंमें और घरोंमें जाते हैं, तब सचमुच हमारा दम घुटने लगता है। हम देखते हैं कि ये घर और गांव किन्हीं दूसरे ही सिद्धान्तोंसे बनाये गये हैं। अैसा लगता है मानो ये किसी सिद्धान्तसे बनाये गये हों कि जहां आकाश न दिखाअी दे, हवा न छुअे, प्रकाश न मिले वही घर अच्छा, वही गांव अच्छा है। गांवोंके लिअे चौड़े रास्ते और मुहल्लोंकी जरूरत नहीं मानी जाती। दरवाजे हों तो वे भी रातको बिलकुल बन्द कर दिये जाते हैं। आकाशी अमृतका आनन्द माननेवालोंका यहां दम घुटना स्वाभाविक है।

परन्तु *अिस दुःखसे घबरानेकी जरूरत नहीं। जैसे भी हों फिर भी ये हमारे* घर हैं। यही हमारे गांव हैं। हमारा दम घुटेगा तो भी हम अुनसे अूबकर भागेंगे नहीं। हमें सेवा तो अंतमें अुन्हीं गांवोंकी करनी है न? हमारी घुटनेवाली *आत्मा हमारी आंखें खोलेगी, हमारी बुद्धिको तेज करेगी और हमारे घरोंकी रचनामें* हवा और आकाशका अंश दाखिल किया जाय अिसकी हममें सूझ पैदा करेगी। गांवकी तंगीमें वृद्धि करना छोड़कर बाहर खेतमें निकल पड़नेकी हममें तड़प पैदा होगी।

खुलेमें सोनेसे बीमार पड़ेंगे यह भ्रम जब लोगोंके दिलोंसे मिट जायगा और अुन्हें भी हमारी तरह आकाशके अमृतका शौक लग जायगा, तब वे तंग गांवोंको छोड़ कर खेतोंमें जाकर घर बनायेंगे और वे घर आजसे बिलकुल भिन्न प्रकारके होंगे।

अिसलिअे आश्रमसे घर जानेका मौका आने पर कोअी जरा भी घबराये नहीं। आपको आकाशी अमृतका जो शौक लगा है अुसकी लगन दूसरोंको लगानी है अिस विचारसे दुगुने अुत्साहके साथ वहां जाअिये। आजके आज मकान गिरा देने या गांव *बसा देनेकी जरूरत नहीं परन्तु अितना तो आज ही करना — बगलमें बिस्तर दबाकर* खेतमें सोने निकल पड़ना और अपने साथ घरके बच्चों और मुहल्लेके मित्रोंको भी समझाकर ले जाना।

आश्रम-माताकी प्रभाती

कल वैशाखी पूर्णिमा अर्थात् बुद्ध भगवानकी जयंती है। आप सब सहमत हों तो कल सवेरे हम सदासे आध घंटे पहले जागेंगे। रोज हम जागकर तुरत प्रार्थना करते हैं परन्तु कल नहा-धोकर पवित्र होकर प्रार्थनाके लिअे अेकत्र होंगे। और अुस समय बुद्ध चरित्र गायेंगे। अिससे बड़ा आनन्द आयेगा। रोज हमें अपना समय-पालक साथी घंटा जगाता है। कल हम अधिक काव्यमय ढंगसे जागेंगे। हमारी भजन-मंडली अपने तंबूरों और मंजीरोंके साथ प्रभात-फेरी निकालेगी और अपने मनोहर भजनोंसे हमारी नींद छुड़ायगी। अलबत्ता कल तो हम भी सावधान ही रहेंगे। अिसलिअे वे आकर हमें जगायें तब तक हम बिस्तरमें कैसे पड़े रहेंगे। अुनके आनेसे पहले ही हम जाग गये होंगे और भजन-मंडलीमें शरीक होकर दूसरोंको जगानेका सौभाग्य प्राप्त कर रहे होंगे।

असलमें कल भजन-मंडलीके लिअे किसीकी नींद छुड़ानेका काम शायद ही बाकी रहेगा क्योंकि हमारी सारी संस्था ही जल्दी अुठकर भजन-मंडली बन गयी होगी। हम सब मिलकर हमारी आश्रम-भूमिको जगायेंगे हमारे आश्रम-वृक्षोंको जगायेंगे अुन पर घोंसले बनाकर बसनेवाले पक्षियोंको जगायेंगे। रोज ये पक्षी हमें जगाते हैं कल अुनसे पहले जागकर हम अुन्हें जगाना चाहते हैं।

दूर गांवके भीतर और आसपासके खेतोंमें लोग सो रहे होंगे। अुनकी मीठी नींदमें हमारे भजनोंके सुर पहुंचेंगे। वे अुन्हें क्षण भरके लिअे जगायेंगे और दूसरे क्षण कुछ और सोते रहनेके लिअे ललचायेंगे। दूरके संगीतमें सचमुच अेक प्रकारका नशा होता है। अुसकी झनकार अितनी तीव्र नहीं होती कि मनुष्यको बिस्तरेसे खींच ले फिर भी अितनी मोहक तो अवश्य होती है कि अुसे सुनकर डोलनेका मन हो जाय। अुसके नशेमें मनुष्य क्षणभर स्वप्नावस्थाकी मधुर लहरका अनुभव करता है। हम कल सवेरे अपने पड़ोसियोंको अिस लहरका स्वाद चखायेंगे।

प्रतिदिन जल्दी जागनेवाले हम लोग पवित्र पवका दिन जरा और जल्दी जागकर ही आरंभ करेंगे। जल्दी जागनेका भी अेक शौक होता है। दूसरे शौकों जैसा वह मीठा और मुलायम नहीं होता परन्तु कुछ कड़वा और कठोर होता है। परन्तु तालीमसे वह बढ़ाया जा सकता है। हम आश्रममें अुसे प्रयत्नपूर्वक बढ़ा रहे हैं। आदत पड़नेके बाद ही ब्राह्म-मुहूर्तकी जागृतिकी मिठास समझमें आती है।

अिस गुलाबी बेलाकी नींदमें भी मिठास तो मालूम होती है परन्तु नींदकी मिठास व्यसनीके व्यसनकी तरह है। वह हमारे लिअे त्याज्य है वह हमें पुसा नहीं सकती। अुसका स्वाद ऐसे जायं तो हम अपना अमूल्य ब्राह्म-मुहूर्त गंवा देंगे, अितना ही नहीं हमारा सारा दिन शिथिल और सुस्त बन जायगा। हम आनन्दके भोक्ता हैं

परन्तु आलस्यसे मिलनेवाले आनन्दके नहीं। परिश्रमके परिणाम-स्वरूप मिलनेवाला आनन्द ही हमें प्रिय है, जागृतिके फलस्वरूप मिलनेवाली चेतनाकी लहर ही हमें प्रिय है।

जल्दी अुठनेकी सुन्दर आदत डालना बलवर्धक कसरतके जैसी है। कसरत शुरू करनेवालेकी हड्डियां थोड़े दिन दुखेंगी, अुसे अरुचि भी होगी, परन्तु भविष्यमें मिलनेवाले फलका ध्यान रखकर वह कसरत करता रहेगा तो अुसका शरीर बलवान बन जायगा। अुसके बाद ही वह सच्चा अूंचे प्रकारका सुख भोगेगा, जो कसरत करके बलवान मनुष्य ही भोग सकता है।

जल्दी जागनेवालेको शुरू शुरूमें बिस्तर छोड़ना सिरके घाव जैसा दुःखदायी लगता। थोड़े दिन तो अधूरी रही नींद अुसके सारे दिनको बिगाड़ती मालूम होगी। वह जल्दी जागकर प्रार्थनामें बैठेगा तो वहां अुसे नींदके झोंके आयेंगे, दिनमें अुद्योग या अभ्यास करते समय भी लेटनेकी जीमें आती रहेगी। अुसकी समझमें ही नहीं आयगा कि दूसरोंको मीठी नींद छोड़कर जल्दी जागनेमें अैसा क्या मजा आता होगा।

आश्रममें से बहुतोंकी स्थिति आजकल अैसी तरहकी है न? मैं जल्दी जागनेके शौककी जो बात कह रहा हूं, वह आपको अन्दरकी नहीं परन्तु बाहरकी ही बात लगती होगी। आप सूक्ष्म दृष्टिसे अवलोकन करेंगे तो आपको पता चल जायगा कि आश्रममें अभी तक सबको यह शौक पूरी तरह नहीं लगा है। जिसे यह शौक लग जाता है, अुसके चेहरेकी प्रसन्नता ही कुछ और होती है। वह छिपी रहती ही नहीं। वह आपको आज भी बहुतोंके मुंह पर कदाचित् देखनेको नहीं मिलेगी। आश्रमका आग्रह होनेके कारण वे जागते जरूर हैं, परन्तु अुनके चेहरे पर प्रसन्नताके बजाय अेक प्रकारकी अुदासी फैली हुई आप देखेंगे। आप यह भी देखेंगे कि वे जंभाअियोंको दबानेकी बहुत कोशिश करते हैं, परन्तु दबा नहीं पाते। कुछ लोगोंको प्रार्थनाके बाद नींदका दूसरा पारायण करते हुअे भी आप पकड़ लेंगे। यह बात सही है कि जल्दी जागनेका शौक हम सब अेकसा नहीं बढ़ा सकते। अुसे बढ़ाना बड़ा मुश्किल है। फिर भी हमारे आश्रमका आग्रह है कि यह मुश्किल शौक बढ़ाना ही चाहिये। आप सब अुसे बढ़ानेमें हमारे साथ किस तरीकेसे हों, यह निर्णय मैं आपको देता हूं।

तक आश्रममें रहें फिर भी वे ही जंभाभियां नींदके वे ही झोंके और वे ही नींदके दूसरे पारायण कायम रहेंगे।

अिसलिअ कोअी यह न मान ले कि जहां पुराने पुराने जोगी भी जमाअियां लेते हैं वहां हमारी क्या बिसात है? अुनकी जंभाअियोंके बावजूद आश्रमका यह आग्रह नवजीवन देनवाला है और हम सबके अपना लेने जैसा है।

हमें जल्दी जागनेकी आदत डालनी है परन्तु कोअी यह न मान ले कि शरीरको पूरी नींद नहीं देनी है। स्वस्थ मनुष्यके शरीरको ७ से ८ घंटेकी नींद मिलना चाहिये और वह हमें अपने शरीरको देनी ही है। हमारा जितना आग्रह जल्दी जागनेका है अुतना ही आग्रह पूरी नींद लेनेका भी है। जैसे हमारा सवेरे जल्दी अुठनेका आग्रह है वसे रातको देर तक न जागनेका भी आग्रह है होना ही चाहिये। हमारे आश्रममें रातको सोनेकी घंटी बजनेके बाद शोर करना हमारा अपना और हमारे सब आश्रम वासियोंका भी द्रोह करनके समान माना जाता है।

जो यह विचार नहीं करते कि जीवनका सच्चा आनन्द क्या है, वे रातको देर तक जागकर गपशप लगाते हैं और अुसमें आनंद मनाते हैं। अिष्ट-मित्रोंके साथ आरामसे बातचीत और हंसी-मजाक करनेमें आनन्द जरूर है और वह हमें भी चाहिये। परन्तु हम अुसमें सन्तुलन रखना चाहते हैं। दूध जैसी सुपाच्य वस्तु भी मर्यादासे ज्यादा पियें तो हानिकारक सिद्ध होगी। बातचीत और हंसी-मजाककी मात्राको मर्यादामें रखनेसे ही अुसमें मिठास और संतोषका अनुभव होता है। अुसकी मात्राको मर्यादामें रखकर हम जल्दी जागनेका आनन्द भोगना चाहते हैं क्योंकि अुसे हम अधिक अूंचा आनन्द मानते हैं।

हमारा यह दूसरा आग्रह न जाननेके कारण लोगोंका आश्रमके बारेमें कुछ अैसी कल्पना है कि यहांका जीवन अत्यन्त कठोर और कष्टमय होता है। अुन्हें हम पर दया आती है — अरेरे, बेचारे आश्रमवासी! अुन्हें जल्दी जागना पड़ता है! अैसे जीवनमें बचारे अवाम लोगोंके शरीर कसे काम दे सकते हैं? बेचारे बीमार पड़ बिना कसे रह सकते हैं? दयाके अुभारमें व हमें दुर्बल और बीमार मान लेते हैं और हम सचमुच हट्टेकट्टे और चपल हों तो भी वे यह देखनको तैयार नहीं होते।

"परन्तु जल्दी जागनसे फायदा क्या? कोअी कहेगा हम अपनी कुल नींद आठ घंटसे ज्यादा नहीं होने देंगे। फिर हम जल्दी सोकर जल्दी अुठें या देरसे सोकर देरसे अुठें अुसमें क्या फर्क पड़ जायगा? अथवा रातको खूब जागकर दिनकी नींदकी कमी पूरी कर लें तो क्या अंतर पड़ जायगा? अपना जीवन आलसी बनने दें तब तो हम आपकी आलोचनाके पात्र जरूर होंगे परन्तु अैसा न होने दें तब तक जल्दी अुठनेका आग्रह किसलिअे ?"

अिस तरह तर्क करनवालोंको हमारा आग्रह समझाना आसान नहीं यह मैं स्वीकार करता हूं। अपना जीवन आरम्भमें न बितानेका और जागृतिका सारा समय

विचारपूर्वक बितानेका आश्वासन दिया जाय तो हमारा मुंह जरूर बन्द हो जाता है। परन्तु साधारण अनुभव यह है कि जो लोग अैसा आश्वासन देते हैं अुनमें से बहुत कम अुसका पालन कर पाते हैं। जो रातको देर तक जागते हैं वे रातका वह समय विचारपूर्वक बिताते हों अैसा अधिकतर देखा नहीं जाता। ज्यादातर तो वह समय खाने-पीनेमें, ताश वगैरा खेलोंमें, निरर्थक गपशपमें और नाटक-तमाशोंमें खपा जाता है।

किसीके सिर पर चिन्ता सवार हो गयी हो — जैसी कि विद्यार्थियोंके सिर पर परीक्षाकी तैयारी करनेकी होती है, तब वे अक्सर रातको देर तक पुस्तकें लेकर पढ़ाओमें लगे रहते हैं। परन्तु दिनभरकी थकावटके बाद पहली रातका समय किसी भी गंभीर अुद्योगके लिओ कभी अनुकूल नहीं होता। रातभर मीठी नींद लेकर सुबह जल्दी अुठें, तो अुस समयकी ताजगी कुछ और ही होती है। अुस समय किया गया अुद्योग अधिक सफल होता है। अुद्योगमें हमें आनन्द भी अधिक आता है। प्रातःकालके ताजगीवाले समयके साथ शामके थकावटसे भरे समयकी तुलना ही नहीं हो सकती।

और रातको देर तक जागनेवाले अिसका ध्यान नहीं रखते कि कितने बजे तक जागा जाय। अुस समय वे ध्यान रखने जितने गंभीर हों तभी तो ध्यान रखें? परिणाम-स्वरूप सुबहका कीमती समय वे सोकर गंवाते हैं। अितना ही नहीं, दिनमें भी अुन्हें अपना बहुतसा समय नींद और आलस्यमें ही बिताना पड़ता है। जल्दी जागनेवालोंके लिओ तो प्रातःकालका समय आलस्यमें बिताना संभव ही नहीं है। यह समय ही अितना मधुर और गंभीर होता है कि अुसे गपशपमें बिताया ही नहीं जा सकता। हमारे शरीर और मन अुस समय अितने ताजे होते हैं कि वे हमसे अुद्योग मांग ही लेते हैं। हम स्वेच्छासे जागते हैं, हेतुपूर्वक जागते हैं, अिसलिओ अुस समयका काम हमारे लिओ तैयार ही रहता है। हम पहलेसे दिन अुसका विचार कर चुके होते हैं। जैसे प्रातःकालके घंटे बरबाद कर देना लगभग असंभव है, अुसी प्रकार रातके घंटे गंभीर काममें बिताना भी लगभग असंभव है। रातमें देर तक जागनेवालों तथा प्रातःकाल जल्दी जागनेवालोंके अनुभवोंकी तुलना करेंगे तो अुससे यही सार निकलेगा।

हम सेवक बनना चाहते हैं। हमारे लिओ जल्दी जागनेवालोंका मार्ग ही कल्याण-कारी है। जो लोग सूर्यनारायणके अुदयसे पहले जाग्रत होकर अुनका स्वागत करनेको तैयार हो जाते हैं, अुनकी मंडलीमें ही मिलना हमें प्रिय है।

हमारा देश सूरज जल्दी जागनेवाला है। हमारी आबहवा ही अैसी है कि जिसकी अिच्छा न हो अुसे भी अुसमें जल्दी अुठनेका शौक लग जायगा। प्रभातकालकी हवा दुनियाके सब देशोंमें रम्य होती है, परन्तु हमारे देशमें अुसकी रम्यता निराली ही होती है। हमारा शरीर, हमारा मन, हमारी आत्मा अुस सुहावनी हवामें मानो नाच अुठती है। काम करनेवालोंको अुस समय काम करनेमें मानो कोओ श्रम ही नहीं होता, केवल आनन्द ही आनन्द होता है। चार यार करनेवालोंके पास मानो

सूपमें शक्करकी तरह अुनकी स्मृतिमें अेकरस हो जाते हैं। वे ही काम और वे ही पाठ दोपहरकी धूप चढ़ जाने पर हमें तिगुने भारी मालूम होते हैं।

आजकल हमारे देशबंधुओंके आचरणमें अत्यन्त शिथिलता आ गओी मालूम होती है। सभ्य कहे जानेवाले लोग 'सूर्यवंशी' बन गये हैं। क्या अैसा नहीं लगता कि अुनका व्यवहार हमारी आबहवाके विपरीत है? वह हमारे आम लोगोंके स्वभावके भी विरुद्ध है। हमारे मेहनतकश पुरुषों और स्त्रियोंके जीवन देखें तो आज भी वे हमारी प्रजाका सच्चा स्वभाव प्रगट कर रहे हैं। हमारे किसानोंके घर और आम तौर पर गांवोंके सब लोगोंके घर आज भी प्रातःकालमें ही अैसे गूंज अुठते हैं! चक्की पीसना छाछ बिलोना पानीके बरतन मांजना हल-बैल-गाड़ियां तैयार करना गायोंको दुहना गायोंके दूध चराने ले जाना वगैरा काम वहां सबेरेसे ही अैसे होते रहते हैं और नरसिंह मेहताकी प्रभातियोंके साथ ताल मिलाते रहते हैं।

ब्राह्म-मुहूर्तमें जागकर आत्मविद्याकी अुपासना करनेवाले हमारे प्राचीन कालके ऋषि-मुनियोंने यह प्रणाली डाली है और सब युगोंके महापुरुषोंने अिस प्रणालीको अपने जीवनमें अुतारा है। आज देखें तो पूज्य गांधीजी ब्राह्म-मुहूर्तमें प्रार्थना करनेके कितने आग्रही हैं यह हम सब जानते हैं। परन्तु बहुत लोगोंको पता नहीं होगा कि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ जैसे रसिक कविवर ब्राह्म-मुहूर्तके रसिया थे और अुनके अधिकतर गीत अिस पवित्र वेलाकी ही प्रसादी हैं। यह प्रणाली हमारे लोगोंका स्वभाव ही बन गओी है। जल्दी जागनके विषयमें हमारे मनमें अमसिद्ध आदर होता है। अुसके पक्षमें कोओी तर्क ढूंढनेकी हमें जिज्ञासा ही नहीं होती। गाली देना या स्त्रीको पीटना जैसे समाजमें नीच काम समझा जाता है वैसे ही हमारे देशमें देर तक सोना भी अनादरकी वस्तु मानी जाती है।

आप जानते हैं कि हमारे आश्रमके जीवनको दूरसे देखकर लोग भड़कते हैं और कठोर, शुष्क और नीरस कहकर अुसकी आलोचना करते हैं। फिर भी म आपको विश्वास दिलाता हूं कि जिन्हीं लोगोंको हमारे अैसे कठोर जीवनके लिअे आदर होता है। यदि हम सब जल्दी न जागें देर तक सोते रहें आलस्य और गप्पोंमें और ताशपत्ते खेलनेमें दिन और रातका बड़ा भाग बिताते हों और अैश-आराम करते हों तो वे ही लोग हमें नालायक कहकर हमारी निन्दा किये बिना नहीं रहेंगे। कदाचित् हमें पत्थर भी मारें और आश्रममें से कान पकड़कर निकाल भी दें! सेवकके रूपमें हमारी कीमत कौड़ीकी हो जाय।

ब्राह्म-मुहूर्तमें जागनेकी आश्रमकी भावना आज मैंने आपके सामने रख दी है। कौशल्या माता रघुनाथ कुंअरको जगानेके लिअे जो प्रभाती गाती थीं वही हम प्रार्थनामें कभी-कभी गाते हैं

"जागिये रघुनाथ कुंअर, पंछी बन बोले।
चंद्रकिरण शीतल भओी चकओी पिय मिलन गओी
त्रिविध मन्द चलत पवन पल्लव द्रुम डोले। — जागिये।"

यशोदा माता भी सुन्दर श्यामको मीठे प्रभात रागसे खुश करके कैसे जगाती थीं?

"तुम जागो मोहन प्यारे,
सांवरी सूरत तेरी मन भावे,
सुन्दर श्याम हमारे।"

ये दैवी मातायें क्या अपने दिव्य बालकोंको दुःखी करना चाहती थीं? कभी नहीं। न यह मानती ही नहीं थी कि बच्चे जल्दी जागनेसे दुःखी होते हैं। उन्हें अपने बालकोंको असी शिक्षा देनेका उत्साह और उमंग रहती थी जिससे उनके बच्चे जल्दी जागकर आनन्द-कल्लोल करें, अच्छे अच्छे काम करें, गायोंके साथ जंगल और पहाड़ोंमें घूमकर साहसी और स्नेहशील बनें बड़े होकर पराक्रम करें, और जगतका उद्धार करें। हमारी आश्रम माता भी हम सोते रह कर आलसी और शिथिल जीवन व्यतीत करें तो खुश नहीं होती। उसकी यही अभिलाषा है कि हम जल्दी जागने वाले तपोमय जीवन बितानेवाले और समाजके पीछे सदा तत्पर रहनेवाले सेवक बनें।

आश्रम-माताकी यह प्रभाती मैंने आज शामको सुनाई है। प्रभाती आपको पसंद आ गयी होगी तो सोनेके समय हाथ ही तुरंत हमारे मनोरंजन छोड़कर आप सोनेकी सावधानी जरूर रखेंगे। और प्रभातीकी तरह आश्रम-माताकी लोरी गानेकी जरूरत नहीं पड़ेगी।

प्रवचन १४

परम अुपकारी घंटी

लोग देवी-देवताओंके स्तोत्र गाते हैं। आज हम घंटीका स्तोत्र गायेंगे। वह देवता नहीं, परन्तु हमारा परम अुपकारी मित्र है। वह हमेशा हर अक काममें हमसे पांच मिनट पहले तैयार हो जाती है। हमारे सामने चार बजकर हमें हंसाती हुअी अपने पीछे घुमाती है। वह हमारी दिनभरकी साथिन है। ब्राह्म-मुहूर्तमें हमें जगाती है तबसे वह हमारे साथ रहती है और कामकाजमें, उद्योगमें विद्याभ्यासमें, खानपानमें भोजनमें प्रार्थनाओंमें — सभी कार्यक्रमोंमें हमारे साथ रहकर अन्तमें हमें मीठी नींदकी गोदमें सौंपनेके बाद ही शांति लेती है।

अिस घंटी जैसी अचूक और विश्वासपात्र साथिन हमें और कौन मिलेगी? सूर्य जितने अचूक ढंगसे उदय और अस्तके समयका पालन करता है अुतनी ही अचूक बनकर हमारी घंटी हमारे प्रत्येक समयका पालन करती है। अिस मामलेमें वह सूर्यकी बोलती हुअी बहन ही है। सूर्य तो हमें बड़े बड़े समय ही बताता है — सूर्योदय संध्याकाल, मध्याह्न आदि समय ही बताता है। परन्तु यह अुसकी बहन तो हमें अपने अलग अलग समय-खंड भी सूचित कर सकती है। और हमारी सूर्यकी बहन तो बोलती भी है। तेज अवाजसे वह गूंज अुठती है। और जब हम अपने कामोंमें तल्लीन होते हैं तब टनटनकी आवाज करके हमें जगा देती है और आगेके कार्यक्रमकी याद

दिखाती है। वह पूरी तरह विश्वासपात्र है। सारी चिन्ता अुसे सौंपकर हम निश्चिन्त हो जाते हैं और अपने हाथका काम करते रहते हैं हमारे मनमें पक्का विश्वास रहता है कि दूसरे कामका समय होगा तब हमारी विश्वासपात्र घटी हमें जरूर सचेत कर देगी। अुसके भरोसे रहकर हम अपना अन्तिम क्षण भी काममें लगा सकते हैं।

यह घंटीका स्तोत्र है परन्तु वास्तवमें वह हमारे आश्रमके समय-पालनके आग्रहका समय-पालनके व्रतका ही स्तोत्र है। अपने यहां हम चौबीसों घटका समय पत्रक बनाते हैं और व्रत जैसी धार्मिकतासे अुसके अनुसार चलते हैं।

घटी बजानेकी जिम्मेदारी जिसके हिस्सेमें हाती है, वह आश्रमका यह व्रत जानता है। वह अपनी जिम्मेदारीके भानसे सदा जाग्रत रहता है और जो समय जिस कामके लिये होता है अुस समय घटी अचूक रूपमें बजाता ही है। घटी अपना समय चूके अथवा अेक मिनट भी देरसे बजे अैसा हमारे यहां क्वचित् ही होता है। नये मित्रोंके हिस्सेमें भी यह जिम्मेदारीका काम कभी न कभी आयेगा। बेशक यह बड़ी चिन्ताका काम है। परन्तु हमारा यह समय-पालनका आग्रह आपकी रग रगमें अुतर जायगा तो फिर आपको चिन्ताका भार नहीं लगेगा। अपने मनमें यह विचार जाग्रत रखिये कि यदि मैं घंटीका समय चूकूंगा तो सारे आश्रमवासियोंको असुविधा होगी और सब कामोंमें गड़बड़ी पैदा होगी। बस फिर घंटीका समय चूकना आपके लिअे असंभव हो जायगा और अपना फर्ज अचूक ढंगसे पूरा करनेमें आपका अुत्साह बढ़ेगा। परंतु यदि आश्रमका आग्रह आपकी रगोंमें नहीं अुतरेगा और आप जिस तरह बिलकुल हलके मनसे काम करेंगे कि दो मिनट देर-सवेर भी हो गअी तो क्या बिगड़ जायगा? यहां क्या किसीकी गाड़ी चूकनेवाली है? तो अेक भी समयका निश्चित रूपसे पालन करना आपके लिअे असंभव हो जायगा। और जिस कड़ कर्तव्यकी चिन्ताका भार आपको अितना लगेगा कि अेक सप्ताहमें तो आप सूख जायंगे!

अिस संबंधमें आपका अेक अन्य दिशाकी चेतावनी देनेकी जरूरत है। यह संभव है कि अति अुत्साही मित्र समय न चूकनेकी अुत्सुकतामें अेक दो मिनट जल्दी घटी बजा दें। घड़ीकी सुअी दो मिनट पीछे होगी तो यह अुनकी आंखको दिखाअी ही नहीं देगा अथवा अति अुत्साहमें वे अपने मनमें गलत अन्दाज लगा लेंगे कि घड़ीके पाससे घंटी तक पहुंचूंगा अितनेमें दो मिनट हो ही जायेंगे। परन्तु दो मिनट तो अेक फर्लांगका अन्तर काटने जितना समय है जब कि घड़ी और घंटेके बीच तो पूरे ५ सेकंडका भी अन्तर नहीं है। अिस प्रकार घंटी जल्दी बज जाय — भले वह बहुत ही थोड़ी मिनट आधी मिनट ही जल्दी हो — तो भी अुसमें हमारे व्रतका भंग होगा। क्योंकि हमारे हाथके चालू काम अुनका अेक मिनट भी छीन लिया जाय तो अुसके विरुद्ध आवाज अुठाये बिना नहीं रहेंगे। हम सब ग्रामसेवक बनना चाहते हैं और गांवोंकी जनताके लिअे प्रेम रखते हैं। परन्तु वे जिस तरह गाड़ीके समयसे घंटे दो घंटे पहले स्टेशन पर जाकर बैठते हैं वैसा करनेको हम तैयार नहीं हैं! हमें प्रत्येक कामको अुसका निश्चित समय पूरी तरह देना है न किसीका अेक मिनट

छीनता है और न किसीको अक मिनट अधिक देता है। आश्रममें हम प्रत्येक काम निश्चित समय पर ही शुरू करनेका आग्रह क्यों रखते हैं यह सब आप समझ गये होंगे। हमारी प्रार्थनाअें बिलकुल निश्चित समय पर ही शुरू होंगी। गाड़ी जल्दी या देरसे रवाना नहीं होगी अिसका हम सबको भरोसा होता है। अिसलिअे हम सब जल्दी आकर नहीं बैठते और न आनेमें देर ही करते हैं। हम समयकी रक्षा करते हैं और समय हमारी रक्षा करता है।

आश्रमकी घंटी तो अपने समय पर अचूक रूपमें बजती है। परन्तु क्या हम आश्रमवासी अुन टकोरोंसे सूचित होनेवाली प्रवृत्तियोंमें अचूक रूपसे लग पाते हैं? वास्तविक महत्वकी बात यही है। घंटीका महत्व अिसीमें है कि हम अुसका आदर करें। यह बजती रहे और हम समय पर अुस कार्यमें अुपस्थित न हों तो वह किस कामकी? बाहरसे सुननेवालेके मनमें अिससे आश्रमकी अिज्जत जरूर बढ़ेगी। वाह, आश्रमकी घंटी कैसी अचूक बजती है! अिस तरह वे हमारी तारीफ करेंगे। अुसकी आवाज पर आधार रखकर भावुक किसान जागेंगे और खेतोंमें जायेंगे, ग्वाला गायोंके झुण्डको हांकेगा और वापिस लायेगा। परन्तु हम तो जहांके वहीं रहेंगे। घंटी प्रार्थनाका समय वफादारीसे बतायगी परन्तु प्रार्थनाका चौक तो खाली ही रहेगा। कुछ लोग श्लोक-पाठके बीचमें आयेंगे कुछ भजनके बीचमें और कोअी कोअी तो ॐ पूर्णके समय आयेंगे। भोजनका समय घंटी तो बराबर बतायेगी परन्तु हमारी शरीरके भीतरकी घंटी अुसे सुनकर बज न अुठे और प्रत्येक व्यक्ति अपनी अिच्छाके अनुसार दो चार या दस मिनट जल्दी या देरसे भोजनशालामें पहुंचे तो सबका समय खराब होगा, भोजनशाला अव्यवस्थित होगी और अुसके कार्यकर्ताओंको बड़ी परेशानी होगी।

समयके पालनका आश्रममें हम अितना आग्रह क्यों रखते हैं? समय हमारा मूल्यवान धन है। धनिक बापका मूर्ख बेटा जैसे व्यसन, दुराचार और कुसंगतिमें अपना धन अुड़ा देता है वैसे हम अपना समय-धन अुड़ाना नहीं चाहते। बढ़िया धनिकोंकी तरह हमें अपने समय-धनका सदुपयोग करना है। अुसका हिसाब रखना है। सच्चा धनिक पाअीको भी तुच्छ समझकर खर्च कभी नहीं करेगा। पाअी भले छोटी हो परन्तु पाअी पाअी जमा होकर ही तो रुपया बनता है न? पाअीकी लापरवाही करनेवाला आम चलकर रुपयेकी तरफ भी लापरवाह बन जाता है। हमारा अमूल्य आयुधन भी क्षण क्षणका बना हुआ है। हम क्षणोंकी रक्षा करेंगे तो हमारे घड़ी और दिनोंकी रक्षा हो जायगी। क्षणोंको तुच्छ मानकर बिगाड़ेंगे तो हमें अुतावलेपन और लापरवाहीकी बुरी आदत पड़ जायगी और अन्तमें हमारे महीने और वर्ष मिट्टीमें मिल जायेंगे। यह विचार तुम अपने मनमें अुतार लेना चाहते हो। अिसीलिअे हमने आजकी घंटीका चौबीस घंटेका क्रम व्यवस्थित कर दिया है।

मैं जानता हूं कि हमारे समाजमें समय-पालनका आग्रह बहुत ही कम है। निकम्मी बातोंमें बेकार गप्पोंमें घंटों बिता दें पर भी किसीको अैसा नहीं लगता कि कोअी बड़ी हानि हो गअी। गुजरने वाले काम तक क्या क्या करना है अिसका समय-पालक

वे नहीं बनाते। जैसे कागजका टुकड़ा हवामें चाहे जहां मुड़ता रहता है वैसे ही वे भी प्रवृत्ति जहां खींच ले जाय वहीं खिंचते रहते हैं।

आप भी यहां समय समय पर बजनेवाले घण्टीके टकोरोंसे चार दिन तो शायद बहुत परेशान रहेंगे। आपको समय-पालनका विचार पसंद आ गया हो तो भी आपके शरीरको असे बरदाश्त करना भारी जान पड़ेगा। आपको भूख लगी होगी तो भी घण्टी सुनकर दौड़े दौड़े भोजनालयमें पहुंच जाना चाहिये यह कल्पना ही आपको दस मनके बोझकी तरह लगेगी। क्षणभर तो आपको यह खयाल होगा कि जिससे भूखे रहना अच्छा है। परन्तु जैसे-जैसे आश्रमका समय-पालनका आग्रह आपके खूनमें मिलता जायगा असमें आपको आनन्द आता जायगा वैसे-वैसे यह स्थिति बदलती जायगी। घण्टीकी आवाज सुनकर हम पर अैसा अुलटा असर नहीं होता। हमारी भूख तो अिस आवाजसे ही जाग्रत होती है मुंहमें पानी आने लगता है और पैर आनन्दसे भोजनालयकी तरफ दौड़ने लगते हैं। आपको भी थोड़े दिनोंमें अैसा ही अनुभव होने लगेगा। आपको भी यह असह्य लगेगा कि आपका अेक क्षण भी बेकार जाय अितना ही नहीं आपकी ढिलाईसे यदि आपके साथियोंको परेशान होना पड़े तो आपको बड़ी शर्म मालूम होने लगेगी। आपको भी समय-पत्रक बनाये बिना कोअी दिन बिताना असह्य लगेगा। आपको भी गपशपमें कीमती समय बरबाद करना असह्य मालूम होगा।

प्रवचन १५

समय-पत्रक

कल मैंने आपके सामने हमारी अुपकारी घण्टीका स्तोत्र गाकर सुनाया था। अुस परसे आपने अितना सार समझ लिया होगा कि प्रत्येक संस्था और प्रत्येक व्यक्तिको अपने लिअे आवश्यकतानुसार समय-पत्रक बनाना चाहिये।

समय-पत्रक बनाना अेक कला है। यदि यह बनाना आता हो तो हमें पता भी नहीं चलेगा कि हमारा दिन आनन्द-अुद्योगमें कब बीत गया। परन्तु जिसकी कला न आती हो तो वह हमारे दिनको अितना बोझिल बना देगा मानो हमारे सिर पर दस मनका पत्थर रखा हो।

हमारे यहांका समय-पत्रक आप देखेंगे तो पता चलेगा कि अुसमें हमारी सब जरूरतोंको सम्मानपूर्वक स्थान दिया गया है। आप देखते हैं कि जैसे अुसमें अुद्योग और विद्याभ्यासको जगह दी गअी है वैसे ही नहाने धोने खाने वगैराको भी पर्याप्त स्थान दिया गया है। लोगोंकी कल्पना होती है कि आश्रममें खेलकूद और आनंद-कल्लोल नहीं होगा मगर हमारी तो यह खुराक है। अुसका समय तय करनेमें हमने जरा भी कंजूसी नहीं की है। प्रार्थनाओं और भजनोंको आम लोग अपने जीवनमें स्थान नहीं देते। परन्तु अुसके लिअे अुदारतासे समय रखकर हम हृदयकी गहरी शान्ति प्राप्त करते हैं। हमारी अेक भी भूख अतृप्त रह जाय अैसी कोअी कमी हमने अपने समय-पत्रकमें रहने नहीं दी है।

लिये हमें असके पास बैठनकी आवश्यकता है। और वही समय समय-पत्रकके अनुसार प्रार्थनाका अथवा यज्ञकी कताओका अथवा विद्याभ्यासका है। अैसी स्थितिमें हमारा क्या कर्तव्य होगा? मैं नहीं मानता कि अिस बारेमें आपमें से किसीके मनमें शंका होगी। पड़ोसमें कभी आग लग जाती है, कभी अतिथि आ जाते हैं और अनुके आतिथ्यकी तैयारी करनेका कर्तव्य आ पड़ता है और दूसरे भी तरह तरहके आवश्यक प्रसंग जीवनमें आ जाते हैं। अलबत्ता ये हमेशा नहीं आते। आवश्यक और अनावश्यक प्रसंगको समझना हमें आना चाहिये। परन्तु प्रसंग सच्ची आवश्यकताका हो तो समय-पत्रकसे आदरपूर्वक छुट्टी लेकर हमें आवश्यक कर्तव्य पालन करना ही चाहिये।

परन्तु आज शान्तिसे बैठकर अैसा निर्णय करना आसान है। प्रसंग प्रत्यक्ष आ जाता है तब हम अक्सर असफल साबित होते हैं। प्रार्थना कैसे छोड़ी जाय? सूत्रयज्ञ छोड़ना तो अधर्म ही हो जायगा। समय-पत्रक पहले और सब बादमें। अिस तरहकी दलीलोंसे अुस समय हमारा मन भीतर ही भीतर गुनगुनाने लगता है। क्या सचमुच अुस समय हममें अितनी अधिक भक्ति स्फुरित हो जाती है? क्या कातनेका रहस्य अितना अधिक हमारे मनमें जम जाता है कि बीमारकी सेवाके लिअे भी हमें अुठने न दे? नहीं अैसा नहीं होता। सेवाके कर्तव्यसे हमारा अुस मन भागना चाहता है अिसलिअे प्रार्थना और समय-पत्रकका आसरा लेने लगता है। यह कितना नीच व्यवहार माना जायगा? समय-पालनका आग्रह अिसीलिअे है कि हम समयका अधिकसे अधिक सदुपयोग कर सकें। यह सेवासे भागनेमें मदद देनेके लिअे हरगिज नहीं है। समय-पत्रक हमें अुत्तम सेवककी शिक्षा देनेके लिअे है, जड़ और भावनाहीन बनानेके लिअे कभी नहीं। आज आरामसे बैठकर हम बातें कर रहे हैं। अैसे समय यह चेतावनी जरूरतसे ज्यादा और अनावश्यक भालूम होगी। परन्तु अैसे प्रसंग सबके जीवनमें समय समय पर आते ही रहते हैं। अुस समय यह चेतावनी याद आ जायगी तो वह हमें गिरनेसे बचा लेगी।

समय-पालनके बारेमें आज मैंने बहुत बातें कही हैं। आश्रमके अिस व्रतको आप सब अपना बना लें तभी आपको सच्चा आनन्द आयेगा। आश्रममें हम कुछ लोग अैसे हैं जिनका अिस विषयमें बड़ा आग्रह रहता है। जब तक हम हैं तब तक तो समय-पत्रक और अुसके अनुसार घंटीके टकोरे बजते ही रहेंगे। परन्तु कल्पना कीजिये कि हम थोड़ेसे आदमी आश्रममें न रहें। मान लीजिये हमें सरकारने पकड़ लिया और आश्रमको जारी रहने दिया। तो क्या पत्रकके समय पत्रकमें ही रहेंगे? और अुस अुस समयकी प्रवृत्तियां डबल गाड़ीकी तरह चलने लगेंगी? क्या घंटीके टकोरे समय-पत्रकको छोड़कर किसी लापरवाह समय-चोर आदमीकी तरंगके अनुसार बजेंगे? मुझे तो आशा है कि अैसा कभी नहीं होगा। आश्रमके समय-पालनके आग्रहकी छूत आपमें से बहुतोंको लग गयी है और आप हमसे भी ज्यादा लगनके साथ अपने अिस व्रतका पालन करेंगे।

यह तो आश्रममें हम रहें अुस समयका विचार हुआ। परंतु यह शिक्षा तो हम अिसलिअे ले रहे हैं कि आश्रम छोड़कर जायं तब भी वह हमारे साथ ही रहे। यहांसे जानेके बाद आपमें से कोअी खेती-बाड़ी करेंगे, कोअी बुनाओका काम

करेंगे, कोअी खादी-कार्यमें लगेंगे और कोअी अिससे मिलता-जुलता आश्रम खोलेंगे। अुस समय यहांका तयार समय-पत्रक आपको रास्ता दिखाने नहीं आयेगा। यहांके टकोरे आपको बार-बार संकेत नहीं करेंगे। परन्तु समय-पालनका रस आपके खूनमें मिल गया होगा अव्यवस्थित जीवन कभी भी सहन न करनेका आपका स्वभाव बन गया होगा तो फिर सब शुभ ही शुभ है। आप स्वयं तो समय-धनका सदुपयोग करेंगे ही परन्तु जहां आप होंगे वहां आश्रम बनकर दूसरोंको भी अुसका रंग लगायेंगे।

आप आश्रममें न हों, अकेले हों आसपासका वातावरण प्रतिकूल हो अैसे समय आपको अपने व्रतमें टिकाये रखनेवाला अेक विचार मैं आपको दूं? आप सदा यह विचार मनमें रखें कि "मैं देशका सेवक हूं। मेरा सारा समय देशकी संपत्ति है। अेक क्षण भी मेरी अपनी मालिकीका नहीं है। अपना जीवन अव्यवस्थित रखकर मैं देशके समय-धनका चोर नहीं बनूंगा। मुझे सौंपे हुअे अेक-अेक क्षणका हिसाब मैं अपने देशको दूंगा और अपनी पूरी शक्तिसे अुसका अुपयोग करके अुसके आशीर्वाद लूंगा।" हृदयमें यह भावना आप जाग्रत रखें तब तो चिन्ताकी कोअी बात नहीं है। तब समय-पत्रक अपने-आप बन जायगा। कागज पर नहीं तो आचरणमें अवश्य ही बन जायगा।

प्रवचन १६

डायरी

कल हमने समय-पत्रककी बात की। अुसी तरह आज डायरीकी बात करेंगे। दोनों अेक-दूसरेके पूरक ही हैं। समय-पत्रक यदि अिस बातका पहलेसे तैयार किया हुआ अनुमान-पत्र है कि हम अपना समय-धन किस तरह खर्च करना चाहते हैं तो डायरी अस धनको हमने सचमुच कैसे खर्च किया अिसका रोज शामको सोते वक्त लिखा हुआ ब्योरेवार हिसाब है। चरवाहे जब बकरियोंका बड़ा झुंड लेकर चराने निकलते हैं तब अेक आदमी आगे चलता है और दूसरा अेक आदमी पीछे चलता है। अिस प्रकार दो रक्षकोंके बीचमें वे अपना सारा झुंड रखते हैं और अेक भी बकरी नहीं गंवाते। हम भी ८६४०० सेकंडोंका जबरदस्त झुंड लेकर रोज चराने निकलते हैं। अुसके आगे समय-पत्रक रूपी रक्षकको रखते हैं और पीछे डायरी-रूपी रक्षकको। जो अैसा नहीं करते न दिनभरकी दिनचर्याकी पहलेसे योजना सोचते हैं और न बीते हुअे दिनका रातको हिसाब रखते हैं व सेकंड तो ठीक घंटे भी यों ही खो देते हैं। वे मुश्किलसे ही गिना सकते हैं कि २४ में से ४ घंटे भी अुनके अपने थे।

अिस प्रकार समयको व्यर्थ बिगाड़ना किसीको भी पुसा नहीं सकता। हम सेवकोंको तो बिलकुल ही नहीं। सेवक होनेके कारण हम तो अपनी सारी शक्ति और सारा समय भारतमाताके चरणोंमें अर्पण कर चुके हैं। हमने अपना निजी अेक क्षण भी नहीं रखा है। जितने दिन घंटे और पल हमारे पास हैं वे सब हमारी स्वामिनी भारतमाताके द्वारा हमारे हाथोंमें सौंपी हुअी पूंजी हैं। अुसने हम पर विश्वास रखकर अुसके

हितके लिये व्यापारमें लगानेको वह पूंजी हमें सौंपी है। अिससे तो हमारी जिम्मेदारी अनेक गुनी बढ़ गयी है। हमें सौंपे गये धनसे हम कैसा व्यापार करना चाहते हैं, अिसका अनुमान-पत्र हम मालिकसे पहले मंजूर न करायें और व्यापार करनेके बाद अुसका हिसाब अुसके सामने पेश न करें, तो हम कितने अविश्वस्त और नमकहराम सेवक कहलायेंगे! और अुस मालिक समय-धनको हम अपने ही अैश-आराम और आलस्यमें खर्च कर दें, तब तो हम अुसके चोर ही ठहरेंगे न?

हिसाब रखनेकी आदत अेक अच्छी आदत है। अिससे जीवनमें बारीकी आती है। जीवनमें यह आग्रह बनता है कि पाअी या पल भी तुच्छ नहीं है, फेंक देने लायक नहीं है, अुसे हिसाबमें गिनना ही चाहिये। संभव है सेवकके नाते जीवन बितानेमें हमारे हिस्से अनेक जिम्मेदारीके काम आयें। सार्वजनिक धनकी रक्षा करनेका काम आ सकता है खादी-कार्य आदि करते हों तो अुसका हिसाब रखनेका काम आ सकता है, मजदूरों और विद्यार्थियोंकी संस्थायें चलाते हों तब हम पर यह बेहदकी जिम्मेदारी आ सकती है कि समयका अच्छेसे अच्छा अुपयोग कैसे हो? अगर आजसे हम अपना अैसा स्वभाव न बना लें कि पाअी पाअीका हिसाब मिलायें बिना हमें चैन ही न पड़े, तो हम विश्वासपात्र कार्यकर्ता कैसे बन सकेंगे?

अिसमें क्या हो गया? हम कहां आ गये हैं? थोड़े पाअी पैसे या आने हिसाबमें घट-बढ़ गये तो अुसकी व्यर्थ चिन्ता क्यों की जाय? — अैसे लापरवाहीके विचार जो कार्यकर्ता करे, वह कितना ही भला आदमी हो तो भी भयंकर है। वह सार्वजनिक धनका अुपयोग करने लायक नहीं है। किसी प्रकार बहुतोंका समय जिसके हाथमें है वह यदि समयके छोटेसे छोटे पलका मूल्य न समझे और किसीका अेक पल भी नष्ट न हो अिस प्रकार कार्यक्रम सोचनेकी सावधानी न रखे तो वह दूसरोंके लिये बहुत ही असुविधाजनक और अप्रिय हुअे बिना नहीं रहेगा। मान लीजिये कि अुस पर कताअी-वर्ग चलानेका काम आ गया है। यदि अुसकी दृष्टिमें समयका मूल्य न हो तो वह सावधानी रखकर वर्गके लिअे सारे साधन पहलेसे विचारपूर्वक तैयार नहीं रखेगा। वर्गका समय हो जानेके बाद अेकसे कहेगा तेल ले आओ दूसरेसे कहेगा चाकू ले आओ तीसरेसे कहेगा तराजू ले आओ और फिर खुद रजिस्टर ढूंढ़ने दौड़ेगा। अुसमें यदि अेक-अेक पलकी कीमती समझ होती तो अपने और दूसरे बहुतोंके अनेक पल बिगड़ते देखकर अुसकी छातीमें घाव जैसा लगता। परन्तु जिसका स्वभाव अूपर बताये अनुसार हो, 'अिसमें क्या हो गया?' यही जिसके जीवनका सूत्र बन गया हो, अुसका कताअी-वर्ग अथवा और कोअी भी काम प्राणवान कैसे बनेगा? वह विद्यार्थियोंका आदर कैसे प्राप्त कर सकेगा? अैसी लापरवाही हममें घर न करे, हममें अपने और अपने साथियोंके समयका अेक अेक क्षण काममें लगानेकी लगन पैदा हो अिसके लिअे डायरी लिखनेकी आदत डालना बहुत ही अुपयोगी है।

और डायरीमें अकेले समय ही दर्ज नहीं करना है। अुसमें अिससे बहुत अधिक बातें आती हैं। जब हम दिनकी दौड़धूपमें होते हैं तब संभव है हम पूरे जाग्रत न भी रह

पायें। हो सकता है कभी आलस्यमें फंसकर अथवा ऐश-आराममें हमने अपना समय गवाया हो कभी कामचोर बनकर हम अपने कर्तव्यसे चूके हों और साथियोंका बोझा हमने बढ़ा दिया हो कभी मित्रोंके सहायक बननेकी स्थितिमें होते हुमे भी कर्तव्यसे बच निकले हों या कभी अपने अनुचित वचनसे या कृत्यसे हमने दूसरोंका जी दुखाया हो। कामकी धांधलीमें और प्रसंगकी अुत्तेजनामें असी कितनी ही बातें हम कर बैठते हैं। अुस समय हमें अिस बातका भान नहीं रहता कि हमने कुछ बुरा किया है। हमारी बुद्धि दिनभर जाग्रत नहीं रहती अिसलिये वह हमें हर वक्त सावधान करके रोकती नहीं। यों करते करते हमें अिस तरहका व्यवहार करनेकी आदत ही पड़ जाती है। जैसे लापरवाह किसानकी खेतीमें निकम्मी घास वगैरा बढ़ती रहती है वैसे हमारे जीवनमें कुटेव और बुरा बरताव बढ़ता रहता है और हम सेवककी योग्यतासे दिन दिन गिरते जाते हैं!

अिस प्रकार गिरनेसे हमें कौन रोक सकता है? कोअी श्रद्धेय व्यक्ति हमारे सौभाग्यसे आसपास हों और हमारे प्रति प्रेमसे प्रेरित होकर अिस ओर हमारा ध्यान खींचें तो जरूर बच जाना संभव है। परन्तु जिसका स्वभाव बुरा बन जाता है अुसकी बुद्धि बहुत ही वक्र हो जाती है। क्या हमें अैसे व्यक्तियोंकी सलाह लेने जानेकी सन्मति सूझेगी? कभी नहीं अुल्टे हमारा मन सदा अुनसे बचनेका ही प्रयत्न करता रहेगा। कोअी मित्र टोकने लगे तो बहुत संभव है अुसके साथ हम लड़ ही पड़ेंगे।

क्या आपको अैसा लगता है कि यह मैं किन्हीं महापापी दुष्ट मनुष्योंका वर्णन कर रहा हूं? नहीं नहीं यह हमारा अपना ही वर्णन है। कम-अधिक मात्रामें हम सबका व्यवहार अैसा ही होता है। हममें से कौन कह सकता है कि वह चौबीसों घंटे जाग्रत रहकर अपने-आप पर चौकीदारी करता है? हम स्वयं अपने पर पहरा रख नहीं सकते और दूसरा टोके तो हमें बर्दाश्त नहीं होता अैसी दयाजनक स्थिति हमारी होती है।

हम चाहें तो डायरीको अपना पहरेदार बना सकते हैं। रातको बिस्तर पर बैठकर गंभीरतासे दिनभरकी दिनचर्याका सिंहावलोकन करें, अुस समय हमारे मस्तिष्कका शान्त होना संभव है। अुस समय अुत्तेजनाका कोअी कारण नहीं होता। हमने क्या अुचित किया क्या अनुचित किया कौनसा समय बिगाड़ा कौनसा सुधारा कहां चढ़े कहां गिरे—अिसका हिसाब शांत चित्तसे करनेके लिये यह बहुत अनुकूल समय है।

और अुस समय हमें किसी परायेको तो हिसाब देना नहीं होता। दूसरे लोग पास हों तो हमें शर्म आये और सत्यकी चोरी करनेका मन हो सत्य पर परदा डालनेका लोभ हो परन्तु हम तो अपने आपसे ही हिसाब लेनेके लिये बैठते हैं। शर्म तो मालूम होगी परन्तु वह शर्म हमें सत्यचोर बनानेके बजाय जाग्रत रखनेमें सहायक हो जायगी।

डायरीका सबसे बड़ा काम कोअी हो सकता है तो वह यही है। अिस दृष्टिसे लिखी जानेवाली डायरी कावी मामूली नोटबुक नहीं परन्तु हमारे आध्यात्मिक मित्र जैसी होगी। अलबत्ता यह तभी होगा जब हम डायरीके साथ औमानदारीसे सब बातचीत करते होंगे। अुसके साथ भी सत्यकी चोरीका बरताव करेंगे तो डायरीका हेतु मारा जायगा अितना ही नहीं वह हमारे गहरे पतनका अेक नया साधन बन जायगी। अुसे लिखते समय यदि हमारे मनमें पाप होगा हम अपनी तारीफ ही अुसमें लिखते रहेंगे औरोंकी निन्दा और अपने बुरे कामोंके बचावसे ही अुसके पन्ने भरते रहेंगे तो वह हमारा हितकारी चौकीदार नहीं रहेगी परन्तु हमें बुरे व्यसनोंमें फंसानेवाले मित्रका काम करेगी। सेवामय जीवनकी अभिलाषा रखनेवाले हम लोग डायरीको अिस तरह क्यों धोखा दें? भगवान हमें अितना नीचे गिरनेसे बचाये।

प्रवचन १७

डायरी लिखनेकी कला

कल मैं अिस विषय पर बोला था कि हमें डायरी लिखनेकी सुन्दर आदत डालनेकी क्यों जरूरत है। आपमें से बहुतोंके जीमें आया होगा कि डायरी लिखनेका नियम बनाया जाय। कोअी तो यह सोचकर कि शुभ कार्य शीघ्र ही किया जाय लिखने भी बैठे होंगे।

जो अिस तरह लिखने बैठेंगे अुन्हें कैसा अनुभव होगा? अुनका हाथ जल्दी जल्दी नहीं चलेगा अुलटे मनमें प्रश्न होगा — क्या लिखें और क्या न लिखें? सचमुच डायरी लिखना अेक सरस कला है। हमारे देशमें अिस कलाका जितना चाहिये अुतना विकास अभी तक हुआ नहीं है। हमारे मंडलमें तो अुसका विकास नहीं ही हुआ है। यहां हम डायरीका महत्त्व समझने पर भी अुसका नियम पालन करनेकी हद तक नहीं पहुंचे हैं। अिसलिअे आज आपके सामने अुसके विविध प्रकारके नमूने रखना संभव नहीं है।

सच्ची परेशानी अिस बातकी होती है कि हम स्वयं अपना पहरा कैसे लगायें या आत्म निरीक्षण कैसे करें। परेशानी लिखनेकी नहीं परन्तु अिस बातकी है कि हमें अपनेको तटस्थ दृष्टिसे देखना कैसे आयेगा। अिसमें अेक ही टेक रखनेकी जरूरत है — हम सच्चे रहें। हम अपने आप बनावट या दुराव न करें। अिस विचारसे हम अेक अक्षर भी न लिखें कि कोअी पढ़े तो हमारे बारेमें अूंचा खयाल बनाये। मनकी तरंगोंके विषयमें न लिखें परन्तु जितना करें अुतना ही लिखें।

अुदाहरणके लिअे मान लीजिये कि आपको बीड़ीका गुप्त व्यसन है। डायरीमें आप अिस व्यसनको खूब गालियां देंगे अुसे छोड़नेके आप कैसे प्रयत्न कर रहे हैं

अिसके कलामय वर्णनोंसे पन्ने भरेंगे, परन्तु दूसरी तरफ छिपकर बीड़ी पीना जारी ही रखेंगे। अिस प्रकार आपकी हीन वृत्तिको दोहरा सिंचन मिलेगा। आपका व्यसन तो बना ही रहेगा साथ साथ जो डायरी पढ़ेगा अुसके सामने बड़े प्रयत्नवान होनेकी प्रतिष्ठा भी आपको मिल जायगी। अिसलिअे डायरीमें तो तभी लिखना ठीक होगा जब आप किसी अन्य कामसे बीड़ी कभी न पीनेका व्रत ले लें।

डायरीका दूसरा काम है हमारे रोजके कामकाजकी नोंध हमारे बिताये हुअे समयका हिसाब। अपने काते हुअे सूतकी अपने किये हुअे दूसरे अुद्योगों और काम काजकी काफी ब्योरेवार नोंध हमें रखनी चाहिये। कातनेके बारेमें लिखते समय तारोंकी संख्या तो लिखें ही परन्तु यह काफी नहीं है। यदि हम सेवक और विद्यार्थी होंगे तो बेकार यांत्रिक ढंगसे नहीं कातते होंगे। हमारे दिमागमें प्रतिदिन कुछ न कुछ विचार अुस कामके साथ जरूर जुड़ा रहता होगा। कभी हम गति बढ़ानेकी दृष्टि रखकर कातते होंगे कभी सूतके कसकी दृष्टिसे कातते होंगे तो कभी चरखेमें कोअी सुधार करके अुस पर प्रयोग करते होंगे। हमारी डायरी अिस ढंगसे लिखी जानी चाहिये कि अुस समय होनेवाले प्रयोगोंका अुसमें सावधानीपूर्वक अुल्लेख होता रहे। हम खादी कार्यकर्ता हों तो अपने कामका काफी विस्तृत वर्णन हमें डायरीमें करना चाहिये। हम कहां गये-आये कितना खर्च हुआ कपास वगैराके दाम चुकाये हों तो कितने चुकाये, किससे मिले किसे क्या सिखाया — अैसा वर्णन हमारे कार्यालयको हमने बराबर काम किया है या नहीं हमारे पास काफी काम है या नहीं वगैरा बातोंकी सही कल्पना करा सकेगा।

अिस प्रकार अपने कामका हिसाब रखना किसी किसीको पसन्द नहीं होता। वे सोचते हैं क्या हम चोर हैं? क्या हम काम करना नहीं जानते कि हमसे हिसाब मांगा जाता है? सार्वजनिक सेवकको अैसा स्वभाव नहीं रखना चाहिये। अुल्टे अुसे अपना हिसाब दूसरोंको देनेका अुत्साह होना चाहिये। दूसरोंकी आलोचना प्रसन्नता पूर्वक आमंत्रित करनी चाहिये। हमारी बात सही हो तो धीरजसे सामनेवालेको समझानेका और नया सुझाव मिले तो अुसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करनेका अपनेमें रस पैदा करना चाहिये।

अिसके सिवा यह डायरी खुद हमारे लिअे भी कम अुपयोगी नहीं है। हर महीने हर तीसरे महीने हर साल हम अपनी डायरी पर नजर डालेंगे तो हमारा सारा काम चित्रपटकी तरह हमारे सामनेसे गुजर जायगा। अिस परसे हम अपनी खामियां देख सकेंगे और भविष्यकी दिशा भी निश्चित कर सकेंगे।

ये तो डायरीके आवश्यक अंग हुअे। अिन बातोंका अुल्लेख ही डायरीका मूल हेतु है। परन्तु रसिक लेखक अपनी डायरीमें दूसरी भी सुन्दर सुन्दर सामग्रियां भर सकेंगे। कामकाजके सिलसिलेमें नये सज्जनोंका परिचय हुआ हो तो अुनके विषयमें अपनी छापका संक्षिप्त अुल्लेख करेंगे। आसपास कोअी आकर्षक घटना हुअी हो तो अुसके बारेमें भी दो शब्द लिख देंगे। कोअी नया स्थान देखेंगे किसी वृद्ध आदमीसे

पुराना किस्सा सुनेंगे, कोअी नया लोकगीत या कहावत या शब्द सुनेंगे तो वह भी लिख लेंगे। कोअी पुस्तक पढ़ेंगे तो अुसका सार या समालोचना लिखेंगे।

जैसा मने पहले कहा है डायरी लिखना अेक कला है। और कला तो जैसे जैसे अुसका अभ्यास बढ़ेगा वैसे वैसे विकसित होती जायगी। लिखते-लिखते लिखनेका सुन्दर ढंग हाथ लग जायगा। अूपर जो सुझाव दिये गये हैं अुससे अधिक डायरीका ढांचा बना बना अुचित नहीं होगा।

कुछ लोग पहलेसे ही ढांचा बनाकर कुछ खाने बना लेते हैं और रोज अुन खानोंको भरते है। यह तो नीरस पत्रक हुआ। अुसे डायरी नहीं कहा जा सकता। डायरी तो नित-नयी होनी चाहिये रोज ताजी होनी चाहिये। खाने तो हम जितने भरेंगे सबके सब अेकसे ही होंगे। परन्तु डायरी सबकी विविध होगी। जैसे हमारे सबके चेहरे अेकसे नहीं होते अक्षर अेकसे नहीं होते वैसे हम सबकी डायरियां भी अेक ही ढांचेकी नहीं हो सकतीं। प्रत्येक लेखक अपनी किसी अनोखी ही पद्धतिका विकास करेगा। यह सही है कि हम सब अेक विचार और अेक काम वाले प्राणी हैं फिर भी हम सबके जीवनमें हमारे स्वभावमें हमारी रुचियोंमें बहुत बड़ी विविधता है। अिस विविधताका प्रतिबिम्ब डायरीमें पड़े बिना कैसे रहेगा?

यह सुनकर डायरी लिखनेका सुन्दर नियम जो स्वीकार करें, अुनके लिये अंतिम सुझाव सूत्ररूपमें ये हो सकते हैं

१ डायरी लिखनेका कोअी समय निश्चित कीजिये। (जैसे कि सोनसे पहले) और यह समय न चूकनेका आग्रह रखिये।

२ जो कुछ लिखें सत्य ही लिखें। दूसरोंको पढ़वानेकी दृष्टिसे कुछ भी न लिखें।

३ तारीख समय कामका ब्योरा आदिमें जो आंकड़े लिखें वे जांच करके सही लिखें।

४ जो लिखें वह बहुत संक्षेपमें लिखें।

प्रवचन १८

समय नष्ट करनेके साधन

समय-धनके बारेमें मैंने आपको दो दिनमें बहुत कुछ कहा है। अपने अेक अेक मिनटका सदुपयोग करने और अुसका हिसाब रखने पर बहुत जोर दिया है। आज मैं जो कहनेवाला हूं वह है तो अुसीके संबंधमें अुसीके गर्भमें आ जाता है परन्तु हम अुसे सही रूपमें न समझ लें तो हमारे समय-पत्रक और डायरी व्यर्थ साबित होंगे।

समय न गंवाया जाय और अुसका हिसाब लिखा जाय अितना स्वीकार करनेके बाद भी अुसे गंवाया हुआ कब कहा जाय अिसकी सच्ची समझ होना जरूरी है। जिन प्रवृत्तियों पर आम लोगोंको कोअी आपत्ति नहीं होती वे सब हमारे समय-पत्रकमें स्थान देने लायक नहीं होतीं। जैसे कि लोग जब कामसे फुरसत पा जाते हैं तब वो बड़ी ताश खेलते हैं। क्या हम अिसे अपने समय-पत्रकमें स्थान देंगे? आपने अपने घरेलू जीवनमें अुसका शौक रखा होगा तो आप पूछेंगे क्यों नहीं? लोग अुसमें दाव लगाकर खेलते हैं वैसा हम न करें, मामूली खेल ही खेलकर दो घड़ी निर्दोष आनन्द लें तो अिसमें क्या बुराअी है? और अिसमें ब्रिज जैसे खेल तो स्मरण-शक्तिको तेज बनानेवाले होते हैं।"

किसीको चौसर और शतरंजका शौक होगा तो वह समय-पत्रकमें अुसे शामिल करनेकी हिमायत करेगा। अुसके पक्षमें वह बड़ी जोरदार दलीलें पेश कर सकता है "ये बादशाही खेल हैं। शतरंजमें अेक सेनापतिके जैसी बुद्धि लगानी पड़ती है और अुसे खेलनेमें मनुष्य रणक्षेत्रकी कलाका विकास कर सकता है। अुसका दूसरा नाम ही बुद्धिबल है। अुसे नीचे दरजेके लोग ही खेलते हों सो बात नहीं। यह शरीफ घरानोंमें खेली जाती है। और शतरंजके खिलाड़ियोंमें तो गोखलेजी जैसे आदरणीय नेताओंके अुदाहरण भी दिये जा सकेंगे।

मेरा खयाल है कि हम सेवक लोग आश्रममें हों या बाहर हों हमारे समय पत्रकमें अैसे खेलोंके लिअे वे कितने ही बादशाही गिने जाते हों तो भी कभी स्थान नहीं हो सकता। स्मरण-शक्ति बढ़ानेके लिअे ताश खेलनेकी अपेक्षा कहीं अच्छी प्रवृत्तियां हमारे पास हैं। और रणक्षेत्रकी तालीमके लिअे शतरंजके बजाय कोअी सच्ची लड़ाअी ही लड़ना हमें आना चाहिये। महापुरुषोंके जीवनसे अैसे व्यसनोंका अुदाहरण लेनेकी अपेक्षा अन्य बहुतसे मूल्यवान गुणोंके अुदाहरण क्या हम नहीं ले सकते? क्या अिसमें कोअी शक है कि अैसे खेलों पर कितना ही मुलम्मा चढ़ाया जाय तो भी वे अन्तमें तो बेकार लोगोंके ही धंधे हैं? जिनके पास फालतू समय हो और यह सूझता न हो कि अुसे कैसे बिताया जाय ये युक्तियां समय काटनेके लिअे अुन्हींकी ढूंढ़ी हुअी हैं। और हमारे लिअे तो दिनके चौबीस घंटे भी कम पड़ते हैं और अिसके लिअे

हम रोज परमेश्वरसे शिकायत करते हैं तब अैसे खेलोंके लिये घंटा तो क्या कुछ मिनट भी फालतू हम कहांसे निकालेंगे?

परन्तु दिनभरकी थकावटके बाद घरमें दो घड़ी बैठकर हमभुम दोस्त ताश, चौसर वगैरा खेल लें तो अुससे थकान अुतर जाती है। दिमागकी झुंझलाहट मिट जाती है," अैसा तर्क खेलोंके रसिया करते हैं। अक्सर यही देखा जाता है कि जो लोग दिनभर थकने जैसा बहुत काम नहीं करते, अुन्हींको अैसे खेल सूझते हैं। अिसीलिये तो खेलोंके शौकीन दो घड़ी फुरसतके समयमें खेल कर संतोष मानते नहीं देखे जाते व्यसनियोंकी तरह जब देखो तब खेलते ही रहते हैं। और थकावट अुतारनेके लिये दूसरे आरोग्यकारी साधन हमें न सूझें अैसी क्या हमारी बुद्धि बिल्कुल मारी गयी है? हमने कताओ-बुनाओ या हिसाब-किताब जैसे बैठकके कामोंमें दिन बिताया हो तो हम दौड़ने-कूदनेके खेल खेलें खेतोंमें या पहाड़ियों पर अथवा नदीके किनारे सैर करने जायं। दिनमें खेती-बाड़ी जैसे भारी काम किये हों तो दो घड़ी जैसा भाये वैसा गायें-बजायें कुछ पढ़ें या बातें करते हुओ चर्चा करते हुओ और आनन्द लेते हुओ कातें फूल-पत्तों या रंगोलीकी कुछ शोभा घरमें करें, बालकोंको कहानी सुनायें। दिन-भरके किये गये श्रमकी थकावट अुतारनेका अैसा साधन हम क्यों नहीं ढूंढ सकते?

यह भी कहा जाता है कि "ताश वगैरा खेलोंसे आपसमें अच्छी मित्रता बढ़ती है। यद्यपि मैंने तो अच्छ अच्छे मित्रोंको भी अिन खेलोंकी अुत्तेजनामें अेक-दूसरेसे नाराज होते और लड़ते ही अधिक देखा है। फिर भी आप समझ सकते हैं कि अूपर बताओ हुओ प्रवृत्तियोंमें मिलने-जुलने और प्रेमग्रंथि बांधनेका ज्यादा मौका मिलता है।

ये ताश शतरंज वगैरा खेल निर्दोष जैसे दिखकर हमें धोखा देते हैं और फंसाते हैं। जैसे कोओी चोर हमारे घरमें गरीब जैसा मुंह बना कर घुस जाय वैसा ही ये खेल करते हैं। अिसीलिये तो अिन्हें अधिक भयंकर समझना चाहिये। ताशके शौकीन अेक मित्र गंभीर मुंह बनाकर अेक बार कह रहे थे कि "ये निर्दोष खेल तो हम पर बड़ा अुपकार करते हैं। अुन्हें खेलनेकी धुनमें जब तक मन लगा रहता है तब तक बुरे विचार नहीं आते और हम अनेक पापोंसे बच जाते हैं। आरामसे अपने घरमें बैठकर खेलनेमें जीव-जंतुकी हिंसा भी नहीं होती। अैसी हास्यास्पद बातोंका खंडन करनेकी भी जरूरत है? अिससे यही प्रगट होता है कि कुछ लोगोंको ये खेल निर्दोष मुंह बनाकर कैसे अपने जालमें फंसाते हैं। मान लें कि अिन खेलोंमें और कोओी दोष नहीं है तो भी वे हमारे आलसीपनको पोषण देते हैं हमारे कीमती समयका हरण करते हैं। यह क्या छोटा दोष है? अिस क्षुद्र दिखाओ देनेवाले दोषमें तो बड़ेसे बड़े दोषोंका मूल है। जिसने मौज-मजाको जीवनमें स्थान दिया अुसे प्रामाणिक धंधा अच्छा ही नहीं लगेगा। वह सच्चाओीका पालन नहीं करेगा शरीर-श्रमको नीचा समझेगा अुसे किसीकी सेवा करनेकी फुरसत नहीं मिलेगी और वृत्ति भी नहीं रहेगी। जो काममें चोरी करता है वह लोगोंसे अपनी सेवा करायेगा या लोगोंकी सेवा करेगा?

बेकार लोग समय बरबाद करनेकी और भी कभी युक्तियां निकाल लेते हैं। कोभी प्लांचेट लेकर प्रेतोंको बुलाता है और अुन्हें तरह तरहके सवाल पूछता है कोभी हस्तरेखा देखकर या ग्रहोंका हिसाब लगाकर भविष्य बताता है। वे तर्क करेंगे यह आप किस आधार पर कहते हैं कि हम समय बिगाड़ रहे हैं? यह प्रेतविद्या और भविष्य-विद्या तो शास्त्र हैं। अिन पर तो बड़ी बड़ी पुस्तकें लिखी गभी हैं। हम अुनके अध्ययनमें अपने समयका सदुपयोग करते हैं। शास्त्रोंका अध्ययन करनेको क्या आप बेकार समय खोना कह सकेंगे?" मनुष्य जब अपने-आपको धोखा देने लगता है तब कहां तक पहुंचता है अिसका क्या यह अेक ज्वलन्त अुदाहरण नहीं है? शास्त्रोंका अध्ययन शब्द-प्रयोगसे कोभी भी विचार शास्त्र नहीं बन जाते और मनपसन्द प्रवृत्ति शास्त्रोंका अध्ययन नहीं बन जाती। और सच्चा शास्त्राध्ययन तो जीवनमें हमें अधिक अुन्नत बनानेके लिअे ही हो सकता है। अिस दृष्टिसे सोचें तो अैसी प्रवृत्तियोंका हेतु क्या है? समय नहीं कटता अुस कैसे आगे धकेला जाय कामके बिना मन खुश नहीं रहता अुसे दो घड़ी विनोदका साधन कैसे दिया जाय यही न?

पढ़े-लिखे लोग ही समय काटनेके अैसे साधन ढूंढ निकालते हैं। जितने पढ़े-लिखे हैं वे सब जीवनका सदुपयोग ही करते हैं अैसा नहीं है। अुन्हें भी मौज-शौक प्यारा है आरामका जीवन प्रिय है गंभीर कामोंसे अरुचि है। अिसलिअे अुन्हें भी दिनका बहुतसा भाग फालतू मिल जाता है। वे अपने ही जैसे पढ़े लिखोंसे अैसा शास्त्राध्ययन करनेका फैशन देखकर आते हैं, पैसा पास हो तो अुससे संबंध रखनेवाली पुस्तकें खरीद लाते हैं और अपना समय बिगाड़ते हैं। युरोप-अमरीकामें अैसे शास्त्रों की पुस्तकें लिखनेवाले बहुत लोग पैदा हो गये हैं और निठल्ले शिक्षितोंकी कमजोरीका लाभ अुठानेके लिअे अुनकी कीमत भी काफी बड़ी रखते हैं।

अुपन्यास पढ़ते रहना समय काटनेका अेक और प्रतिष्ठित ढंग है। अिसमें भी हम अपने मनको अनेक झूठे तर्कोंसे ठगते हैं। "अुपन्यास लिखनेवालोंमें जगतके बड़ बड़े साहित्यकार हो गय हैं और आज भी हैं किसी गंभीर निबंधमें लेखक जो सिद्धान्त लिखता है वे जल्दी समझमें नहीं आते और समझमें आ जायं तो भी अुन्हें जीवनमें अुतारनेका हमें अुत्साह नहीं होता। वही सिद्धान्त दिलचस्प कहानीके रूपमें पढ़नेसे अपने आप हमारे खूनमें मिल सकते हैं। अैसा होनेसे ही बड़े बड़ कलाकार अुपन्यास लिखनेको प्रेरित होते हैं। तो हम अुनकी कलाका पान करें, अिसमें क्या बुराभी है?" कलाका पान करनेमें तो कोभी आपत्ति नहीं हो सकती परन्तु कलामें डूब मरनेमें बड़ी आपत्ति है। अगर हम आलस्यको ही सुख मान लें और समय काटनेके खातिर ही पढ़ते रहें तो रवीन्द्रनाथ या टॉल्स्टॉय जैसोंके अुपन्यास भी हमें कोभी लाभ नहीं पहुंचायेंगे। हमारे हाथोंमें आने पर वे विष बन जायेंगे। परन्तु अनुभव अैसा है कि जो अैसे व्यसनका व्यसन बढ़ाते जाते हैं अुनकी दिलचस्पी अुदात्त विचारोंके अुपन्यासोंमें नहीं रहती। कृत्रिम और अनीतिभरी प्रेम-कहानियों और जासूसोंके तरंगी पराक्रमोंके किस्सोंके बिना अुन्हें चैन नहीं पड़ता।

ये सब पढ़े लिख निठल्लोंके समय नष्ट करनेके रास्ते हैं। वे प्रतिष्ठित जैसे लगते हैं। मनुष्य पढ़े पढ़े पढ़ता रहे तो किसीको लगेगा, वाह कैसा अध्ययनशील है! प्लांचिटसे पूछता रहता हो तो किसीको खयाल होगा कैसा श्रद्धालु है! शतरंज खेलता हो तो कोओी कहेगा कितना बुद्धिबलवाला है! अिस प्रकार अिन मार्गोंकी पढ़े लिखोंकी दुनियामें प्रतिष्ठा होती है और अिसीलिअे अिन मार्गोंको अधिक भयंकर समझना चाहिये क्योंकि झूठी प्रतिष्ठासे वे हमें धोखा देते हैं!

असी निठल्लोंकी प्रतीक-रूप प्रवृत्तियोंको व्यसन समझकर छोड़ देना ही हमारे लिअे अुचित है। अुनमें कितनी ही प्रतिष्ठा मानी जाती हो शास्त्र माना जाता हो और बुद्धि विलासी देती हो तो भी वे भयंकर हैं क्योंकि अुनका हम पर नशा चढ़ता है। अिसके सिवा व ज्यादा भयंकर अिसलिअे है कि अुनसे हमें समयके मूल्यका भान नहीं रहता।

हम सबकोंके जीवनमें तो लोक-संग्रहकी दृष्टिसे भी ये दूर रखने लायक हैं। क्या अपनी अिस समय काटनेकी शहरी बुराअीकी छूतको हमें गांवोंमें फैलाना है? सच-मुच यदि आपको सेवकके अपने जीवनको बिलकुल निकम्मा बना डालनेकी सबसे मोहक सबसे मीठी किन्तु सबसे घातक दवा चाहिये तो आज हमने समय बरबाद करनेकी जिस बुराअीकी चर्चा की अुसका सेवन आप करें।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

चौथा विभाग

श्रम धर्म

‘महाकार्य’

अपने आश्रम-प्रवेशको सफल बनानेका ही जिसका दृढ़ संकल्प हो अुसे आज मैं सफलताकी अेक कुंजी बताना चाहता हूं। यह कुंजी हममें से किसी किसीने आजमाकर देखी है और अुससे हमारा ताला खुला है।

आप कुछ न कुछ आशायें लेकर आश्रमकी शिक्षा लेने आये हैं। अुत्साह और बोध आपमें छलके पड़ते हैं। आश्रमी शिक्षाकी कठोरताके बारेमें आपने बहुत कुछ सुना है फिर भी सेवक बननेकी लगन होनेके कारण आप अुसकी परवाह किये बिना यहां आये हैं। अपने अिस आन्तरिक अुत्साहसे आप आश्रम-जीवनकी कठोरसे कठोर बातका सामना कीजिये। आज आपका हृदय सचमुच अिसके लिये तैयार है। कठिनसे कठिन बात भी आज आपको आसानसे आसान लगेगी। आश्रमकी कठोरताको जीतनेका आज आपके लिये सच्चा अवसर आया है। लोहा गरम होकर लाल हो गया है। ठंडा होनेसे पहले ठोक-पीटकर अुसकी मनचाही शकल बना लीजिये। नहरमें पानी आया है। नहरका द्वार बन्द हो जानेसे पहले अपने खेतमें आप पानी ले लीजिये। जमीन बरसातके पानीसे गीली हो गयी है अुसके सूख जानेसे पहले अुस पर हल चला लीजिये।

देखिये यह युक्ति अच्छी तरह समझ लीजिये। यह कुंजी है कठिनसे कठिन वस्तु पर सबसे पहले जोर आजमाना। युद्धके तरह तरहके व्यूह होते हैं। आम तौर पर पहले कुम्भकरण फिर अिन्द्रजित और अन्तमें रावण अिस प्रकार छोटे शत्रुओंको पराजित करते करते अन्तमें सबसे बलवान शत्रुका सामना किया जाता है। परन्तु मैदानमें आते ही जड़में कुल्हाड़ी मारना सबसे बड़े शत्रुको शुरूमें ही गिरा देना भी युद्धका अेक अद्भुत व्यूह है। जड़को काट देने पर पेड़के डाल-पत्तोंको काटनेकी जरूरत ही नहीं रहती। अुनका जीवन-स्रोत सूख जानेसे वे अपने-आप सूख जाते हैं। अिस व्यूहमें खतरा है साहस है। परन्तु अिसीलिअे शूरवीर योद्धाओंको अिस व्यूहमें मजा आता है।

यदि आप आश्रमकी सब कठोरताओंको अेक ही आक्रमणमें धराशायी कर देना चाहते हों, तो सबसे पहले दलबल-सहित आपको 'महाकार्य' पर ही धावा बोलना चाहिये। पाखाना-सफाईके कामको — भंगीके कामको — हमने 'महाकार्य' का बड़ा नाम दिया है। अिसे करनेका रस जिसे लग गया है अुसे दूसरा कौनसा काम आश्रमका दूसरा कौनसा अंग, घबराहटमें डाल सकेगा?

आज लोगोंमें अेक अत्यन्त विपरीत विचारकी लहर दौड़ रही है। काम करनेमें दुःख माना जाता है और निठल्ले बैठे रहनेका आलस्यमें समय बरबाद करनेको गुण

समझा जाता है। लोग कहेंगे "धनी आदमी काम करके शरीरको थकाये तो फिर अुसने धन किसलिअे कमाया है? विद्वान मनुष्य यदि काम करनेमें समय गंवावे तो फिर अुसकी विद्याकी सार्थकता क्या? राजा अगर काम करके मैला-कुचैला बने तब लड़भिड़ कर अुसने राज्य किसलिअे जीता? काम मजदूर करे धनवान नहीं, काम अपढ़ करे विद्वान नहीं काम रैयत करे राजा नहीं।"

आजकी दुनियामें अिसे न्याय माना जाता है। परन्तु अुससे दुनिया दुःखी है अिसीलिअे हम अुस न्यायको नहीं मानते। सच्चा न्याय अिससे अुल्टा है। काम करनेमें हम दुःख नहीं परन्तु सुख मानते हैं। छोटे बच्चोंके लिअे जैसा खेलना-कूदना है वैसा हम सब आदमियोंके लिअे काम है। काम करनेसे थकान तो मालूम होती है, परन्तु बच्चोंको खेलने-कूदनेमें क्या थकान नहीं लगती? थकानके डरसे क्या वे कभी खेल छोड़नेको तैयार होते हैं? थकान तो मीठीसे मीठी चीज है। काम करनेके बाद थकान अुतारनेमें जसी मिठास मालूम होती है वैसी मिठास दुनियाका कोअी पकवान खानेमें भी कभी मालूम हुअी है? काम करनेका आनन्द स्वयं न लेकर किसी मजदूरसे काम करानेको हम पकवानकी पत्तल दूसरेको सौंपकर बादमें जूठन चाटने जैसा मानते हैं।

अिसके सिवा, दुनियामें कामके बारेमें अेक और भ्रम चला आ रहा है। पता नहीं यह भ्रम कैसे फैला है। परन्तु लोग तो यही मानते मालूम होते हैं कि जो काम करता है अुसकी बुद्धि बिलकुल मारी जाती है, मन्द और जड़ हो जाती है। कुदालीसे खोदनेवाले और चक्की पीसनेवालेके हाथोंमें घट्टे पड़ना तो हम समझ सकते हैं परन्तु अुसकी बुद्धिमें भी घट्टे पड़ जायं यह विचित्र कल्पना है। अनुभव तो यह है कि काम करनेसे बुद्धि तीक्ष्ण होती है, अुसका निश्चय-बल बढ़ता है। जैसे घोड़े पर चढ़कर जहां जाना हो वहां हम वेगसे पहुंच जाते हैं वैसे बुद्धि भी काम पर सवार होकर ही वेगवान बनती है। अितना सही है कि सवार यदि घोड़े पर बैठा हो तो ही अुसे घोड़ेके वेगका लाभ मिलता है वैसे ही बुद्धि यदि अुद्योगके साथ जुड़ी हुअी हो तो ही अुसे अुद्योगकी गतिका लाभ मिलता है।

यह ठीक है कि काम करनेवालोंकी बुद्धि बहुत बार जड़ निस्तेज और मन्द पाअी जाती है। यदि वे बेमनसे काम करें तो अिसके सिवा और क्या परिणाम आ सकता है? अैसे लोगोंका काम तो जैसे तैसे हो जाता है, परन्तु मन आलसी और मन्द रह जाता है। बात यह है कि शरीरका आलस्य मनुष्यको जितना मीठा लगता है अुससे भी मीठा बुद्धिका आलस्य लगता मालूम होता है। अिसलिअे वे जैसे शरीरके श्रमसे बचते हैं वैसे बुद्धिके श्रमसे भी दूर रहते हैं। परन्तु शरीरमें अीश्वरने पेट और मुंह रखा है अिसलिअे सौ फी सदी आलसी रहनेसे तो काम नहीं चलता। हाथ-पैर कुछ तो हिलाने ही पड़ते हैं। पेटके खातिर लोग अैसी पशु-मानव तुनर अुधाग भांति भांति-भांतिके काम करते हैं परन्तु बेगार समझकर करते हैं रसके बिना बुद्धिके बिना करते हैं। अिससे अेक हद तक हाथ-पैरोंमें कुशलता जरूर आती है लेकिन

बुद्धि अविकसित रह जाती है। यदि बुद्धिको साथ रखा जाय तो ये ही काम कितने प्राणवान और ज्ञानके स्रोत बन जायं?

आश्रममें हम दुनियाके अिस प्रचलित भ्रममें नहीं फंसना चाहते। हम बुद्धि और कामकी जोड़ीको साथ साथ चलाना चाहते हैं। अैसा करके हम कामके द्वारा बुद्धिका विकास करना और अुसे तेज बनाना चाहते हैं तथा बुद्धिके द्वारा कामको आसान और सफल बनाना चाहते हैं।

अिसके अलावा लोगोंने अूंचे काम और नीचे कामके भेद कर दिये हैं। कुछ कामोंकी तो जाति ही स्त्री-जाति है! अुन्हें लड़के या पुरुष कर ही नहीं सकते! आटा पीसना खाना पकाना बरतन मांजना वगैरा काम स्त्रियां हैं। अुनके संगसे लड़के जनाने बन जाते हैं! मनुष्य अकेला हो तो भूखा रहेगा अथवा बाजारमें जहां-तहां खाकर शरीरको बिगाड़ेगा परन्तु खुद खाना कैसे बनाये? मां बीमार हो और परेशान हो रही हो तो भी अुसे बरतन मांजनेमें या पीसने-कूटनेमें मदद कैसे दी जाय? चरखा चलानेका काम भी तो स्त्री-जातिका ही माना जाता था न? हम सब जानते हैं कि यह मान्यता दूर करनेमें गांधीजीको कितना परिश्रम करना पड़ा है।

अिसके सिवा जैसे समाजमें जाति-पांतिके भेद पैदा कर दिये गये हैं और ब्राह्मणसे भंगी तकके अूच-नीच भेदोंकी निसेनी बना दी गयी है, वैसे काममें भी जातिभेद खड़े कर दिये गये हैं। अिनमें गंदगी साफ करनेसे सम्बन्ध रखनेवाले काम सबसे नीची जातिके हैं। रास्ता झाड़ना और पाखाना साफ करना भंगीके काम हैं अितना ही नहीं ये काम स्वयं ही भंगी हैं! ये काम केवल गंदे ही नहीं माने जाते अिनमें कुछ न कुछ अधर्म — पाप भी माना जाता है! अिसलिअे लोग अपने घरके सामनेकी गली कितनी ही गंदी हो तो भी अुसे बुहारनेको तैयार नहीं होंगे। अपने घरका पाखाना भरकर भी बुरा बन जाने देंगे परन्तु अुसे धोयेंगे नहीं। वे मनमें कहेंगे अिस लोककी गंदगी सहन करना अच्छा है परन्तु अधर्म करके अगले जन्ममें नरक भोगना ठीक नहीं।

हम आश्रममें कामोंके बारेमें अैसे जातिभेद भी नहीं रखते और वर्गभेद भी नहीं रखते। हमारे यहां न तो कोअी काम अूंचा है और न कोअी काम नीचा है। न कोअी काम पुरुषका है न कोअी काम स्त्रीका है। हम मानते हैं कि सभी अुपयोगी काम अूंचे हैं पवित्र हैं, बल-वर्धक और बुद्धि-वर्धक हैं मनुष्यसे हमें देवता बनानेवाले हैं।

हमारे यहां भी काममें अूंचे-नीचेका अेक अलग प्रकारका भेद जरूर है। जो काम केवल हमारे अपने लिअे हो वह नीचा और जो सबकी सेवाके लिअे हो वह अूंचा। हम अपने लिअे कातकर कपड़ा पहन लें यह काम अच्छा जरूर है परन्तु आश्रमके लिअे या दरिद्रनारायणके लिअे कातना अूंचा काम है खुद भोजन बनायें और खुद खायें यह ठीक है परन्तु आश्रमके लिअे भोजन बनाना अूंचा काम है। स्वयं

फावड़ा लेकर शौच जायें और अपना मल गाड़ दें यह जरूर अच्छा है परन्तु आश्रमके पाखाने साफ करना अूँचा काम है और सब आश्रमवासी मिलकर गांवके सार्वजनिक पाखाने स्वच्छ-सुन्दर बना आयें यह अुससे भी अूँचा काम है।

हमारे लिये तो सबसे अूँचा काम वह है जिसमें सबसे अधिक सेवा हो। जिस प्रकार हमने भंगीके कामका आश्रमके सब कार्मोका शिरोमणि माना है अुसे महाकार्य की पदवी प्रदान की है। जिस कामके करनेमें बिलकुल पाप नहीं है अुल्टे हरिजनोंकी लाचार दशाका लाभ अुठाकर अुनसे यह काम कराना ही हमारी दृष्टिमें पाप है। वही काम हम स्वयं अपनी घृणाको जीतकर समाभावसे करें तो हमारे लिये वह पवित्र बन जाता है।

काम करनेको लोग बड़े बड़े पहाड़ों पर बने हुअे सुदृढ़ और अजेय दुर्ग जैसा समझते हैं। कुछ कामोका दुर्ग जिस विश्वासके पहाड़ पर बना होता है कि शरीर-श्रम दुःख है' तो किसीका दुर्ग आलस्य और अरुचिके पहाड़ पर बना होता है। कुछ कामोंका दुर्ग अूँच-नीचके भेदोंके पहाड़ पर, तो कुछका जिस अधार्मिक मान्यताके पहाड़ पर बना होता है कि अुसे करनेसे अधर्म हो जायगा'। अिनमें भी यदि किसी अेक कामका दुर्ग कठिनसे कठिन पहाड़ पर स्थित हो तो वह हमारे महाकार्य का अर्थात् पाखाना-सफाअीका है। अिसके अलावा अुसके चारों ओर घृणाकी गहरी खाओ होनसे वह और भी दुर्गम बन गया है। आप नये-नये और अुत्साहभरे आये हैं अिसलिअे मेरी सलाह है कि आप किसी समय अुस पर छापा मारकर अुसे जीत लें। आप जिस दुर्ग पर अपना झंडा फहरा सकेंगे तो फिर खाना बनाना आटा पीसना, झाड़ू लगाना पानी भरना वगैरा छोटे छोटे दुर्ग जीतनेके लिये आपको अलग लड़ाअियां नहीं लड़नी पड़ेंगी। आपकी विजय-पताका सबसे अूँचे दुर्ग पर फहराती देखकर अिन छोटे दुर्गोंके दुर्गपति पस्तहिम्मत हो जायेंगे और सफेद झंडे दिखाकर आपके सामने सुलहके लिये गिड़गिड़ाने लगेंगे।

प्रवचन २०

स्वच्छता-सैनिककी तालीम

महाकार्य के सबधमें ही आज हम कुछ और बातें करेंगे।

बाहरके समाजसे यहां कोओी नया आदमी आ जाता है तो अुसकी समझमें यह नहीं आता कि हमारा स्थान खेतोंके बीचमें होने पर भी हम पाखाने क्यों रखते हैं? खुले खेतोंमें शौच न जाकर हम क्यों व्यर्थ ही मरकखास खड़ा करते हैं? अनावश्यक पाखाने खड़े करना और फिर अुन्हें मिट्टीसे ढांकना और साफ करना अिसमें क्या बुद्धिमानी है? यह पेट मसलकर दर्द पैदा करना नहीं तो और क्या है? जहां गंदगी नहीं थी वहां स्वयं गंदगी पैदा करते हैं और फिर अुसकी सफाओी करते हैं। जहां कांटे नहीं थे वहां कांटे बोते हैं और फिर अुखाड़ने बैठते हैं। य आश्रमवाले अव्यावहारिक कहे जाते हैं सो गलत नहीं है वगैरा।

मैंने असी कुछ संस्थायें देखी जरूर हैं जो हमारी ही तरह गांवोंमें होती हैं। कोओी नदी किनारे या समुद्र-तट पर किसी रमणीय स्थान पर होती हैं तो कोओी हमारी तरह खुले खेतोंमें। वहां अुन्हें हमारी तरह पाखाने रखनेकी जरूरत नहीं मालूम होती। नदीके किनारे रहनेवाले नदीका पवित्र किनारा बिगाड़ते हैं और समुद्र-तट पर रहनेवाले लोग सुन्दर चौपाटियां गंदी कर देते हैं। अिसके जैसा विचारहीन और समाज द्रोही कृत्य और क्या हो सकता है? परन्तु संस्थायें जैसा करती हैं वैसा ही आसपासके गांवोंके लोग भी करते हों तो कौन किससे कहे?

खुले खेतोंवाली संस्थायें जब अैसा व्यवहार करने लगती हैं और पड़ोसियोंके खेतोंका अुपयोग शौचके लिये करती हैं तब वे नदी-किनारेवालोंकी तरह बच नहीं पातीं। अुन्हें खेतोंके मालिकोंकी गालियोंकी प्रसादी अच्छी मात्रामें चखनी पड़ती है। अैसे अवसर पर संस्थावासी अपनी मूर्खता न देखकर अुल्टे किसानोंको ही दोष देते हैं "कैसे जड़ हैं हमारे देशके किसान! वे खादका मूल्य ही नहीं जानते! किसान खादकी कीमत आपसे कुछ अधिक जानते हैं। परन्तु खाद डालनकी यह कौनसी पद्धति है? जिन खेतोंमें अुन्हें दिनरात काम करना होता है, जिन खेतोंकी मिट्टी अुन्हें रोज रौंदनी पड़ती है, अुन खेतोंके लोग यह कैसे सहन कर सकते हैं कि वहां मलमूत्रकी गंदगी फैले?

हमारे आश्रमके खेतोंको जब पड़ोसियोंके बच्चे बिगाड़ते हैं तब हमें वह कहां बर्दाश्त होता है? जिन खेतोंमें हम नींदने वगैराके काम करने जाते हैं शामके समय अुनमें घूमने जाते हैं और लेट भी लगाते हैं। हमारी अिच्छा यही होती है कि वे कांचकी तरह साफ रहें।

दूसरी संस्थाओंकी बात क्यों की जाय? हमारे अिस आश्रममें भी बहुत शुरूके दिनोंमें पाखाने नहीं थे। हमारे विचार भी तब अूपरके जैसे ही थ। हम भी यही मानत

थे कि खेतोंमें शौच जायेंगे तो खेतवालोंको खादका लाभ मिलेगा। पड़ोसी मल थे, परन्तु भले स्त्री-पुरुष भी गंदगीको कब तक सहन करते? अुनकी भलाअी अितनी जरूर थी कि वे लाठी लेकर हमें मारने नहीं आये। परन्तु धीरे-धीरे असंतोष बढ़ने लगा। हम समझ गये।

फिर भी हमें पाखाने बनानेका विचार नहीं आया। हमने फावड़ा या कुदाली लेकर शौच जानेका रिवाज डाला। खेतमें ही शौच जाते थे परन्तु प्रत्येक मनुष्य गड्ढा खोदकर बैठता और अुठते समय अुसे मिट्टीसे ढंक देता था। परन्तु अिस सुधारसे भी लोगोंकी नाराजी मिटी नहीं। अुन्हें यह विश्वास कैसे हो कि हम सब सावधानीसे मल्का गाड़ देते हैं? और अिस तरह गाड़ देनेसे अुनकी कठिनाअियोंका अन्त भी नहीं होता था। अुल्टी अुनकी चिन्ता बढ़ जाती थी। अुन्हें यह डर बना ही रहता कि काम करते हुअे न मालूम कब मिट्टीके साथ मैला हाथमें आ जायगा!

अिसलिअे कुछ समय तक हम बाड़ों और बबूलकी झाड़ियोंमें जाते रहे। परंतु अिससे मनको जरा भी संतोष नहीं होता था। यह विचार सदा ही खटकता रहता था कि अिस तरह खाद बेकार जाता है। हमारी गंदगी स्वयं हमें आसपास घूमनेवाले लोगों और ग्वालोंको कष्टदायक होती थी। अिसके सिवा हमारा समय-सत्रक भी अुलाहना देता रहता था। क्योंकि असे स्थान आश्रमसे काफी दूर होते थे। शौच जाकर लौटनेमें कमसे कम घण्टे पौन घंटेका काम हो जाता था। यह हमारे लिअे असह्य था।

अन्तमें हम अिस निर्णय पर पहुंचे कि पाखाने रखने ही चाहियें। और कोअी संस्था होती तो अुसे निर्णयके बाद भी कठिनाअी रहती ही क्योंकि पाखाने बनाने पर भंगी जुटानेका प्रश्न खड़ा हो जाता। हमारे जैसे छोटेसे गांवमें यह सुलभ नहीं होता। परन्तु हमारे सामने यह प्रश्न नहीं था। हम तो खुद सफाअी-काम करनेको तैयार थे। अिस सिद्धान्तको तो मानते ही थे कि हमें खुद सफाअी करनी चाहिये। और भीतर ही भीतर कुछ घृणा रही होगी तो वह अितना समय बीत जानेसे मिट चुकी थी।

अिस प्रकार अब यह लगता है कि हमने आश्रममें पाखाने शुरू करके बहुत ही अच्छा कदम अुठाया क्योंकि अिसके बिना आश्रमी शिक्षाका अेक महत्वपूर्ण अंग अधूरा रह जाता था।

पहले तो हमारी समझमें यह आया कि पाखानेका अुपयोग अितनी सावधानीसे कैसे किया जाय कि वह जरा भी खराब न हो। कोअी भंगी आकर पाखाना साफ कर जाता है तब लोग पाखानेकी कोठरीको बहुत ही बुरी तरह गंदी कर डालते हैं। अिसका अनुभव किसे नहीं है? वे मिट्टीसे पाखाना ढंकनेका रिवाज नहीं रखते और रखते हैं तो अुसे अच्छी तरह ढंकनेकी परवाह नहीं करते। बैठक बाल्टी दीवारें, कोने सभी बिगाड़ दिये जाते हैं। पानी गिराने या थूकनेमें कुछ भी विचार नहीं किया जाता। अिसका किसीको खयाल तक नहीं आता कि हमारे ही किसी भाअीको यह

गंदगी साफ करनी है जिसलिये जिस तरह पाखानेका अुपयोग करें कि अुसे तकलीफ न हो।

शहरोंके पाखानोंमें तो दुगुनी कठिनाअी होती है। लोगोंको खुद धोनेकी घृणा होती है। और भंगीको छू जानेके डरसे वहां घुसने नहीं देते। जिस प्रकार भंगीको अनावश्यक दुःख देते हैं और खुद भी स्वच्छताका सुख भोगना नहीं जानते। जिससे पाखाना जितना गंदा रहता है कि अुसका नाम सुनकर ही हमें घृणा होती है।

आश्रममें हमने स्वयं सफाअी करनेका नियम रखा है। जिसलिये अब अुसका रूप ही बदल गया है। पाखानेकी कोठरीको हम किसी स्वच्छ शान्त और हवा रोशनीवाले अेकान्त वाचनालय जैसी रख सकते हैं। अब तो स्वच्छ पाखानोंका अनुभव करनेके बाद कभी शहर या गांवके पाखानोंमें जानेका अवसर आता है तो हमारा दम घुटने लगता है। जिसमें शंका नहीं कि आप नये आश्रमवासियोंको भी थोड़े समयमें अैसा ही अनुभव होने लगेगा।

हम आश्रमवासी दो महान सुख सहज ही भोग रहे हैं, जो बाहर रहनेवाले लोगोंके लिये लगभग दुर्लभ हैं। अुनमें से अेक है हमारा स्वच्छ पाखाना और दूसरा है खुले आकाशके नीचे सोना। कहीं जाने पर जिन दोनों सुविधाओंके अभावमें हमें पानीसे बाहर रहनेवाली मछलीके जैसी बेचैनी होती है।

हम पाखाने खुद साफ करने लगे जिससे हमारे आचार-विचारमें कुछ मौलिक परिवर्तन हो गये हैं। पहले गंदगीसे हमें घृणा होती थी गंदगी देखी कि वहांसे भागनेका जी होता था। जबसे पाखाने स्वयं साफ करनेका हमने अनुभव किया है तबसे जिस तरह गंदगीसे भागनेमें शर्म महसूस होती है। अुसके साथ युद्ध कर लेनेकी जिच्छा होती है। कहीं गन्दे पाखाने देखते हैं तो झाड़ू पानी वगैरा साधनोंसे अुन गंदी कोठरियोंकी कामचलाअू सफाअी करनेका मन हो आता है।

खुद सफाअी करने लग जानेसे दूसरा और सबसे बड़ा लाभ हमें यह हुआ है कि भंगीका काम करनेवाले स्त्री-पुरुषोंके प्रति हमारी सहानुभूति अधिक गहरी हो गयी है। अब हमारी समझमें आता है कि किसीकी गरीबी और लाचारीसे लाभ अुठाकर अुसे अपना भंगी बनाना महापाप है।

अब हमारी समझमें यह भी आता है कि किसीसे भंगीका काम लेना जरूरी हो तो भी सफाअीके साधन अैसे रखने चाहिये जिससे अुसका काम जरा भी गंदा न रहने पाये। वह काम करने आये तब घरके मालिकको अुसके साथ रहकर बाल्टी अुठाने और पानी डालकर पाखाना धुलवाने वगैरामें मदद करनी चाहिये।

अैसे विचार बन जानेके बाद हमारे हृदयके किसी कोनेमें भी अस्पृश्यताकी पापपूर्ण भावना रह ही कैसे सकती है? हमारे अेक देशबंधुको अछूत माननेका रिवाज हमारे देशमें कैसे पड़ा होगा जिसके अैतिहासिक कारण भले कुछ भी हों परन्तु मुझे तो जिसकी अुत्पत्ति लोगोंकी घृणासे ही हुअी दीखती है।

कितनी भयंकर है हमारे लोगोंकी घृणा! घृणाके मारे वे कितने विचारहीन और पागल जैसे बन जाते हैं! अुनके लिअे पाखाना बना दिया जाय और पासमें मिट्टीका ढेर रख दिया जाय तो भी व अुसे काममें नहीं लेंगे। पीछे घूमकर मल पर मिट्टी डालनेमें अुन्हें कंपकंपी हो जाती है। व अुसमें ही दोष जायेंगे। जिसमें भी दूर जानेका आलस्य होता है और खेतमें बैठने लगे तो किसान शोर मचाते हैं। जिस-लिअे वे गांवके निकटवर्ती तालाबों नदियोंके किनारों अथवा रास्तों पर बैठते हैं। जिसके फलस्वरूप तालाब-नदीका पानी खराब होता है आने-जानेवाले ग्रामवासियोंके पैर खराब होते हैं और गांवमें घुसते ही आसपास भयंकर दुर्गन्ध अुठती है। आज प्रत्येक गांवकी स्थिति अैसी हो गअी है।

घृणाके कारण हमारी बुद्धि बिलकुल जड़ हो गअी है। हमें सूझता ही नहीं कि गंदगी न होने देनेके लिअे किन नियमोंका पालन करना चाहिये। गंदगी साफ करनेका अच्छेसे अच्छा तरीका ढूंढनेका अुपाय भी हमें नहीं सूझता। हमारी घृणावाली बुद्धिने हमें यही सुझाया कि सफाअी-काम करनेवाले लोगोंको हम दूर रखें और अुनका स्पर्श न करें। 'कैसे मैले लोग हैं! यह कह कर हम मुंह बनाते हैं और अुनसे दूर भागते हैं। अुन्हें स्पर्श नहीं करते अुन्हें पास नहीं आने देते और गांवमें रहने भी नहीं देते। हमारी घृणा तो सीमा पार कर चुकी है। हमने अुसे धर्म ही बना डाला है। हरिजनोंको गांवके कुअेंसे पानी नहीं भरने देते अुनके बच्चोंको गांवकी पाठशालामें पढ़ने नहीं जाने देते बीमार हो जाय तो अुनकी दवादारू नहीं करते यहां तक कि भगवानके देवालयोंमें भी हम अुन्हें दर्शन करने नहीं आने देते!

अैसी विचारहीन घृणासे हमने हरिजनोंका तो द्रोह किया ही है साथ ही घृणा करते करते हम खुद भी गंदगीके नरकसे घिर गये हैं। हमारे रास्ते हमारे पाखाने हमारे कुअें-बावड़ी हमारे नदी-तालाबोंके किनारे और हमारे गांव जैसे गंदे हो गये हैं वैसे दुनियामें कहीं भी नहीं होंगे। यह हमारी घृणाके पापका ही फल हमें मिला है।

अिस तरह गंदगीसे घृणा रखकर पागलोंकी तरह अुससे दूर भागनेमें क्या मनुष्यता है? हमारा महाकार्य अिस घृणाको जीतनेकी हमें सुन्दर शिक्षा देता है। जिसके सिवा हमें अपनी ही घृणाको जीतकर और सफाअीसे रहकर संतोष नहीं कर लेना है। हमें स्वच्छताके वीर सैनिक बनना है। हम अपने सारे देशको गंदगीके कलंकसे अुबारना चाहते हैं। हमारी प्रजा अेक जमानेमें पवित्रताकी पुजारी बन गयी थी। हमें फिरसे अुसे वैसी ही बनाना है। अिसी भावनासे हमने आश्रममें पाखाने रखे हैं और हम अुन्हें खुद ही साफ करनेका शौक अपनेमें बढ़ाते हैं।

प्रवचन २१

अस्पृश्यता निवारणकी कुंजी

कल हमने देख लिया कि हमारे पाखानोंका और स्वयं पाखाना-सफाअी करनेका हेतु यह तो है ही कि हमें सफाअीसे रहनेको मिले परन्तु अितना ही हेतु नहीं है। हम अिस कामके जरिये स्वच्छता-सैनिककी तालीम भी पा रहे हैं। हम देशसे पाखाना-सफाअीकी घृणाको निकाल कर लोगोंमें स्वच्छताका शौक सफाअीके कामका शौक फैलाना चाहते हैं।

परन्तु क्या आप जानते हैं कि अिसके पीछे अिससे भी बड़ा अेक तीसरा हेतु है? वह हेतु है सफाअीका काम करनेवाले परम अुपकारी हरिजनोंकी प्रतिष्ठा बढ़ानेका देशमें से अस्पृश्यताके पापको जड़से अुखाड़नेका।

भंगी अपना धंधा दबकर डरकर, पेट भरनेका दूसरा कोअी साधन न होनेकी लाचारीसे करते हैं। वे दुनियाके सामने सिर अूंचा नहीं कर सकते। अैसी हालतमें वे लोगोंसे यह मांग करनेकी हिम्मत कहांसे लायें कि पाखानेमें अैसे साधन रखिये जिनसे हमारे हाथ-पांव वगैरा अंग खराब न हों और मिट्टी काममें लीजिये? यह कहनेका साहस भी वे कहांसे बटोरें कि अगर हमसे पाखाना साफ कराना हो तो अुसकी कोठरी बड़ी बनाअिये और हमें अुसके भीतर आने दीजिये? तब फिर यह तो वे कह ही कैसे सकते हैं कि जब हम काम करने आयें तब घरवाले हमारी मदद करें? यह मांग भी वे कैसे कर सकते हैं कि हम सिर पर मैला अुठानेको तैयार नहीं हैं अिसलिअे हम कहें वैसी गाड़ियां हमें दीजिये और मैला गाड़नेके लिअे काफी जमीन दीजिये? और यह मांग करनेकी हिम्मत भी अुनकी कैसे हो कि हमारे नहाने-धोनेके लिअे स्नानागार बनवा दीजिये और अुनमें काफी मात्रामें पानीकी व्यवस्था कीजिये?

अैसी मांग कोअी हरिजन करे तो गांववाले या नगरपालिकाके सदस्य बड़ी-बड़ी आंखें निकालकर अुन पर गुर्रायेंगे अुन्हें डरा-धमका कर चुप कर देंगे। यह अुनकी बुद्धिमें ही नहीं आयेगा कि भंगियोंकी ये मांगें अुचित हैं। परन्तु हम जो पाखानोंकी सफाअीका काम करते हैं अपने अनुभवसे तुरंत समझ लेते हैं कि ये मांगें जैसी होनी चाहियें अुनसे बिलकुल हलकी हैं। क्योंकि हम अनुभवसे जानते हैं कि अूपर बताअी हुअी सुविधाओंमें से अेक भी सुविधा कम हो तो हम पाखाना-सफाअीका काम करनेको कभी तैयार नहीं होंगे। अैसे साधन दिये बिना किसी भी मनुष्यसे पाखाना-सफाअीका काम कराना कितना भयंकर जुल्म है यह हमारे जैसे अनुभवी जितना समझ सकते हैं अुतना और कोअी समझ नहीं सकते। हम केवल समझ ही नहीं सकते परन्तु यदि हमारे गांव या शहरमें हमारी कुछ भी चले तो हम खुद ही आगे होकर हरिजनोंको अैसी सुविधायें दिलायेंगे।

युग युगसे दलित स्थितिमें रहते आये, अस्पृश्य माने जाते रहे हरिजन गंदगीके सहवासके आदी हो जाते हैं, अिसलिये वे स्वयं अपनेको नीचे और गंदगी मामलेको पैदा हुवे मानते हैं। अुनसे यह आशा कैसे रखी जा सकती है कि वे हिम्मत करके अूपरकी मांगें आज ही समाजके सामने पेश कर देंगे? परन्तु अुनके कामका अनुभव रखनेवाले हम जैसे लोग अुनकी जरूरतें अुनसे अधिक जान सकते हैं। ये जरूरतें पूरी करानेके लिअे अुनकी तरफसे लड़ना हमारा पवित्र कर्तव्य हो जाता है।

सचमुच पाखाना-सफाअी करनेसे हरिजनोंके प्रति हमारा रवैया अेकदम बदल जाता है। हम अुनके अुपकारकी कदर अच्छी तरह समझ सकते हैं। अुनके दुःखसे हम दुःख अनुभव कर सकते हैं। अुनके प्रति हमारे मनमें सहानुभूति पैदा होती है। अस्पृश्यताका कलंक हमें असह्य हो अुठता है और हमें लगता है कि हरिजनोंके खातिर हम जितना बलिदान दें अुतना थोड़ा ही है। यह स्वाभाविक है कि हरिजनोंके मनमें भी केवल वाणीकी सहानुभूति दिखानेवालोंकी अपेक्षा अुनका काम करनेवाले हम जैसोंके प्रति अधिक प्रेम और आदर पैदा हो।

हमारे आश्रममें शुरूमें कोअी हरिजन सदस्य नहीं थे। जबसे हमने पाखाना-सफाअी जारी की तबसे आश्रमकी अिस बड़ी कमीके लिअे हमारा मन दुःखी रहा करता था। दिलमें हमेशा यही लालसा बनी रहती थी कि हरिजन आश्रममें हम सबके साथ रहें, खाने-पीनेमें, कामकाजमें, सेवामें हम सब ओतप्रोत होकर रहें। आश्रमकी अिस शिक्षाको हम सच्ची शिक्षा मानते हैं, अुसका रसास्वादन करके वे भी अपनी योग्यता बढ़ायें तो कैसा अच्छा हो!

यों तो हमारे यहां चार हरिजन जुलाहोंके परिवार रहते ही हैं। अुनको नियमित धंधा देकर अुनके साथ समानता और प्रेमका संबन्ध रखकर हम सहज ही अुनकी कुछ न कुछ सेवा कर सकते हैं, यह बड़ा लाभ है। यद्यपि वे केवल धंधेके लिअे ही हमारे पास रहते हैं, फिर भी आश्रम-जीवनका कुछ न कुछ असर अुन पर जरूर पड़ता है। अुनके घरोंमें सफाअीकी लगन बढ़ती है, बोलने चालनेमें भी विवेक और सभ्यता बढ़ती है, अुनके पारिवारिक जीवनमें मारपीट और लड़ाअी-झगड़े काफी घट जाते हैं, प्रामाणिक व्यवहार और सत्य आदि गुण भी अुनमें विकसित होते देखे जाते हैं। गरीबीके कारण यह आशा रखना बहुत अधिक होगा कि वे पैसेके आकर्षणको अेकदम जीत लें। अिसलिअे वे दो पैसे अधिक कमानेकी दृष्टिसे देर तक करघा चलाते रहते हैं और आश्रम-जीवनके प्रार्थना, कताअी-यज्ञ वगैरा कामोंमें शरीक नहीं होते।

फिर भी अितना तो मालूम होता ही है कि दूर रहते हुवे भी वे आश्रम-जीवनका सार निकाल कर अुसे अपने जीवनमें गूंथ लेते हैं। जिसके कुछ अदाज मैं अूपर बता चुका हूं। अिसके सिवा वे धीरे-धीरे अपने कपड़ोंमें खादीका अुपयोग बढ़ाते जा रहे हैं, कताअीको भी अपने जीवनमें दाखिल कर रहे हैं, देशको पहचानने लगे हैं

और राष्ट्रीय अुत्सवों और समाओं वगैरामें सबके साथ अुत्साहसे शामिल होने लगे हैं। आश्रमके सफाअी जैसे सार्वजनिक कामोंमें हम अुन्हें खींचनेका कोअी प्रयत्न नहीं करते तो भी यहांके वातावरणमें वे अपना कर्तव्य समझ जाते हैं और काममें अपना भाग आग्रहके साथ मांग लेते हैं।

अैसे अेक जुलाहा परिवारने अपने अेक छोटे लड़केको आश्रमकी शिक्षा लेनेके लिअे हमें सौंपा था। अुनके अिस कामको मैं छोटा काम नहीं मानता। अुनकी स्थितिको देखते हुअे लड़केसे कुरकियां भरवाना ही अुनके लिअे स्वाभाविक होगा। और पढ़ानेका साहस करें तो भी बाजारमें चलनेवाली सरकारी शालाकी शिक्षा पानेका ही अुन्हें लालच होगा। वह बालक कुछ वर्ष यहां रहा था। आश्रम-जीवनके सभी कामोंमें वह सदा सबके साथ रहता था। वह अपनी जातिको बिलकुल भूल गया था और अपनेको आश्रमका ही सदस्य मानकर आनन्द करता रहा। आज भी वह आश्रम पर खूब ममता रखता है और अपने व्यक्तिगत जीवनमें आश्रमकी शिक्षाकी यथाशक्ति रक्षा कर रहा है। आप समझ सकेंगे कि समाजमें प्रचलित अस्पृश्यताके बुरे रिवाजका दर्द अपने दूसरे जाति-भाअियोंकी अपेक्षा वह कितना अधिक अनुभव करता होगा। अैसे अनेक युवक निकलें तो अस्पृश्यता अपने-आप मिट जाय किसीको अछूत कहनेमें सवर्ण खुद ही शरमाने लगें।

हरिजन-सेवाका काम करनेवाले मित्रोंसे मेरी स्थायी प्रार्थना है कि आश्रम शिक्षाका जिज्ञासु कोअी हरिजन मिले आप तो अुसे आश्रमका नाम जरूर सुझाया जाय। परन्तु शिक्षित समाजमें से भी अिस सिद्धान्तका दूध पचानेकी अिच्छा रखनेवाले अधिक लोग कहां निकलते हैं कि हम हरिजनोंके अधिक संख्यामें न आनेका अफसोस करें? फिर भी कोअी साहसी भाअी कभी-कभी आ जाते हैं अुस समय मुझे अैसा संतोष होता है कि हमारी अेक बड़ी कमी पूरी हुअी आश्रमके चेहरे पर आंख ही नहीं थी वह मानो नअी निकल आअी।

अैसे हरिजन सदस्य जब आ जाते हैं, तब मेरे मनमें अेक परेशानी हमेशा बनी रहती है। अुन्हें और सब कामोंमें तो निमंत्रित करते हुअे मैं प्रसन्न होता हूं परन्तु महाकार्य में अुन्हें शरीक करनेको जी नहीं करता। और जिसे हमने महाकार्य की पदवी दी अुससे अुन्हें अलग रखना भी अच्छा नहीं लगता। अिस प्रकार दोहरी परेशानी होती है। पहले क्षण अैसा लगता है कि जिस धंधेने हरिजनोंको गन्दगी और मैलेपनमें ढकेल कर अस्पृश्य बनाया अुसमें अुन्हें कैसे शामिल करूं? यहां आश्रममें तो मुझे अुन्हें अुजलेसे अुजला काम ही देना चाहिये मुझे अुन्हें अिस तरह मान-सम्मानके साथ रखना चाहिये कि अपने अस्पृश्य जातिके होनेका स्मरण भी अुन्हें न हो। परन्तु दूसरे क्षण फिर विचार आता है कोअी भी काम नीचा नहीं है। काम तो मनुष्यको अूंचा अुठाता है। यह आश्रम-विद्या क्या मैं अुन्हें न दूं? दूसरे सैनिक गंदगीको देशसे निकाल बाहर करनेका जो अुत्साह अनुभव करते हैं, अुस

अुत्साहको क्या आश्रमवासी हरिजन कभी अनुभव नहीं करेंगे? अुन्हें यह अनुभव यदि न हो सके तो अुनके लिअे आश्रमकी शिक्षा व्यर्थ ही मानी जायगी।

अिस प्रकार मैं गहरे विचारमें पड़ जाता हूं परन्तु हरिजन मित्र मुझे बहुत देर टिकने नहीं देते। वे आमन्त्रणकी बाट नहीं देखते। वे आश्रमके सब कामोंमें सबसे अधिक अुत्साहके साथ जुट जाते हैं और 'महाकार्य' में भी किसीसे पीछे नहीं रहते। आश्रम शिक्षाकी गंगा अस्पृश्यताको कितने सुन्दर ढंगसे धो डालती है यह दृश्य देख कर परम आनन्द हुअे बिना नहीं रहता।

अैसा विश्वास हो रहा है कि आश्रमी शिक्षा सच्चा और स्थायी अस्पृश्यता-निवारण करती है। अिससे सवर्ण यह भूलता है कि वह अूंचा है और हरिजन अिस बातको भूलता है कि वह नीचा है। अिससे सवर्ण गंदगीकी घृणासे बाहर निकलता है और हरिजन गंदगीको सहन कर सकनेकी आदतसे अूपर अुठता है। अिससे सवर्ण महाकार्य करके पावन बनता है और हरिजन स्वाभिमानके साथ 'महाकार्य' करनेकी कला सीखता है। अिससे सवर्ण और हरिजन दोनोंके हृदय प्रेम-ग्रंथिसे बंधते हैं और दोनों कंधेसे कंधा मिलाकर देशके स्वच्छता-सैनिकके पवित्र धर्मका पालन करते हैं।

महाकार्य करते समय आप अपने मनमें अैसे विचार करेंगे तो अुसमें आपको अपूर्व आनन्द आयेगा। अिसमें से आप अलौकिक शिक्षा प्राप्त करेंगे। अिससे अस्पृश्यता निवारणके धर्मकी कुंजी आपके हाथमें आ जायगी।

प्रवचन २२

स्वयपाक

यहां आते ही आपको हमारे अेक या दूसरे रसोअीघरमें भरती कर दिया गया है अथवा यों कहिये कि रसोअीघरोंके पुराने सदस्योंने आपको पकड़ लिया है।

आप सोचते होंगे कि आश्रमके सभी सज्जन हमारी कितनी परवाह करते हैं हमारे भोजनकी व्यवस्था करनेको वे खास तौर पर अिकट्ठे हुअे हैं और आग्रह करके प्रत्येक रसोअीघर हमें कैसे खींच रहा है। परन्तु अब अितने दिनके अनुभवसे आप समझ गये होंगे कि अिसमें अिन सज्जनोंकी केवल भलाअी ही नहीं थी। अुन्हें आपके खान-पानकी व्यवस्था करनेकी चिन्ता तो थी ही परन्तु असली चिन्ता आपको स्वयं-पाकके काममें लगा देनेकी थी! अब सदस्य आपकी तरफ अिसी नजरसे देखते थे कि भोजन बनानेवाले साथीके रूपमें आप कैसे सिद्ध होंगे।

रसोअीघरके सुन्दर कार्यमें आपका अितने दिनका अनुभव कैसा रहा होगा? आपमें से जो अभी तक चूल्हे पर अच्छी तरह काबू नहीं पा सके होंगे, अुन्हें धुअेंके कारण आंखें मलनेके प्रसंग आते ही होंगे। खास तौर पर अैसे प्रसंगों पर क्या आपके मनमें

यह विचार नहीं आता 'आश्रममें अपने हाथसे भोजन बनानेका रिवाज जिन लोगोंने क्यों रखा होगा? जिसमें कितना समय खराब होता है? जितना समय कोओी और अधिक अुपयोगी तालीम लेनेमें बिताया जा सके तो कितना लाभ हो?"

आपको तो भूखके कष्टसे यह विचार सूझता होगा परन्तु बहुतसे मित्र आश्रमी शिक्षाका कार्यक्रम दूर रहकर देखते हैं और अुसके कष्टोंकी कल्पना करके मनमें घबराते हैं। अुन्हें आश्रमके कष्टोंमें स्वयंपाक बड़ेसे बड़ा कष्ट लगता है।

मैं आपको रोज अलग अलग ढंगसे आश्रमी विचार समझा रहा हूं। अुस परसे आप समझ गये होंगे कि कष्टोंसे निबटनेकी आश्रमी पद्धति कुछ अलग ही है। आम तौर पर लोग कष्टोंसे भागते हैं परन्तु हम कष्टोंका बहादुरीसे सामना करते हैं। अिसलिये यदि यह मान लें कि स्वयंपाक बहुत बड़ा कष्ट है तो भी हम जानते हैं कि यह जीवनके साथ जुड़ा हुआ कष्ट है। अुससे भागनेसे कोओी लाभ नहीं होगा। तो फिर अुत्साहपूर्वक हंसते-हंसते अुसका सामना क्यों न किया जाय?

दूसरे, विचार करनेकी हमारी आश्रमी पद्धति असी है कि कोओी काम कष्टमय हो और फिर भी जीनेके लिये करना जरूरी हो तो न्याय यह है कि अुसे हम खुद ही करें, अपने लिये कष्ट अुठानेका फर्ज हम दूसरे पर न डालें। कुटुम्बोंमें पुरुष अपना भार स्त्रियों पर डालकर खुद स्वयंपाकके कष्टसे बचे रहते हैं। अपने आश्रममें हम अिस न्याय पर नहीं चलना चाहते। हम यहां स्त्रीके काम और पुरुषके काम असा भेद नहीं करते। और करते भी हैं तो अिस तरह कि मेहनतके भारी काम पुरुष करें और तुलनामें हल्के काम स्त्रियां करें। परन्तु भोजन बनाना पीसना कूटना कपड़े धोना आदि काम नीचे और कष्टमय हैं अिसलिये वे स्त्रियोंके माथे मढ़े जायें असा न्याय हम कभी पसन्द नहीं करेंगे।

अगर पुरुषोंकी तरह स्त्रियां भी रसोओी वगैरा कामोंको नीचा मानने लगें, तो हमारे परिवारोंकी क्या स्थिति हो? वे अुन्हें नीचा नहीं समझतीं परन्तु अपने स्वाभाविक जीवन-कार्य मानकर अुन्हें प्रेमसे करती हैं अुनमें अपनी संपूर्ण कला और आत्मा अुंडेल कर करती हैं और अुन्हें करते हुओ सुखका अनुभव करती हैं। अिस प्रकार जो काम हमारी माताओं करती हैं वह नीचा कैसे हो सकता है? कार्य विभाजनके लिये ये काम स्त्रियां करती हैं परन्तु अिसलिये पुरुष अुन्हें नीचा समझ कर जरूरत पड़ने पर भी करनेमें शरमायें यह कैसी विचित्र बात है? जीवनके किसी भी जरूरी कामकी तरह ये काम भी अच्छे और शुभ हैं और अुन्हें करनेमें किसीको न तो शरमाना चाहिये न अपनी तौहीन समझनी चाहिये। अिनमें दूसरे किसी भी कामकी तरह जीवनकी शिक्षा और तालीम भरी हुओी है।

यह समझ कम होनेके कारण परिवारोंमें स्त्रियोंका जीवन कओी बार बहुत ही दुःखमय हो जाता है। बड़े परिवारोंमें अुनके सिर कामका बोझ बूतेसे ज्यादा या

नौकर चाकरके लिओ कैसे स्थान हो सकता है? सेवकोंको दूसरे सेवकोंकी जरूरत पड़े तो वे जनताकी सेवा कैसे करेंगे?

परन्तु नौकर न रखनेका अितना ही कारण नहीं है। हमने आश्रमकी शिक्षाका जो पाठ्यक्रम सोचा है अुसमें स्वयंपाकको अेक महत्त्वके विषयके रूपमें स्थान दिया है।

क्या आप यह सुनकर मन ही मन हंसते हैं? "हमारी संस्था गरीब है हम नौकर नहीं रख सकते अिसलिओ हमें सब काम हाथोंसे करने हैं यों कहें तब तक तो हम समझ सकते हैं। परन्तु आपने तो स्वयंपाकको पाठ्यक्रममें शामिल करके सातवें आसमान पर पहुंचा शुरू कर दिया।" माफी है आप यह तो नहीं कहेंगे कि आपको पढ़ा पढ़ाकर चूल्हेमें झोंकनेके लिओ हमने अैसा किया है। सचमुच ही अिस शिक्षाके बिना आश्रमी शिक्षा अधूरी रहती है।

अीश्वरकी बड़ी कृपा समझनी चाहिये कि जितने भी कामकाज हमारे जीवनमें लिओ अधिक महत्त्वके हैं अुन सबमें शिक्षाके अुत्तम बीज मौजूद हैं। जिस प्रकार हमारे खाने लायक जितनी भी वस्तुअें हैं अुन सबमें कुदरतने रुचिकर स्वाद भर दिये हैं अुसी प्रकार अुसने सब अुपयोगी कामोंमें आनन्द और शिक्षा भर दी है।

जबसे हम स्वयंपाक करने लगे हैं, तबसे आहार और अुससे संबंध रखनेवाले अनेक विषयोंके बारेमें हमारी बुद्धि अलग ही ढंगसे काम करने लगी है। मुझे अिस बारेमें काफी शंका नहीं कि आपको भी अैसा ही अनुभव होगा। पहले तो अितना ही विचार आता था कि खाना स्वादिष्ठ बना है या नहीं। खाना बननेमें देर-सबेर हो जाती तो अधीर बन जाते थे। अिसके सिवा शायद ही कोअी विचार आते थे। हमें पता ही न था कि अिस विषयमें हमें बहुत कुछ जानना समझना और करना है।

चूल्हेके पास रोज २–३ घंटे बैठने पर अब हमें यह विचार आये बिना नहीं रहता कि क्या अैसा चूल्हा नहीं बन सकता जिसमें धुआं न हो? हमारे खुले चूल्हेमें अीधनकी बहुतसी गर्मी बाहर निकल कर बेकार जाती है। क्या अैसा चूल्हा नहीं बन सकता जिससे पूरी गर्मीका लाभ मिले और अीधनमें भी किफायत हो?

और रोज तीन घंटे स्वयंपाकमें देनेसे यह विचार भी आता है कि अिस काममें जितना समय दिया जाता है अुतना क्या सचमुच जरूरी है? हम जो जो चीजें जिस जिस ढंगसे बनाते हैं वे ढंग क्या बिलकुल ठीक हैं? सब तरकारियोंको अुबाल अुबाल कर हम निःसत्त्व तो नहीं कर डालते? हम रसोअीमें जरूरतसे ज्यादा भाग तो काममें नहीं लेते? हम जान-बूझकर तो कष्ट मोल नहीं लेते? मेहनत करने और समय गंवाकर लाभ प्राप्त करनेके बजाय खुराकके तत्त्व तो नहीं गंवा बैठते?

विचारकी तीसरी दिशा अिस तरह होती है — हमारी खुराककी चीजोंके गुण दोष क्या क्या हैं? शरीरके लिओ जरूरी सारे तत्त्व हमारी खुराकसे हमें मिल जाते हैं?

अनाजोंको पीस कर दलकर, भुबालकर, पकाकर और अुनमें तरह तरहके मिर्च-मसाले डालकर खाना क्या ठीक है? कुदरतने ये सारी क्रियायें जिन फलोंमें खुद ही कर दी हैं अुन फलोंका अधिक सेवन करना क्या अुचित नहीं?

यदि बुद्धिपूर्वक स्वयंपाक करें तो अुससे अनायास हमें कैसे शिक्षा मिलती जाती है अिसकी थोड़ी दिशायें ही मैंने यहां बताओ हैं। अिन सब विचारोंमें से ही किसी दिन हम अैसी सच्ची राष्ट्रीय खुराककी खोज कर सकेंगे जिसमें बल, बुद्धि और आयुष्य बढ़ानेवाले तत्त्व हों जो देशके गरीबसे गरीबको मिल सके जिसे तैयार करनेमें कमसे कम समय लगे तथा अग्नि और मसालोंका कमसे कम अुपयोग करना पड़े।

अिसके सिवा यदि हम कुशल स्वयंपाकी बनेंगे तो ही हमारी नजर केवल अूपरी स्वाद पर न रहकर खुराकके छिपे हुअे सूक्ष्म स्वादोंकी तरफ जायगी। पहले गलत रंगोंके धब्बे लगाना फिर अुन्हें दबानेके लिअे दूसरे रंग चढ़ाना और दूसरे रंगोंको दबानेके लिअे तीसरे प्रकारके रंग चुपड़ना यह कुशल चित्रकारका काम नहीं है। अिसी तरह कुशल स्वयंपाकी बन कर जब हम सूक्ष्म स्वादोंके पारखी बनेंगे तब मसालोंके स्थूल स्वादोंसे भिन सूक्ष्म रसोंको दबाते समय हमारे हाथ कांपेंगे। अिस प्रकार यदि हम स्वयंपाककी सच्ची शिक्षा लेंगे तो स्वादके सच्चे जानकार बनेंगे और यह भी सीखेंगे कि अिसीका दूसरा नाम संयम है।

अलबत्ता किसी रसोअियेकी तरह हम यांत्रिक ढंगसे रसोअी बनायेंगे तो अिनमें से अेक भी चीज हमें प्राप्त नहीं होगी। हम तो स्वयंपाकको शिक्षा मानकर ही करेंगे। हम गहरे अुतर कर, दिलचस्पी लेकर, बुद्धि लगाकर तथा आत्मा अुंडेलकर स्वयंपाक करेंगे और अुसमें से यह शिक्षा और अिससे भी कहीं अधिक समृद्ध शिक्षा प्राप्त करेंगे।

पावन करनेवाला पसीना

हम सब रोज सबेरे तो नहाते ही हैं। परन्तु शाम पड़ने पर नहानेका मन किस किसका होता है यह मुझे आज जानना है।

यों तो आपमें से कुछ लोग पानीके शौकीन होंगे। हमारे आश्रममें गांवोंके बनिस्बत पानीकी ज्यादा छूट है और दिन भी गर्मीके हैं अिसलिये शामको भी आपमें से कुछ लोग नहाते होंगे। लेकिन यह अैसे लोगोंकी बात नहीं है। हमें तो यह जानना है कि दिनमें मेहनत-मजदूरी करके खूब पसीना आया है अिसलिये शामको न नहानेसे जिनका मन बेचैन हो जाता है अैसे हममें कितने लोग हैं? जिसके शरीरमें बहुत चरबी होनेसे अथवा कोअी रोग होनेसे पसीना निकलता हो अुसकी भी हम बात नहीं करते। हमारा प्रश्न तो यह है कि पसीना बह निकलनेकी हद तक सख्त मेहनत दिनमें किसने किसने की है?

यह प्रश्न यदि गांवमें जाकर किसानों और हलवाहोंका अिकट्ठा करके पूछें तो अुनमें से हरअेक आदमी अपना हाथ अूंचा करेगा। वे सबेरे भले न नहाते हों परन्तु शामको तो अचूक रूपसे नहाते हैं। अिसके बिना अुन्हें खाना भी नहीं भाता और नींद भी नहीं आती — अितने वे पसीनेसे तरबतर हो जाते हैं। परन्तु आश्रममें हम सब अीमानदारीसे अिसका अुत्तर दें तो मैं नहीं मानता कि बहुत हाथ अुठ सकेंगे। मैं समझता हूं कि अिस हद तक हमारा आश्रम-जीवन अभी कच्चा है। अिस आधार पर हम रोज अिस बातका माप निकाल सकते हैं कि दरिद्रनारायणके जीवनमें और अुनके सेवकोंके जीवनमें अभी कितना बड़ा फर्क है। दरिद्रनारायण सख्त मेहनतमें दिन बिताते हैं अिसलिये शाम पड़ने पर पसीना पसीना हो जाते हैं जब कि हम अुनके सेवक तुलनामें हलके काम करके दिन बिताते हैं ज्यादातर बैठकर किये जानेवाले काम करते हैं अिसलिये पसीनेका अनुभव बहुत कम कर पाते हैं।

हाथ अुठवाये बिना भी स्वामी-सेवकके बीचके अिस भेदको नापनेके और बहुतसे चिह्न हैं। स्वामी अर्थात् ग्रामवासियोंके हाथोंकी चमड़ी बड़े परिश्रमसे कड़ी पड़ जाती है हम सेवकोंके हाथ तुलनामें कोमल होते हैं। स्वामियोंके कपड़े घिसते हैं पसीने और मिट्टीके मिश्रणसे मैले होते हैं। सेवकोंके कपड़ों पर सारा दिन बीत जाने पर भी घिसावट या मैलेपनके चिह्न दिखाअी नहीं देते। स्वामी सूखी रोटी खाने पर भी अुसके सब तत्त्व हजम कर सकनेके कारण सुदृढ़ शरीरवाले होते हैं, सेवक आहारशास्त्रियोंकी सलाहके अनुसार खुराकमें जरूरी तत्त्वोंकी बहुत सावधानी रखते हुअे भी शरीरसे ढीले-ढाले रहते हैं। स्वामीको सोते ही मीठी नींद आ जाती है सेवकोंको देर तक दिया जला कर लेटे लेटे पढ़ते रहना पड़ता है। यह वर्णन हम आश्रमवासी सेवकोंको जिस हद तक लागू होता है अुस हद तक हमारा जीवन अधूरा है आदर्शसे नीचा है यही समझना चाहिये।

हम आश्रममें २४ घंटेका हिसाब तो बराबर पेश कर सकते हैं। अुसमें खाली और बेकार माना जाय अैसा अेक भी घंटा न बितानेकी हम सावधानी रखते हैं। नींदकी गोदमें आराम करनेके समयको छोड़ बाकी सारे समय हम किसी न किसी कार्यक्रममें लगे ही रहते हैं। यहां तक तो ठीक है। परन्तु आज हमें यह विचार करना है कि २४ घंटेमें से पसीना लानेवाली मेहनतके लिअे हम कितना समय देते हैं?

यों तो मैं अपना समय प्रार्थनामें कक्षाओंको पढ़ानेमें कातनेमें पढ़ने-लिखनेमें, पत्रव्यवहार करनेमें कामकर्ता-सम्मेलनोंमें भाग लेनेमें और शामको दो घड़ी घूमनेमें बिताता हूं और अपने अेक अेक मिनटका अुपयोग करता हूं। विद्यार्थियोंके कामकाजमें कहीं-कहीं फर्क होता है। वे कवायी बुनायी वगैरा अुद्योग सीखनेमें अधिक समय देते हैं। जिस हद तक मेरे जीवनसे अुनका जीवन कुछ कम दोषवाला माना जायगा। हम सब पाखाना-सफाअी स्वयपाक और गोशाला वगराके कुछ भारी कामोंमें जितना समय बिताते हैं वह हमारे दिनके कामका सबसे अुत्तम भाग है। परन्तु यह भाग तुलनामें छोटा ही है। संतोष मानने लायक तो बिलकुल नहीं। ये काम कुछ भारी तो हैं, परन्तु अिन्हें पसीना लानेवाले कामोंकी श्रेणीमें शायद नहीं रखा जा सकता।

तब अैसा सख्त मेहनतका काम कौनसा गिना जायगा जिसके न रहनेसे हमारे जीवनमें कुछ कमी रह जाती है? अैसे काम बहुत होंगे परन्तु खेती-बाड़ीके जैसा अेक भी नहीं है। जमीन खोदना निराअी करना फसलको पानी देना फसल काटना हल चलाना वगैरा काम करते हैं तब हमें लगता है कि आज हमने कुछ काम किया। शाम होने पर हमारे हाथ-पैरोंको मालूम होता है कि आज हम बेकार नहीं रहे हैं। जोरसे सांस लेने-निकालनेके कारण ताजी हवा खूब मिलनेसे अैसा अनुभव होता है मानो फेफड़े भी तृप्त हो गये हैं। मस्तीमें आकर कर्तव्य-पालन करनेका मौका मिलनेसे हृदयको भी संतोष होता है। चमड़ी भी मानो मक्खन जैसी कोमल हो जाती है। पसीनेकी बूंदोंसे अुसका प्रत्येक छिद्र धुलकर साफ और खुला हो जाता है।

अिसके सिवा खेतीके कामोंमें अेक और खूबी है जो दूसरे मेहनतके कामोंमें नहीं पाअी जाती। यों तो घरकी कोठरीमें बैठकर पीसने या चूल्हेके पास लंबे समय तक बैठकर स्वयंपाक करनेके काम भारी और पसीना लानेवाले हैं। अथवा कोअी कारखानेमें मजदूरी पर जाता हो और गांठें अुठानेका काम करता हो तो वह भी भारी और पसीना लानेवाला काम है। परन्तु अिनमें से अेक भी खेतीकी बराबरी नहीं कर सकता।

जिसे हम कठोर परिश्रम कहते हैं अुसके लक्षणोंमें अेक लक्षण पसीना निकलना है। और अुतना ही महत्त्वका दूसरा लक्षण यह है कि हममें सर्दी धूप बरसात और हवा वगैरा बरदाश्त करनेकी शक्ति आनी चाहिये। अिसके लिअे खेतीमें ही अनुकूलता है। खेतीके काम करते हुअे किसी समय दोपहरकी कड़ी धूप सिर पर झेलनी पड़ेगी, कभी दांत किटकिटानेवाली ठंड सहनी पड़ेगी तो कभी बरसते पानीमें पौधे रोपनेका काम करना होगा। अिस प्रकार अृतुओंकी प्रसन्नता या तापको

आनन्दके साथ सहन करनेकी और कभी भी मुसीबतमें काम न छोड़नेकी शक्ति शरीर-यंत्रमें खेतीके कामोंसे ही आ सकती है।

ये दो शक्तियां — पसीना बहानेवाली मेहनतकी और सर्दी-गर्मीको समान मानकर सहन करनेकी — अपने भीतर न पैदा करें, तो हमारे जीवनमें बहुतसी कमियां रह जाती हैं। हम अनेक अुपयोगी गुणोंका विकास नहीं कर सकते।

प्रथम तो हमारे मनका झुकाव अपने निर्वाहके लिअे कोअी आसान और बैठ कर किया जानेवाला धन्धा पसन्द करनेकी तरफ ही रहता है। आजकलके स्कूल-कालिजोंमें पढ़े हुअे लोग कारकुनी धन्धे पसन्द करते हैं और मेहनतसे सदा दूर रहते हैं। किसानका लड़का घरकी खेती-बाड़ी होगी तो भी अूपरकी दोनों शक्तियां गंवा देनेके कारण कहीं न कहीं नौकरी ही ढूंढने निकलता है। वह खेतीका स्वच्छ खुली हवाका और स्वास्थ्यप्रद जीवन छोड़कर शहरकी किसी अंधेरी कोठरीमें रहना पसन्द करता है। खेतीका स्वतन्त्र धन्धा छोड़कर वह पैसेवाले लोगोंका या अूपरके अफसरोंका हुक्म बजानेवाला और स्वाभिमान खोकर अुनकी डांट सुननेवाला बन जाता है। पेट भर मिलनेवाला सादा पौष्टिक भोजन छोड़ कर और अुसे पचा सकनेवाला नीरोग शरीर खोकर वह बीमारी गंदी हवा और मिलावटवाली खुराकका जीवन पसंद करता है और खुराकके बदलेमें पोशाकका ठाट नाटक-सिनेमा वगैरा मौजशौक बढ़ाकर अपनेको सुखी मानता है। अिस प्रकार सच्चा सुख छोड़कर वह किसलिअे दुःखकी तरफ खिंचता है? अिसीलिअे कि पसीना बहाने और सर्दी-गर्मी सहन करनेकी आदत अुसने छोड़ दी और अुससे डर कर वह भाग गया।

सस्त मजदूरीसे मुकतानेवाले मनुष्यके मनके विचार भी बिगड़ जाते हैं। वह मेहनत-मजदूरीको और अुस करनेवालेको नीचा मानने लगता है और काम न करने वालेको तथा कपड़े पर दाग न पड़ने देनेवालेको अूंचा समझता है। गांवोंके किसानों और मजदूरोंको जिनमें वह स्वयं पैदा हुआ है नीचा मानता है वह अपने मां-बापसे सगे-सम्बन्धियोंसे अपने सादे घरसे और गांवसे शरमाता है और पैसा कमाकर फुरसतके जीवनका सुख प्राप्त करनेके लिअे हाथ-पैर मारने लगता है। पैसा किसीको प्रामाणिक धन्धा करनेसे कभी मिला है? अैसा सोचकर वह छल-कपट और झूठ वगैराका आश्रय लेकर अपने जीवनको गन्दा बना देता है। देखिये तो सही! मेहनतकी अरुचि मनुष्यको कितना बदल डालती है? अुसके जीवनमें कितनी तरहसे जहर मिला देती है? अिस रास्ते लग जानेवालेको सेवाका विचार तो सूझ ही कैसे सकता है? वह दरिद्रनारायणका सेवक बननेके लिअे दरिद्रता अपनानेकी हिम्मत कहांसे लाय? देशकी आजादीके खातिर फुरबान होनेमें भी अुसे रस कैसे आये?

अिसीलिअे हम आश्रममें अिस प्रकारके जीवनका विकास करना चाहते हैं, जिससे हमें मेहनत-मजदूरी कभी कड़वी न लगे बल्कि अुसमें अलौकिक मिठास मालूम हो हमें पसीना बहाना नीचा न लगे परन्तु अूंचा अुठानेवाला और पावन बनानेवाला लगे। खेती-कामके बिना हमारी सेवक बननेकी यह शिक्षा पूरी कैसे हो सकती है?

प्रवचन २४

खेतीके रसायन

कल हम पावन बनानेवाले पसीनेकी बात कर रहे थे। अुससे हम देख सकते हैं कि आश्रम-शिक्षाकी योजनामें खेती-बाड़ीको काफी स्थान देना हमारे लिअे कितना जरूरी है।

यहां हम कातने पींजने और बुननेके अुद्योग सीखते हैं। यह सही है कि अिन कामोंको हम बैठकर किये जानेवाले काम नहीं कह सकते। अुनमें पसीना बहने जितना तो नहीं परन्तु काफी शरीर-श्रम होता है। अिसके सिवा अिन कामोंको हमारे देशकी आजकी परिस्थितिमें राष्ट्रीय महत्त्व प्राप्त हो गया है। यदि हमें ग्रामीण लोगोंकी सेवा करनी हो, तो अिन मृतप्राय अुद्योगोंमें फिरसे प्राण पूरने होंगे। और जब तक हम *अिनमें निष्णात न हो जायं तब तक प्राण पूरनेका काम कैसे कर सकते हैं?* हमें नियमित समय देकर अिन अुद्योगोंको सीख लेना चाहिये। अिसलिअे अपनी आश्रम शिक्षामें अिन अुद्योगोंको हमने बहुत बड़ा भाग दिया है, और यह ठीक ही किया है।

परन्तु अितना होने पर भी हमें स्वीकार करना पड़ेगा कि कल कड़ी मेहनत और सर्दी-गर्मी सहन करने पर जो जोर दिया गया था अुससे हम बच नहीं सकते। आरामसे बैठकर पुस्तक पढ़ा करें, लिखा करें डाक-तारका काम किया करें, दुकान पर बैठकर व्यापार किया करें — अिसकी अपेक्षा हमारे अिन अुद्योगोंमें शिक्षा अवश्य अधिक है। *फिर भी कातनेमें क्या और बुननेमें क्या हमें लम्बे समय तक बैठना पड़ता है,* और वह भी ठंडी छायामें बैठना होता है। अिसलिअे शरीरको चंगा ताजा और सुदृढ़ रखनेके खातिर भी हमें अिन अुद्योगोंके साथ पसीना लानेवाले किसी न किसी मेहनतके कामको जोड़ना ही चाहिये।

हम राष्ट्रीय अुद्योग करें तो भी सख्त मेहनतसे हमें अरुचि न हो जाय, अिसके लिअे हमें सदा जाग्रत रहना चाहिये। आज हम नये अुत्साहमें हैं आश्रमके सुन्दर वातावरणमें हैं अिसलिअे हो सकता है कि हम अपने मनको बीमार न पड़ने दें। परन्तु यदि हम परिश्रमकी रुचि अपने भीतर पैदा न करें, तो विश्वासके साथ यह नहीं माना जा सकता कि हम भी खतरेसे मुक्त हैं।

मान लीजिये कि देशकी लड़ाभी लड़ते हुये हमें जेल जाना पड़े और वहां कठोर परिश्रम करना पड़े। हमने यदि केवल पलथी मारकर कातनेके सिवा किसी कड़ी मेहनतकी आदत न रखी हो तो जेलकी चक्कीकी अुपासनाके समय हमारा जी कैसा हो जायगा? हमारी देशभक्ति और स्वाभिमानकी जड़ें गहरी होंगी तो हम पीछे नहीं हटेंगे और सचमुच शरीरके टूट जाने पर भी चक्की न छोड़ेंगे। वैसा हो तो समझना चाहिये कि हम पर अीश्वरकी बड़ी कृपा है। परन्तु क्या यह अधिक संभव नहीं कि

मेहनतकी आदत न होनेसे कारण हमारी हड्डियां अुस समय दुखने लगें हमारे मनको धीरे-धीरे ढीला कर दें और ढीला मन हमें कामसे बचनेके और सत्याग्रहोंका बोझा न देनेवाले मार्ग सुझाने लगे? या तो हम कर्मचारियोंके सामने दीन मुह बनाकर कायरता घोषित करेंगे मौका मिल जाय तो हमारा काम दूसरेसे करानेका प्रयत्न करेंगे या अैसी तरकीब निकालेंगे जिससे जमादार हम पर दया करके हमारे बारेमें झूठी बातें लिख दे। और नीचे गिर रहा मन कहां जाकर रुकेगा यह कौन कह सकता है? कदाचित् जेल हमें खानेका दौड़गी। ग्रामसेवा करते हुअे जेलका खतरा अुठाना पड़ता है, अैसा सोचकर शायद हम समूची ग्रामसेवाको ही तिलांजलि द देंगे और फिर ता धीरे-धीरे हमारा करधा भी अिधर-अुधर हो जायगा समय पाकर चरखा भी छत पर पहुंच जायगा और शायद शरीर परसे खादी भी अुतर जायगी। पावनकारी पसीनेकी आदत न रखनेमें यह कितना भयंकर खतरा है?

दूसरी कल्पना कीजिये। खड्डेमें पैर रखकर हम बुनते रहते हैं अथवा पलथी मारकर कातते रहते हैं और पसीना बहानेकी आदत छोड़ बैठे हैं। लम्बे समय तक अैसा जीवन बितायें तो हमारा शरीर नाजुक और दुबला बन जाता है यह सिरी कल्पनाकी ही बात नहीं है। भले चंगे रह तो ही आश्चर्यकी बात माननी चाहिये। हम अनेक मोहोंका और आकर्षणोंको छोड़कर, सगे-सम्बन्धियोंकी बात न मानकर मुश्किलस सवाकी तरफ मुड़ते हैं। अिसमें अगर शरीर तन्दुरुस्त न रहे तो बीमारीस दुर्बल हुअे मनको देहाती जीवन असह्य प्रतीत होने लगेगा। गांवमें डॉक्टरों और अस्पतालोंकी सुविधा नहीं होती। बीमार आदमीको खर्च भी ज्यादा करना पड़ता है। यह देहाती जीवनमें हो नहीं सकता। अिसीमें से अेक दिन मनकी दुर्बलताके क्षणोंमें हम गांवको आखिरी सलाम करके और चरखा बगलमें दबाकर चल दें यह क्या बहुत सम्भव नहीं है? क्या आपको अिसमें अतिशयोक्ति लगती है?

और मनकी गति तो बहुत टेढ़ी होती है। दुर्बल मन हमारी सारी श्रद्धाको पलट सकता है हमारे सारे ध्ययमें परिवर्तन कर सकता है। कठोर परिश्रमका स्वाद समझना हमने न सीखा हो तो हमारा मन वैसे परिश्रमको दुःख मानने लगता है अुससे किसी भी तरह छूटनेको ही मानव-जीवनका ध्यय मानने लगता है। हमारी अैसी मान्यता बनने लगती है कि यंत्र ही मनुष्यको दुःखसे बचा सकते हैं। चरखा और करघा हमें धीमे और निकम्मे मालूम होने लगते हैं और राक्षसी कारखानोंका मोह आग्रस हो जाता है। जिस तरह हमारी यह श्रद्धा टूट जाती है कि जिस माग पर पिछले २०० वर्षसे चलकर मनुष्य महाविपत्तिमें घिर गया है अुससे दुनियाको छुड़ानेके लिअे चरखे और ग्रामसेवाका अवतार हुआ है। पसीनेका स्वाद लेने लायक रुचि अपने भीतर न बढ़ानेसे अिस प्रकार हमारी आधारभूत श्रद्धा ही नष्ट हो जाती है। यह कितना भयंकर खतरा है!

यह न मानिये कि ये सब कोरी कल्पनामें ही हैं। लोगोंके जीवनमें सचमुच अैसा हुआ है। और अमुक लोग जो हमारे जैसे अुत्साहसे सेवाके मार्गमें लगे थ

अन्तमें निराश होकर पीछे हट गये हैं। अिसलिअे आश्रमकी शिक्षामें यदि हम सख्त मेहनत और सर्दी-गर्मी सहनकी शक्ति अपने भीतर पैदा नहीं करेंगे, अुसमें जो आनन्द है अुसे लूटने लायक मजबूत तन-मनवाले नहीं बनेंगे, तो हमारी शिक्षा बिना सिरके धड़ जैसी हो जायगी। हम केवल पढ़ने-लिखनेमें ही लगे नहीं रहते हम तो अुद्योग करते हैं और ये कताअी-बुनाअी जैसे राष्ट्रीय अुद्योग हैं — अिस भ्रममें हम पड़े रहें और पसीना बहानेवाली मेहनत न करें, तो यह हमारे लिअे बड़ी नुकसानकी बात होगी।

जो लोग समाजमें अनेक अुपयोगी धंधे करते हैं, अुन्हें भी अिस बात पर ध्यान देना चाहिये। हम देखते हैं कि दर्जियों और मोचियोंकी रीढ़की हड्डी टेढ़ी हो जाती है और जुलाहोंके हाथ-पैरोंके पट्ठे सुडौल नहीं बन पाते। दूसरा धंधा करनेवालों और हलवाअी लोगोंकी तोंद बढ़ जाती है बढ़अियोंकी छाती बढ़ौल हो जाती है और सुनारोंकी आंखें कौड़ो जैसी होनेके अलावा अुनके शरीर झुक जाते हैं।

अब यों देखें तो ये सब कारीगर ग्राम-जीवनमें अुपयोगी काम करनेवाले हैं। हम यह आक्षेप नहीं कर सकते कि वे आलसी या निकम्मे बैठे रहते हैं। परन्तु अुनके कामोंमें अुन्हें पसीने और सर्दी-गर्मीकी सहनशक्ति रूपी दो रसायनोंका लाभ नहीं मिलता। अुन्हें अिस कमीका भान नहीं होता परन्तु अिससे क्या शरीर पर असर पड़े बिना रहता है? अिन लोगोंको भी अपने धंधोंके साथ हमारी तरह खेती जैसे भारी मेहनतके कामोंका मेल बैठाना चाहिये।

गांवके धन्धोंमें कुछ धन्धे जरूर अैसे हैं जिनमें ये दो रसायन अपने-आप मिल जाते हैं। कुम्हारका धन्धा अैसा ही है। अुसका काम मिट्टी अुठाने और गूंधनेका होता है। अिसलिअे अुसमें पसीना निकलने जितनी मेहनत होती है। अिस सिलसिलेमें अुसे जंगलमें घूमना पड़ता है। घर घर चाक चलाते समय अुसका फैलाव बहुत होनेके कारण अुसे विशाल जगहमें काम करनेका लाभ मिलता है। अैसा ही दूसरा धन्धा ग्वालों और चरवाहोंका है। ढोर चरानेके लिअे अुन्हें जंगलमें दूर दूर तक पैदल जाना और खुली हवामें रहना पड़ता है। रहनेका स्थान अुन्हें भी विशाल चाहिये। काम भी अुनका बहुत मेहनतका है। अुन्हें तो दूध-दहीका लाभ भी अधिक मिलता है। कुम्हारों और चरवाहोंके शरीर पर अिन रसायनोंका सुन्दर प्रभाव स्पष्ट दिखाअी देता है। वे खेतीके काम न करें तो चल सकता है। परन्तु दूसरे धन्धेवालोंको तो खेतीका काम करना ही चाहिये।

परन्तु यह स्वीकार करना होगा कि सबको खेतीका काम पानेमें कठिनाअियां बहुत हैं। हमारे आश्रममें यह अेक बड़ी अनुकूलता है कि हमारे पास काफी जमीन है। हो सकता है कि अैसे सब आश्रमों और देहातोंके सब धंधेवारोंके पास अपनी जमीन न हो। अैसी परिस्थितिमें पड़ोसियों या जान-पहचानवालोंकी जमीन पर जाकर काम करना अुत्तम मार्ग है।

परन्तु संभव है अैसा करनेमें समय काफी देना पड़े और सब धंधेवारोंको अिस तरह समय देनेकी सुविधा न हो। हमने आश्रममें विद्यार्थी वर्गके लिअे खेती-बाड़ीका अुद्योग पाठ्यक्रममें ही रख दिया है अिसलिअे कोअी कठिनाअी नहीं रही। परन्तु जो खादी-कार्यालय चलाते हैं अथवा जो धंधेके लिअे बुनाअी करते हैं, वे रोज खेतीमें समय नहीं दे सकते। मैं खुद तो मानता हूं कि खेतीके रसायनोंके खातिर अुन्हें भी खेती-कामके लिअे समय निकालना ही चाहिये। आग्रह रखें तो वे जरूर समय निकाल सकते हैं। अैसा करनेसे अुनके धंधेका काम कम नहीं होता बल्कि अुत्साह अुमंग चपलता और सूझबूझ बढ़नेसे अधिक होता है और अधिक दिलचस्पीसे होता है।

फिर भी अुनके जैसोंके लिअे खेती-काम न मिल सकनेकी कमी पूरी करनेका दूसरा अुपाय व्यायाम है। दंड बैठक मुगदर वगैरा कसरत करने और खुली हवामें घूमने तथा दौड़नेसे कुछ हद तक खेती-कामकी कमी पूरी की जा सकती है। पाठशालाओंमें पढ़नेवाले विद्यार्थी शिक्षक और बैठा धंधा करनेवाले दूसरे लोगोंमें कुछ सावधान लोग अैसे व्यायाम करके अपने शरीर गठीले सुडौल और मजबूत रख सकते हैं।

अिसमें शक नहीं कि व्यायामसे थोड़े समयमें आवश्यक परिश्रम हो जाता है और घर बैठे खुले आंगनमें या खुली छत पर यह परिश्रम हो सकता है। समझके साथ यह परिश्रम किया जाय और अुसकी योजना अिस ढंगसे बनाअी जाय कि अपने अपने धंधेमें जिन अंगोंके हिस्से श्रमका काम न आता हो अुन्हें श्रम मिल जाय तो शरीरकी दृष्टिसे यह व्यायाम हमारी जरूरत पूरी कर सकता है।

परन्तु खेती करनेमें जीवनकी दृष्टिसे अत्यन्त कीमती जो दूसरे लाभ मिलते हैं वे नीरस व्यायाममें कैसे मिल सकते हैं?

खेती करनेसे हमें व्यायामके आनन्दके साथ कुछ न कुछ अुपयोगी काम करनेका संतोष मिलता है मनमें प्रामाणिक परिश्रम करके रोटी कमानेका अुल्लास पैदा होता है। व्यायाममें कसरत होती है परन्तु यह अुल्लास कहां मिल सकता है?

दूसरे, खेतमें काम करने जानेसे हमारे साथ काम करनेवाले अन्य किसान भाअी बहनोंके साथ हम अेकता अनुभव करते हैं अुनके भीतरके अनेक सूक्ष्म गुणोंको हम पहचानने लगते हैं और हम अिस भ्रमसे बाहर निकल आते हैं कि वे अपढ़ होनेके कारण हर प्रकारसे जड़ हैं। यह अनुभव घर रहकर कसरत करनेवालेको कैसे मिल सकता है? वह शरीरसे मजबूत होगा परन्तु लोगोंसे तो दूर ही रहेगा।

तीसरे, व्यायामसे शरीर मजबूत बनानेका छोटा रास्ता अपनानेवालेके दिमागसे यह खयाल शायद ही दूर होता है कि मेहनतका काम नीचा है। वह दंड-बैठक कितना ही करे परन्तु गठरी या पेटी अुठाकर चलनेका मौका आयगा तब मजदूरकी तलाश करने दौड़ेगा। अुसके शरीरमें ताकत न हो सो बात नहीं परन्तु बोझा अुठानेको वह अपनी शानके खिलाफ समझता है। खेती-बाड़ीमें रोज श्रमे

मेहनती लोगोंके साथ काम करनेसे अुनका स्वभाव हममें आ जानेकी पूरी संभावना रहती है।

अिन सब परिणामोंको देखते हुअे कहां खेती-काम और कहां कृत्रिम व्यायाम? सचमुच अिन दोनोंकी तुलना ही नहीं हो सकती। अेकमें केवल श्रम और शरीरका निर्माण है जब कि दूसरेमें जीवनका सर्वांगीण निर्माण है।

अितना पर भी व्यायामकी निन्दा करनेका हमारा आशय नहीं है। आप जानते हैं कि हमारे कार्यक्रममें हमने खेती-बाड़ी और दूसरे भारी कामोंको पूरा स्थान दिया है। फिर भी हम खास प्रकारका व्यायाम भी नियमित रूपसे करते हैं। हम मानते हैं कि हमारी तरह किसानोंको भी कुछ न कुछ व्यायाम करना चाहिये। अुनके शरीर अुनके धंधेके परिणाम-स्वरूप मजबूत तो होते हैं, परन्तु अक्सर अुनमें बड़ी खामियां रह जाती हैं। अुदाहरणार्थ मजबूत किसानोंको सीधे खड़े रहना और बैठना बराबर कदम रखते हुअे लड़खड़ाये बिना चलना या दौड़ना, सफाअीसे कूदना और चपलतासे चलना-फिरना नहीं आता। व्यायामकी तालीम न मिलनेसे ही अुनमें यह कमी रह जाती है। नियमित गहरी सांस लेना और लंबे समय तक सांस रोकना भी अुनसे नहीं बनता। प्राणायामकी शिक्षा पाये बिना फेफड़े स्वस्थ और बलवान कैसे बन सकते हैं?

अब आप समझ जायेंगे कि हमारे कातने बुननेके राष्ट्रीय अुद्योग करने पर भी खेती-बाड़ीके पवित्र रसायनोंके बिना हमारा जीवन त्रुटिपूर्ण रह जाता है, अैसा हम क्यों मानते हैं। हम व्यायाम तो करते हैं, परन्तु वह खेतीके कामका स्थान नहीं ले सकता। व्यायाम तो हम अिसलिअे करते हैं कि खेतीके काममें जो महत्वकी तालीम नहीं मिल पाती अुसकी पूर्ति व्यायामसे हो जाय। अपने अपने धंधेसे सम्बन्धित अुद्योग खेती और कसरत-कवायद — अिन तीनोंका सुमेल साधें तभी शिक्षा पूरी होगी।

आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा

पांचवां विभाग

खादी धर्म

प्रवचन २५

अनिवार्य खादीका नियम

आश्रममें नये आनेवाले जितना तो जानते ही हैं कि यहाँ खादीके सिवा दूसरे कपड़े काममें लेना शोभा नहीं देता। जिसलिये वे आश्रममें प्रवेश करनेसे पहले खादीके कपड़े बनवा लेनेकी चिन्ता रखते हैं। आपने भी यह चिन्ता रखी है जिसके लिये मैं आप सबका आभार मानता हूँ। सचमुच हमारे लिये यह आश आभार मानने जैसी ही है।

खादीके कपड़े पहननवालोंको ही आश्रममें भर्ती करनेका हमारा नियम जरूर है, परन्तु क्या आप समझते हैं कि कोओी खादीके कपड़े पहने बिना यहाँ आ जाय तो हम अुसके लिये आश्रमका द्वार बंद कर देंगे? यह कैसे हो सकता है? आश्रममें आनेकी भावना जिसके मनमें पैदा हुओी अुसे धक्का मारनकी हिम्मत किसकी होगी? हृदयमें भावना अुत्पन्न हुओी अुसी क्षण अुसने सूक्ष्म अवश्य खादी तो पहन ही ली न? स्थूल खादी जुटानेमें अुसे कुछ न कुछ अड़चन होती होगी। कदाचित् तुरत पैसा खर्च करके खादी खरीद सकनेकी अुसकी स्थिति नहीं होगी। शायद वह माँ बापकी मारामी मोल लेकर आश्रममें आ पहुँचा होगा जिसलिये खादीका प्रबन्ध नहीं कर सका होगा।

कभी-कभी अैसे पराक्रमी वीर भी हमारे यहाँ जरूर आ पहुचते हैं जो आश्रममें आनेका विचार आते ही यहाँ नहीं दौड़ आते परन्तु अुस क्षणसे आश्रममें शोभा देने लायक जीवन जीनेकी पूर्व तैयारी करने लगते हैं। कोओी खाने-पीनमें सादगीकी आदत डालने लगते हैं। कोओी कुसंगके कारण व्यसनमें फस गये हों तो व्यसन छोड़ देते हैं। कोओी परिश्रमी जीवनकी आदत डालने लगते हैं। व आश्रममें आनेसे पहले घरमें ही अपनी समझके अनुसार आश्रम बना लेते हैं। अैसे लोग तो आश्रममें आते ही दूधमें दूधकी तरह घुलमिल जाते हैं। वे न केवल आश्रममें सुशोभित होते हैं परन्तु आश्रमको सुशोभित भी करते हैं।

परन्तु अैसे विरले लोग तो कभी कभी ही आते हैं। सामान्यत तयार खादी पहनकर कौन आ सकता है? या तो व जिनके माता-पिता खादीके आग्रही हो या वे जिनके पास खादी खरीदनेके लिये पसेकी गुंजाअिश हो।

अब आप देखते हैं कि हमारा नियम खादी पहननेवालोंको भरती करनेका है। परन्तु यह नियम अैसा नहीं है कि खादीधारी माँ-बापके लड़कोंकी ही भरती किया जाय अथवा खादी खरीदनेके लिये जिनके पास पैसे हों अुन्हींको रखा जाय। जितने पर भी यदि आप सब पहलेसे खादीकी व्यवस्था करके यहाँ आये ह तो मुझ आपको बधाअीके पात्र मानना ही चाहिये।

आप सब मातृभूमिके प्रति भक्ति-भावना रखते हैं और भैसी श्रद्धा रखते हैं कि आश्रमकी सब बातें अच्छी ही होंगी। परन्तु आजकल अैसी हवा चल रही है कि बहुतसे लोग अनिवार्य नियमोंका नाम सुनकर चौंक अुठते हैं। जो संस्थायें अपने यहां रहने वालों पर तरह तरहके नियम लादती हैं वे अुन्हें जहरकी तरह लगती हैं। लेकिन हमारे यहां तो पग-पग पर नियमोंका साम्राज्य है। अुठें तो नियमसे और बठें तो नियमसे। काम करें तो भी नियमसे और सोयें तो भी नियमसे। खाना-पीना भी नियमानुसार और कपड़े पहनना भी नियमानुसार! यह जुल्म कैसे सहन हो?

अिस प्रकार नियमों और कर्तव्योंका नाम सुनकर जो चौंकते हैं, अुन्हें हंसीमें अुड़ा देनेकी मेरी बहुत अिच्छा नहीं होती। मेरे मनमें तो अुनके प्रति कुछ सहानुभूति भी रहती है। हमें अिस देशमें विदेशी राज्यके नियमों और कानूनोंके सामने सिर झुकाना कितना कठिन मालूम होता है? वे हमारे जीवनका गला घोंट रहे हैं और अुनसे छूटनेके लिअे हम वर्षोंसे तड़प रहे हैं। कोअी आदमी हमसे कोअी चीज अनिवार्य रूपमें कराये हमारी अिच्छा न होने पर भी धमकाकर या हमारी कमजोरीका लाभ अुठाकर कराये तो अुससे हमारे दिलको बड़ी चोट लगनी चाहिये। और अच्छी बात होने पर भी वह हमारी अिच्छाके विरुद्ध हम पर लादी जाय तो हमें अुसका कड़ा विरोध करना चाहिये। 'वन्दे मातरम्' मंत्र हमें कितना प्रिय है? फिर भी कोअी अिस तरह मजबूर करने आये कि वन्दे मातरम् बोलो नहीं तो तुम्हें कैदमें डाल दिया जायगा तो स्वाभिमानी मनुष्यके नाते हम अिस मंत्रको बोलनेसे भी अिनकार कर देंगे। अीश्वरका भजन गाना हमें प्रिय है, परन्तु यदि कोअी अिस प्रकार विवश करने आये कि भजन गाओ, नहीं तो तुम्हारा सिर मुंडा दिया जायगा तो सच्चे भक्तकी हैसियतसे हमें यह हुक्म माननेसे अिनकार ही करना चाहिये। अिसलिअे खादीके वस्त्र हमें प्रिय हैं फिर भी कोअी अिस तरह लाचार करने आये कि खादी पहनो नहीं तो तुम्हें अंगूठे पकड़नेकी सजा दी जायगी तो अुसकी दी हुअी खादीको हमें छूना भी नहीं चाहिये।

परंतु नियम नियममें अंतर है। नियमका नाम सुनकर चौंकना जरा भी अुचित नहीं है। दूसरा अपना नियम हमारे सिर पर जबरन् लादे और हम अपनी सुविधाके लिअे अपनी शिक्षाके लिअे खुद नियम बना लें ये दोनों बातें अेकसी कैसे कही जायंगी? अत्याचारी राज्य अपने कानून हमसे डरा-धमकाकर मनवाये और हमारी अपनी संस्था प्रगतिके अुद्देश्यसे हमारे लिअे कानून बनाये ये दोनों समान कैसे माने जायेंगे? अत्याचारी तो हमारा अपमान करनेके लिअे हमसे कानून मनवाता है, जब कि अपनी संस्थाका हेतु तो यही होता है कि हमारा कल्याण हो।

क्या आप यह मानते हैं कि आश्रमके नियमोंको हम जुल्मके अनिवार्य कानूनोंकी पंक्तिमें रख सकते हैं? ये नियम तो हमारी अपनी शिक्षाके लिअे बनाये गये हैं सेवकोंके रूपमें हमारी योग्यता बढ़े हमारा जीवन प्राणवान बने अिस हेतुसे बनाये गये हैं। अैसी शिक्षा ग्रहण करनेकी हमें आन्तरिक अिच्छा है अिसलिअे हमें ये नियम

नियमों जैसे लग ही नहीं सकते बंधनरूप लग ही नहीं सकते। भूखेको भोजन करना क्या भार-स्वरूप लगता है? स्वस्थ मनुष्यको श्रम करना कभी दुःखदायी लगता है? सेवाभावी आदमीको सेवा करना क्या कभी जुल्म जैसा लगता है? विद्या प्राप्तिकी अिच्छा रखनेवालेको विद्याका सेवन बंधनरूप नहीं परन्तु रसप्रद लगता है। हमें भी सेवा-जीवनके लिअे तयारी करनेकी तड़प लगी होती है अिस कारण अुससे संबंध रखनेवाली सारी शिक्षामें आनन्द ही आता है। आश्रमके नियम अुस शिक्षाके अुत्तम साधन हैं, अिस श्रद्धासे हम यहां अिकट्ठे हुअे हैं। अिसलिअे ये नियम हमें बंधन अथवा अत्याचार-स्वरूप कैसे लग सकते हैं?

बेशक अिस प्रकार जीवन बितानेका जिससे पहले हमें मौका नहीं मिला अिस लिअे ये नियम हमें कठिन प्रतीत होंगे। परन्तु जो कठिन न हो वह शिक्षा कैसी? हर कठिन चीज दुःखदाअी ही नहीं होती। सच्चा आनन्द कठिनाअीके साथ जूझनेमें ही तो है। वीर पुरुष शत्रुको सामने चढ़ आया देखकर घबराते नहीं। अुनमें तो असे अवसर पर सच्चा शौर्य प्रकट होता है।

खादी पहननेका आश्रममें जो नियम है अुसे आप नियमका नाम ही न दीजिये। सच पूछा जाय तो यह हमारे मनमें जो विचार दिन रात रमता रहा है अुस पर अमल करनेका अब हमें अवसर देता है। अुसे नियमका नाम देना अुल्टी भाषाका प्रयोग करने जैसा है। कोअी नियम अनिवार्य अर्थात् हमारा मानभंग करनेवाला नियम तो तब कहलायगा जब कोअी सत्ता हमें अैसा आदेश दे कि खादी फेंक कर आओ तो ही तुम्हें हमारे यहां भर्ती किया जायगा। कोअी कोअी वफादार व्यापारी पहले अैसा नियम रखते थे कि जो खादी पहनकर आयेगा अुसे नौकरीमें भरती नहीं किया जायगा। अैसे लोगोंकी नौकरीको अुनके नियमको हम ठुकरा देंगे। खादी पहन कर आनेवालोंको पहले कोर्ट-कचहरीमें सरकारकी तरफसे मनाही की जाती थी। सरकारका अैसा नियम मानकर अुसकी कचहरीमें जाना हमें जरूर नाक कटवाने जैसा लगेगा।

अिस अर्थमें हमारे आश्रमका खादी-संबंधी अनिवार्य नियम न तो जबरदस्ती है न बंधन। हम सबको खादी पर प्रेम है। खादीका सूत स्वयं आपने अथवा आपके सगे-संबंधियोंने काता हो तब तो अुसका आपको प्रिय लगना स्वाभाविक है। अथवा आपकी खादीका सूत देशके किसी भी गांवमें आपकी गरीब बहनों या भाअियोंने काता होगा। अिनके तो आपको सेवक बनना है। आपकी खादीके लिअे मेहनत करने वाले अिन भाअी-बहनोंको आप पहचानते नहीं वे कौनसे गांवमें और कौनसी झोंपड़ीमें रहते हैं यह भी आप नहीं जानते। परन्तु अुन्होंने आपके लिअे श्रम किया है आप अुनकी बनाअी हुअी खादी पहन कर अुन्हें अदृश्य रूपमें मदद पहुंचा सकते हैं। अिस तरह सोचने पर यह खादी आपके लिअे बहुत ही पवित्र वस्तु बन जाती है अिसे पहन कर आपके हृदयमें देशभक्ति अुमड़ती है। अिस दृष्टिसे देखें तो आश्रमका अनिवार्य खादी पहननेका नियम आपको बंधनरूप नहीं परन्तु परम अुपकारक लगेगा।

खादीके नियमके प्रति आपका जिस प्रकार प्रेम अुत्पन्न होना आसान है। परन्तु क्या हमारे दूसरे छोटे-बड़े नियमोंके लिअे भी आपके मनमें अैसा ही प्रेम पैदा होगा? खादीके पीछे तो अेक अैसी पवित्र भावना है जो हृदयको अच्छी लगती है। सभी नियमोंके पीछे अैसी भावना नहीं होती। खादी पहननेका नियम तो आप तुरंत स्वीकार कर लेते हैं परन्तु अुसे अेक खास ढंगसे ही सब आश्रमवासी पहनें यह नियम आपको कैसा लगता है? मान लीजिये आश्रमका अैसा नियम हो कि हमारे यहां सब सफेद खादीके ही कपड़े पहनें। आपमें से किसीको रंगीन और तरह तरहके डिजाइनोंवाली खादी पहननेकी अिच्छा होगी। आपको टोपी धोती चड्डी या पायजामेका अिच्छानुसार फैशन करना अच्छा लगता होगा। आपका यह मोह यदि बहुत प्रबल होगा तो आपको अूपरका नियम बहुत ही कड़ा लगेगा। परन्तु असे मौके पर अेक और भावनाको समझकर हृदयमें अंकित करनेकी मैं सूचना करता हूं। क्या आपको यह भावना प्रिय नहीं कि हमारा आश्रम अेकदिलवाली संस्था होना चाहिये? हम सब अपनी-अपनी पसन्दकी पोशाक पहनें अिसके बजाय आश्रम द्वारा मान्य किये गये ढंगकी ही बनमें तो अुसका असर कैसा होगा अिस पर विचार कीजिये। क्या हमें अैसा नहीं लगता कि हम अलग अलग विचारके और मनमाने ढंगसे चलनेवाले लोगोंका समूह नहीं हैं बल्कि अनेक हाथ-पैरवाले अेक आश्रम-पुरुष हैं! सचमुच यह विचार हमारे हृदयमें बड़े आनंद और बलका प्रेरक सिद्ध हो सकता है।

अलबत्ता अैसा तभी प्रतीत होगा जब आश्रमके लिअे हमारे हृदयमें गहरी भावना हो अुसकी प्रत्येक वस्तु पर, अुसकी भूमि, अुसके पेड़-पत्ते अुसके मनुष्यों सब पर हमें प्रेम हो अुसके कार्यक्रमों अुसकी शिक्षा अुसके नियमों अुसके गणवेश सबके प्रति हमें बड़ी ममता हो।

आश्रमके अनिवार्य नियमोंको प्रिय बना लेनेमें अेक और विचार भी हमें सहायक हो सकता है। आप आश्रममें अभी नये हैं अिसलिअे आपके सामने तो जो भी नियम आते हैं सब तयार पके-पकाये ही आते हैं। परन्तु अैसा समझिये कि आपके हिस्सेमें नियम तैयार करनेका काम आया है। आश्रमकी तालीम अभी आपके शरीरमें मिल गयी है यह दावा तो आप नहीं कर सकते फिर भी मैं विश्वासपूर्वक मानता हूं कि आप आश्रमके लिअे पोषक नियम ही बनायेंगे। आपको जल्दी अुठना अभी कठिन लगता होगा फिर भी आप अुठनेका नियम बनाने लगेंगे तो ब्राह्म-मुहूर्तमें ही अुठनेका नियम बनायेंगे। खाने-पीनेमें आपको तीखे चरपरे पदार्थों और मिठाअियोंका शौक होगा फिर भी आप नियम बनाने बैठेंगे तो सादे सात्त्विक भोजनका ही नियम बनायेंगे कपड़ोंके विषयमें भी आप हमारी तरह खादीके सादे और सफेद कपड़ोंका ही नियम बनायेंगे।

अैसा क्यों? क्या आपने अपने मौजशौक पर अेकाअेक विजय पा ली है? नहीं यह बात तो नहीं है। आपको व्यक्तिगत जीवन ही बिताना हो तब तो आप अपनी पुरानी आदतोंके अनुसार ही चलेंगे। परन्तु जब आश्रमके लिअे नियम

बनाने बठते हैं तब आपको अेकदम जिम्मेदारीका खयाल आ जाता है आप जाग्रत हो जाते हैं। आपने आश्रमकी जो जो कल्पनायें कर रखी होंगी अुन सबको याद कर करके आप अुनके प्रति वफादार रहनेका प्रयत्न करते हैं। अिसलिअे आप जो भी नियम बनायेंगे अुनकी दिशा सादगीकी तरफ ही रहेगी कठोर जीवनकी ओर ही रहेगी। आप जैसे नये सदस्योंके बनाये हुअे नियम हमारे नियमोंसे भी अधिक कड़े हों तो मुझे आश्चर्य नहीं होगा।

तो आप देखते हैं कि हमारे सिर पर जब जिम्मेदारी नहीं होती तब हम अपनी ढिलाअीके कारण चाहे सो करने लगते हैं मगर जब हम जिम्मेदारीके भानसे जाग्रत हो जाते हैं तब कसा व्यवहार कल्याणकारी होगा अिसके नियम सोच सकते हैं। तब अिस आश्रमके अनिवार्य नियमोंका क्या अर्थ है? अिन नियमोंका अर्थ है जिस समय हम स्वयं जाग्रत थे गंभीर थे आश्रम-शिखरकी दृष्टिसे देखते थे अुस समय सूझा हुआ जीवन-मार्ग जीवनकी अिमारत कसे खड़ी की जाय अिसका शान्त क्षणोंमें हिसाब लगाकर खींचा हुआ नकशा। अिमारत बनानेवाले राजको क्या अिंजीनियरका खींचा हुआ नकशा कभी भार-स्वरूप मालूम होता है? वह तो अुलटे अुसकी सहायता ही करता है। बेशक अुसे अिंजीनियरके नकशेमें बताअी हुअी सीमाओंमें रह कर ही अिमारतकी रचना करनी पड़ती है। परन्तु यह बंधन तो अुसे भूलोंसे बचाता है और परिणाम-स्वरूप अुसे अपनी पसन्दका मकान देता है। वसा ही हमारे लिअे हमारे नियमोंका नकशा है।

हमने अपने ज्ञानके जागृतिके क्षणोंमें जो नकशा बनाया अुसकी सीमामें रह-कर जीवन बितानेमें ही आनंद है अुसीमें सफलता है अुसीमें किसी दिन सच्चे सेवक बननेकी आशा निहित है। बिना नियमके गाड़ी चलानेमें तो खड्डेमें गिर जानेका ही खतरा रहता है।

राष्ट्रीय गणवेश

खादीके कपड़े पहननेमें हमें अेक प्रकारका अभिमान होता है। अिस विचारसे हमारे दिलमें अुल्लास पदा होता है कि अुसे पहनकर हम आश्रमके अेक सुन्दर नियमका पालन करते हैं। हम सब आश्रमवासी अेकसा पवित्र सफेद खादीका गणवेश पहनते हैं। हमें प्रतिक्षण अिस बातका स्मरण बना रहता है कि हम सब अलग अलग शरीरोंमें रहते हुअे भी अेक ही आश्रमके अंग हैं हमारे हृदय अेक हैं हमारे विचार अेक हैं, हमारी शिक्षा अेक है हमारा ध्येय अेक है। और ये सब भावनायें हमें देनेवाला हमारा आश्रम है।

हमारे आश्रमने यही गणवेश क्यों चुना? क्योंकि यह हमारी मातृभूमिका भी गणवेश है। अिस कारणसे हमारा खादीका अभिमान कहीं ज्यादा बढ़ जाता है। हमारे देशका यह गणवेश कितना सुन्दर है? हमारे देशके स्वभावमें वह कैसा अेकजीव होकर मिल जाता है? हमारे राष्ट्रीय आदर्शों और हमारी राष्ट्रीय भावनाओंका अुसमें कितना अच्छा प्रतिबिम्ब पड़ता है? सचमुच हम अुसके गुणोंका ज्यों-ज्यों अधिक विचार करते हैं त्यों-त्यों अुसके प्रति हमारा प्रेम अभिमान और गौरव बढ़ता जाता है। खादीको हमारे गणवेशके रूपमें चुननेवाले हमारे नेताओंकी बुद्धि और देशभक्तिके लिअे हमें अत्यंत आदर अुत्पन्न होता है।

अुसमें सबसे बड़ा गुण यह है कि हमारे दरिद्र देशमें जिस किसी मनुष्यके हृदयमें राष्ट्रभक्तिकी भावना अुत्पन्न हो वह अपना गणवेश अपने घरमें ही प्राप्त कर सकता है। यदि अुसके लिअे खास तरहका खास बनावटका और खास मशीनका बना हुआ कपड़ा तय किया जाता तो अुसकी खोजमें हमें शहर-शहर और बाजार-बाजार भटकना पड़ता।

और निठल्ले बनकर, दूसरे कामकाज छोड़कर हम यों भटकें तो भी हम सब अुसके दाम कहांसे ला सकते हैं? हमारे देशमें तो बड़ा भाग खेतिहरों और भीलों जैसे अत्यंत गरीब लोगोंका है। अुनके मनमें देशका गणवेश धारण करनेकी भावना अुत्पन्न हो तो वे क्या करें? अुनके पास पैसा नहीं वे गरीब हैं अिसलिअे क्या वे अपनी अिस सुन्दर शुभ भावनाको मिटा डालें? क्या भारतमाता अुन्हींकी है जिनके पास गणवेश खरीदनेके लिअे पैसे हैं? और अुतने पैसे जिनके पास नहीं हैं अुनकी वह माता नहीं है? मातासे पूछें तो अुसे अपनी दरिद्र सन्तान पर ही अधिक प्रीति है अुसीके साथ अधिक सहानुभूति है। केवल अमीर लोग ही गणवेश धारण करके फिरें, अिससे माताको कैसे संतोष होगा? वे अच्छे वस्त्र पहनें और दीन-दरिद्र लोग चिथड़ोंमें रहें यह देखकर माताके हृदयका दुःख दुगुना बढ़ जायगा। अपने दरिद्र पुत्रोंको सुन्दर कपड़े पहने घूमते देखे तभी माताको संतोष हो सकता है।

अिस प्रकार हमारा गणवेश खादीका हो गया जिसीलिअे दीनसे दीन और दरिद्रसे दरिद्र भी चाहता हो तो अुसे बना सकता है और धारण करके माताको

संतोष दिला सकता है। जिसके लिये अुसे पैसे लेकर बाजारमें भटकनेकी जरूरत नहीं। कपास वह आंगनमें ही अुगा सकता है अुसमें से बिनौले वह अपनी अुंगलियोंसे अलग कर सकता है। अुस रुओीको वह अुसी औीश्वरकी दी हुअी सुन्दर दस अुंगलियोंके द्वारा धुन सकता है और बांसकी छोटीसी तकली बना कर या जरा अधिक अक्ल और होशियारीवाला हो तो अनुप तकली बनाकर अुस पर सूत कात सकता है। अुसमें अुत्साह और कौशल हो तो स्वयं बुन लेना भी मुश्किल नहीं अथवा अपने आसपास बुन बनेवाले कारीगर अुसे जरूर मिल जायंगे। अिस प्रकार अुसे मेहनत तो करनी पड़ेगी। परन्तु क्या असी मेहनत किसीको कड़वी लगती है? अपनी अेक कीमती अिच्छा पूरी करनेके लिये मेहनत करनी पड़े यह तो बड़ सौभाग्यकी बात है। जब तक अुसका प्रयत्न चलता रहेगा तब तक तो वह स्वर्गके सुखमें ही झूलता रहेगा। अन्तमें जिस दिन वह खादीका गणवेश बनाकर अुसे धारण करेगा अुस दिनके अुसके सुखका वर्णन कौन कर सकता है? जिसे अनुभव हो वही अुसे जान सकता है।

हमारे जैसे सेवकोंके लिये भी यह खादीका गणवेश कितना सुन्दर कार्यक्षेत्र खोल देता है? वह हमें अपने गरीब भाओी-बहनोंको खादीके मार्ग पर लानेकी प्रेरणा देता है। अुससे हमारे हृदयमें यह भावना पैदा होती है कि हम अपने अुन दीनसे दीन अज्ञानसे अज्ञान और झोंपड़ियामें रहनेवाले फटेहाल भाअियों और बहनोंके पास पहुंच जायं अुन्हें कंगाली और भुखमरीकी हालतसे बचनेका रास्ता बतायें और खादीको माथ अुनके गले अुतारें। अुनकी आत्मा जाग्रत हो अुनमें असी आन्तरिक अिच्छा पैदा हो तो हमें कितने प्रकारसे अुनकी मदद करनेका अपूर्व लाभ मिल सकता है? कपास अुगानेसे लेकर खादी बनाने तककी तमाम क्रियायें हम अुन्हें सिखा सकते हैं।

यह सब अेक दिनमें नहीं हो सकता। जिसके लिये हमें अुनकी झोंपड़ियामें जाकर लंबे समय तक रहना पड़ेगा। यहां हम जिसीकी तालीम पा रहे हैं न? अुनके बीच अुनके सेवकोंके रूपमें कैसे रहें, जिसीकी शिक्षा हम यहां पा रहे हैं। हम अुन्हें खादी तैयार करना सिखायें अुस बीच जिस ढंगसे रहेंगे कि हमारे जीवनसे अुन्हें कोओी बुरा अुदाहरण न मिले परन्तु अच्छेसे अच्छा अुदाहरण ही मिले। जैसे खादीका अूपरी गणवेश हमने धारण किया वैसे भीतरी शुद्ध चरित्रका गणवेश भी धारण करके जायंगे तो ही हम सेवकके धर्मका पालन कर सकेंगे। हम सादगीसे रहेंगे सत्यका जीवन बितायेंगे देशबन्धुओंकी सेवामें जीवन लगायेंगे असा करते हुअे हम सदा स्वतंत्रताका नशा दिमागमें बनाये रखेंगे स्वतंत्रता जब मांगे तब अुसके लिये सुख सुविधाओंका बलिदान करनेको सदा तैयार रहेंगे जेल जाना पड़े तो हंसते-हंसते अुसे सहन करेंगे और जिससे भी बड़ी कुर्बानीका अर्थात् सिर देनेका मौका मिले जिसके लिये सदा औीश्वरसे प्रार्थना करते रहेंगे।

खादीका गणवेश तैयार करके पहनना तो तुलनामें आसान है। परन्तु अुसके योग्य गुण अपने भीतर पैदा करना ही सच्चा गणवेश है। हम सेवक अपने जीवनमें कुछ अंशमें भी वैसे गुण प्रगट करेंगे तो अुनका असर हमारे दीन देशबन्धुओंके जीवन

पर पड़े बिना नहीं रहेगा। वे खादी बनाना सीखकर पवित्र गणवेश पहनेंगे अुस दिन हमें जरूर आनंद होगा हमारी आत्मा सार्थकता अनुभव करेगी, परन्तु हमें सच्चा आनन्द तो तभी होगा जब वे भीतरका सच्चा गणवेश धारण कर सकेंगे।

खादीका गणवेश हमारे लिये कितना विशाल, कितना रसपूर्ण और कितना जीवन-व्यापी सेवाक्षेत्र खोल देता है?

अब आप समझ गये होंगे कि हमारे देशका गणवेश पवित्र खादीका क्यों है, वही हमारे आश्रमका गणवेश क्यों है और अुसके लिये हमें कितना प्रेम और अभिमान क्यों है।

अिसके सिवा हमारा गणवेश दुनियाके सब गणवेशोंसे सुन्दर भी है। कलाकारोंको शुद्ध सफद खादीका गणवेश बहुत कलामय लगता है। वैसे तो सातों रंग सुन्दर हैं परन्तु सात रंगोंकी मिलावटसे अुत्पन्न होनेवाला सफेद रंग सबसे सुन्दर है। अगर हमारी आंख जड़ न हो परन्तु तालीम पाओी हुअी हो तो हमें सफद रंगमें हरअेक रंगकी छटा दिखाअी देगी। ब्राह्म-मुहूर्तमें सफेद खादी पहना हुआ मनुष्य हमें पवित्र आसमानी वेशमें सजा हुआ कोओी देवदूत जैसा लगेगा। ठीक मध्याह्नमें अुसमें हमें लाल रंगका साज सजे हुअे किसी योद्धाकी छटा दिखाओी देगी। और सायंकालकी सुर्खीमें हमें सुनहरे पीले वस्त्र पहने हुअे किसी मुनिकी झांकी दिखेगी। हरे खेतमें खड़े हों तो हमारी खादीमें हरी छटा आ जाती है सूर्योदयके समय अुसमें सूर्यका लाला झलकता है और सूर्यास्तके समय अुसमें गुलाबी संध्याकी छाया प्रतिबिम्बित होती है।

अिसके सिवा स्वच्छताके अुपासक तो शुद्ध श्वेत खादी पर न्योछावर ही हो जाते हैं। सचमुच सफेद रंगकी भूमि पर स्वच्छता कैसी निखर अुठती है! रंग तो स्वच्छताका खा जाते हैं दबा देते हैं। लाल या नीले या खाकी कपड़ोंके रंगोंसे आप भले ही खुश हों परन्तु स्वच्छताका अुपासक अुनसे सन्तुष्ट नहीं हो सकता। पारदर्शक पतले कांचकी तरह सफेद रंगमें से ही स्वच्छता आरपार देखी जा सकती है और अुसके प्रेमीको अनोखा आनन्द देती है।

सेनाका सिपाही अपनी खाकी वर्दीका बखान करता हुआ थकता है हमारा खाकी रंग कितना ही मैला हो जाय तो भी वह मैला नहीं लगता। स्वच्छताके पुजारीको अुसकी माटी समझ देखकर दया आती है। मैलको छिपानवाले रंगको अच्छा बतानेवालेक लिअे अुसके मनमें जरा भी आदर अुत्पन्न नहीं होता। अुसे तो शुभ्र सफेद वस्त्र ही प्रिय हैं जो छोटेसे छोटे धब्बेको भी सहन नहीं कर सकते, बल्कि पुकार कर बता देते हैं और दौड़कर धब्बा धो न डाला जाय तब तक हमारी स्वच्छताको शांत नहीं होने देते। खाकी कपड़ोंवाला दूसरी दलील देता है "हमारी पोशाक असी है कि दूरसे दुश्मन हमें देख नहीं सकता। जिससे हम सलामत रहते हैं और दुश्मनके जाननेसे पहले ही हम अुस पर हमला कर सकते हैं।" जिन गुणोंमें भी हम सेवकोंको कैसे दिलचस्पी हो सकती है? हमें न तो किसीसे अपनेको छिपाना है और न किसी

पर आक्रमण करता है। हम तो चाहते हैं कि सब हमें देखें हमारे गणवेशके आर पार पहुँचकर हमारे प्रेमको भी पहचानें और हमारी सेवा स्वीकार करें। हमारा सफेद गणवेश दुनियाको प्रेमभावसे आमंत्रण देता है और असी घोषणा करता है कि हम अुसके विश्वस्त सेवक हैं।

अिस प्रकार प्रत्येक दृष्टिसे खादीका शुभ्र गणवेश अुत्तम है। कलाकी दृष्टिसे वह सबसे सुन्दर है स्वच्छताकी दृष्टिसे सबसे साफ है दीन-दरिद्रोंकी दृष्टिसे वह सबसे सस्ता है—घरमें ही बना लिया जा सकता है और हम जैसे सेवकोंकी दृष्टिसे वह देशसेवाका बाना है। हमारा यह सादा सफेद गणवेश हमें सदा पवित्र चरित्रकी और अीश्वरमय जीवनकी याद दिलाता है।

प्रवचन २७

सौ फी सदी स्वदेशी

हमने अपने कपड़ोंके बारेमें बहुत विचार किया फिर भी असा नहीं लगता कि अभी विचार करना पूरा हो गया है। वास्तवमें अिस विषयमें हमने सदियोंसे किसी प्रकारका अच्छा विचार दिमागमें आने ही नहीं दिया। हमने विचारोंका बहिष्कार करके ही व्यवहार किया है। अिसलिअ विचार अब हमसे बदला ले रहे हैं और अुनकी बड़ी सेना आज अेकसाथ आक्रमण करके हमारे दिमाग पर अधिकार करने चली आ रही है।

कपड़ोंकी जरूरत पड़ी हो तब हमें अितना संक्षिप्त विचार ही सूझता है जेबमें पूरे पैसे हैं? जेबमें पैसेका जोर होगा तो फिर विचार आगे बढ़ने लगेगा गांवमें बजाजकी दुकान है? अिससे आगे विचार चले तो यों चलेगा कपड़ा आंखोंको अच्छा लगनेवाला है? मजबूत है?

परन्तु हमारा देश अत्यन्त दरिद्र है। अिसलिअे अधिकांश लोगोंका तो कपड़ोंके विचारको मुठ्ठेमें ही दबा देना पड़ता है क्योंकि वे जेब टटोलने पर देखते हैं कि वह खाली है और अुसका भरना अुन्हें संभव नहीं दिखाओ देता। देहाती लोगोंके शरीरों पर हम जो चिथड़े लटकते देखते हैं अुनसे अिसके सिवा और क्या सूचित होता है? वे यही बताते हैं कि कपड़ेका विचार तो अुन्हें आया था परन्तु पैसेके अभावमें वह विचार अुन्हें छोड़ना पड़ा। अुनका दिमाग बहुत जोर लगाय तो अितना ही विचार करेगा कि आसपास कोओ दो पैसे कर्ज देनेवाला है या नहीं। अथवा अुधार देनेवाला दुकानदार ढूंढ़नेकी कोशिश करेगा। असी स्थितिमें कपड़ा मजबूत है या नहीं आंखोंको अच्छा लगता है या नहीं यह सब हिसाब लगाना अुन्हें सूझ ही कैसे सकता है?

परन्तु अितने संकुचित विचार सूझना केवल सुस्त दिमागकी ही निशानी है। अिसके सिवा किसी और दिशामें बुद्धि दौड़ ही न सके यह भयंकर अबुद्धिका चिह्न

है। हमारे यहां तो गरीब और अमीर दोनोंने बुद्धिका दिवाला ही निकाल दिया है। धनवानोंके विषयमें तो हम समझ सकते हैं कि अुन पर धनका नशा सवार रहता है, जिसलिअे चाहे जितना रुपया खर्च करके कहींसे भी अपनी पसंदका कपड़ा खरीद लानेसे अधिक विचार अुनका मद अुन्हें आने ही नहीं देता। परन्तु गरीबोंकी अबुद्धि तो जरा भी समझमें नहीं आ सकती। कपड़े फट जाने पर क्या जितना ही सूझना चाहिये कि कहीं न कहींसे कर्ज लिया जाय अथवा कहीं न कहीं अुधार देने वाला बजाज ढूंढ़ा जाय? असे क्या अीश्वरकी दी हुअी बुद्धिका अुपयोग करना कहा जायगा? जिस तरह भूख लगने पर किसी आदमीको भूखकी आग बुझानेके लिअे पेट पर गीली मिट्टी बांधनेकी मति सूझना मूर्खता कहा जायगा अुसी तरह क्या यह मति भी मूर्खतापूर्ण नहीं है? अथवा छुरी लेकर भूखका दुःख पैदा करनेवाले पेटको ही चीर डालने जैसी यह मति नहीं मानी जायगी?

हम गरीब हों कपड़े फट जानेके कारण ठंडसे पीड़ित हों और यदि परमेश्वरने मस्तिष्कमें थोड़ी सरल सन्मति रख दी हो तो हमें सीधा विचार यही सूझना चाहिये कि "खेतमें से कपास लाकर कात लें बुन लें और अुसकी खादी पहन लें।

यह विचार हमें अेकदम नहीं सूझ सकता क्योंकि चरखे और करघेके धंधे नष्ट हो गये हैं। यहां वहां मशीनोंके कपड़ेका राज्य फैल गया है। परन्तु १०० वर्ष पहले हमारी बिलकुल असी दशा नहीं थी। अुस समय घर घर चरखा चलता था। लोग कातनेकी कला भूले नहीं थे। कितने ही अमीर हों तो भी लोग सूत कातनेमें नीचापन नहीं मानते थे। हमारे लोग फुरसतके वक्त थोड़ा कातनेमें बहुत परिश्रम मानने जितने नाजुक नहीं बन गये थे। अुल्टे घरमें असे अुद्योग हाथसे न करनेको ही धर्मभ्रष्टता — अकुलीनताका लक्षण माना जाता था।

ये सब बातें तीन चार पीढ़ीसे ज्यादा पुरानी नहीं हैं। फिर भी हम अुन्हें बिलकुल भूल गये हैं और कपड़े फटने पर चरखेका विचार हमें सूझता ही नहीं। किसीको सूझे तो अुसकी गिनती पागलोंमें की जाती है!

अिस तरह जब हम अबुद्धिमें फंसे हुअे हैं तब दूसरे लोग अपनी अक्लसे पूरा पूरा काम ले रहे हैं। अिंग्लैण्डके गोरोंने यहांकी कातने-बुननेकी कारीगरीका बढ़कर अुसका गहरा अध्ययन किया। अिन कलाओंको अुन्होंने अपने देशमें दाखिल किया। फिर अुन लोगोंका लोभ खादी रोटी-दालसे तृप्त न हुआ अिस कारण अुन्होंने अिन सब कलाओंको मशीनोंमें डाला अेंजिनकी खोज करके अुससे मशीनें चलाअीं और ढेरों कपड़ा पैदा करना शुरू किया। वे लोग पहले हमारे यहांका बना हुआ कपड़ा पहनते थे। अब अुन्होंने असा करना बन्द कर दिया। शुरूमें अुनकी मशीनोंका माल अच्छा नहीं बनता था और महंगा पड़ता था। फिर भी अुन्होंने स्वदेशाभिमानकी भावनासे अपने स्वदेशी कपड़ेको ही आश्रय दिया और हमारे कपड़े पर भारी जकात लगा कर अुसे स्वदेशी कपड़ेसे स्पर्धा करनेसे रोक दिया। अिस तरह करते करते माल सुधरने पर अुन लोगोंने अन्तमें समुद्रके पानीको पीछे हटाकर पर्वत पर चढ़ा दिया! हिन्दुस्तानसे रुअीकी गांठें लद

कर जातीं, अुन्हें अपने देशकी मशीनोंसे कातते और बुनते और अुस कपड़ेको हमारे देशमें लाकर बचनेको रखते। राक्षसी मशीनोंसे बना हुआ वह कपड़ा दामोंके हिसाबसे देखने पर सस्ता मालूम होने लगा। दभी माल शुरू शुरूमें अिंग्लैण्डके मालस थोड़ी-बहुत स्पर्धा करता होगा लेकिन अुसे अपनी सत्ताका डर दिखाकर कुचल देनेमें अुन्हें क्या देर लगती?

यह सब हो रहा था तब हमने अपनी कुटेवके कारण कुछ भी विचार नहीं किया अथवा किया तो बहुत संकुचित और अबुद्धिका ही विचार किया "वाह यह विलायती कपड़ा कैसा सुन्दर है? अितना सस्ता कपड़ा मिल जाय तो फिर कौन दिन भर चरखेके पीछे परिश्रम करे? यों कहकर हमने चरखेको छत पर चढ़ा दिया।

पुराने संस्कारके कारण कुछ लोग शुरूमें चरखेसे चिपटे रहे कैसा भी हो हमारे लिअे चरखा कपड़ा ही अच्छा है चरखा बन्द कर दें तो हमारा दिन कैसे बीते? घरमें आलस रहे तो कंगाली घुस जाय।' अैसे स्वस्थ विचार थोड़े दिन तक टिके। परन्तु जैसे दीवारको सील लग जाती है वैसे ही अिन पुराने संस्कारोंको सील लग गअी। क्योंकि मन दूसरी ही तरहके हो गये। पहले घरमें अुद्योग न करना और जो चीज चाहिअे अुसके पीछे बाजारमें दौड़ना नीचा माना जाता था अब लोग अेक-दूसरेकी हंसी अुड़ाने लगे "कैसे कंजूस हो कि बाजारमें जैसे चाहिये वैसे सुन्दर विलायती कपड़े मिलते हुअे भी अभी तक घरकी स्त्रियोंसे मजदूरकी तरह चरखा कतवाते हो?'

पहले गांवकी जरूरतका माल बनाना गांवके कारीगरोंका हक माना जाता था। कोअी शौकीन आदमी अुन्हें छोड़कर बाहरके कारीगरोंसे काम करा लाता बाहरवालोंसे सूत बुनवा लाता अथवा जूते सिलवा लाता तो ये कारीगर झगड़ा खड़ा कर सकते थे। गांवके सयाने आदमी अुनका पक्ष लेते थे और शौकीन आदमीको धमकाना पड़ता था। परन्तु विलायती मालके फंदेमें सादे और शौकीन सभी फंस गये। शौकीन लोग अुसे सुन्दर देखकर और सादे लोग सस्ता मानकर सयाने लोग अुसे पाना आसान समझकर और नासमझ लोग देखादेखी धनवान धनके मदमें और गरीब लोग कामके आलस्यके कारण। सही विचार किसीने भी नहीं किया। घरमें आलस्य और घमण्ड घुस रहे हैं अिसका विचार किसीने नहीं किया। गांवके जुलाहे कुम्हार, लुहार, रंगरेज मोची और चमार बगराके बन्धे नष्ट हो रहे हैं और वे भूखों मर रहे हैं अिसका भी विचार नहीं किया। यह सब अपनी आंखोंके सामने होते देखकर भी किसीकी आंखें नहीं खुलीं। अितना ही संकुचित और क्षुद्र विचार किया कि "वे भूखों मरें तो अिसमें हम क्या करें? हमें तो बाजारमें सस्ता विलायती माल मिल रहा है। अुसे छोड़कर अिनका महंगा माल हम क्यों लें? आंखोंके सामने गांव नष्ट हो रहे थे। अुन्हें देखकर भी जिनकी आंखें नहीं खुलीं अुन्हें सारे देशकी क्या दशा हो रही है अिसका तो सपना भी कैसे आता?

जिस प्रकार विलायती कपड़के मोहमें जब सारा देश अंधा हो रहा था, अुस समय भी देशमें कुछ ज्ञानी पुरुष पैदा हुअे। भारतके दादा दादाभाअी नवरोजी और न्यायमूर्ति रानडे जैसे लोग अूंचे हाथ करके पुकारने लगे "विदेशी कपड़ा कितना ही बढ़िया और सुन्दर क्या न हो और स्वदेशी कितना ही मोटा और भद्दा क्यों न हो तुम स्वदेशीको ही प्यारा मानों। परन्तु अिस प्रकार केवल पुकार करनेसे ही हमें स्वदेशी प्यारा नहीं लगा। परराज्य छाती पर चढ़ बैठा था। अुसने गुप्त रूपसे देशका सत्व चूसना शुरू कर दिया था। अिसे दादा जैसे कोअी ज्ञानी ही देख सकते थे। दूसरे तो अुसे देवका अवतार ही मानते थे। लेकिन अुस देवने धीरे-धीरे अपना सच्चा रूप प्रगट किया। अुसने महान बंग प्रान्तका भंग किया। यह दशा तब देश चौंका। अैसे राज्यके साथ युद्ध करनेको तैयार हुआ। नेताओंने रोषमें आकर पुकार की, "विलायती कपड़ेकी होली जलाओ। विलायती कपड़ेका बहिष्कार करो। मांचस्टरके कारखाने बुझाओ। हुअे बिना अंग्रेज सरकार ढीली नहीं पड़ेगी। वे रोषमें यह भी कहने लगे "चाहिये तो जापान जर्मनी या अमेरिकाके कपड़े पहनना, परन्तु अिन जालिम अंग्रेजोंके देशके तो हरगिज नहीं।

परन्तु सयाने नेताओंने सोचा "विलायती कपड़ेका बहिष्कार करनेसे ही क्या होगा? स्वदेशी माल देशमें पैदा भी होना चाहिये। अिसलिअे देशमें अुसकी हवा चली। "देशमें स्वदेशी मालके कारखाने खोलो मिलें खोलो कांचके कारखाने खोलो शक्करके कारखाने खोलो कागजके कारखाने खोलो। अंग्रेज ये कारखाने खोल सके तो हम क्यों नहीं खोल सकते? परन्तु कारखाने खोलना कोअी बच्चोंका काम नहीं था। अंग्रेजोंके पास अुनका अपना स्वतंत्र राज्य था। दुहने और चूसनेके लिअे तैंतीस करोड़ लोगोंवाली भारतरूपी गाय होनेके कारण धनके ढेर थे। फिर भी देशमें कहीं कहीं कारखाने खुले। तिलक महाराज जैसे नेताओंने अुन्हें खूब प्रोत्साहन दिया। लोग स्वदेशी कपड़ा स्वदेशी शक्कर स्वदेशी कागज वगैरा अिस्तेमाल करनेकी प्रतिज्ञायें लेने लगे। स्वदेशी कपड़ेकी मांग बहुत बढ़ गअी लेकिन कारखाने तो अुसके अनुपातमें थोड़े ही खुल सके थे। मौका देखकर कारखानोंके मालिक दगा करने लगे। अुन्होंने स्वदेशीके अुद्धारके लिअे थोड़े ही कारखाने खोले थे? अुन्हें तो रुपया कमाना था। वे विदेशी कपड़े पर स्वदेशीकी छाप लगाकर बेचने लगे और भोले स्वदेशी-भक्तोंको धोखा देने लगे।

अिस प्रकार बहुत वर्षों तक गड़बड़ी और धांधली चलती रही। लोग समझते थे कि हम स्वदेशी व्रतका पालन कर रहे हैं परन्तु विदेशी पिछले दरवाजेसे अपना माल घुसेड़ रहा था।

अन्तमें महात्मा गांधी आये। अुन्होंने समझाया "विलायती मालका बहिष्कार करने और अंग्रेजोंसे द्वेष करनेसे हमारे लोगोंकी शक्ति कैसे बढ़ेगी? अिंग्लैण्डके मालका बहिष्कार करके जापान और अमेरिकाका माल लेनेसे तो हम अेकके आश्रित न रहकर दूसरेके आश्रित बन जाते हैं। हमारा बल तो तभी बढ़ेगा जब जो चाहिये सो हम खुद बना लें। तभी हमारे देशका धन देशमें रहेगा। तभी हमारे कष्ट दूर होंगे

घम सजीव बनेंगे और बेकार गरीबोंके सत्तूमें चिमटी भर आटा बढ़ेगा। गांधीजीने यह भी समझाया "विदेशी और देशी कारखानोंमें बहुत अन्तर नहीं मानना चाहिये। गोरे कारखानदार अपना माल बेचकर हमारा धन चूसते हैं तो क्या काले कारखानदार अिसमें कसर रखते हैं? और वे सब धर्मावतार बन जायेंगे असा मान लें तो भी अुनके कारखानोंका माल अिस्तेमाल करके करोड़ों दरिद्र देशवासियोंकी स्थिति कैसे सुधरेगी? गांवोंका सारा धन तो कारखानदारोंके घरमें बहकर अिकट्ठा हो रहा है। गांवोंके लोग यदि बेकार बैठे रहते हों तो वे अपने गांवोंमें ही अपनी आवश्यकताकी वस्तुअें क्यों न तैयार कर लें? और दूर दूरके शहरोंके कारखानोंके पास रुपया खर्च करके वे चीजें क्यों मंगवायें?

हमारी मति अिस हद तक मारी गयी थी कि अितनी सीधी-सी बात भी हम न समझ सके! अब हमने शुद्ध स्वदेशीका व्रत लिया और हाथ-कती हाथ-बुनी खादी ही काममें लेने लगे।

अिस प्रकार बहुत वर्षों तक शुद्ध स्वदेशी खादी चली। बहुत लोग कातने-पींजने और हाथका सूत बुननेमें होशियार हो गये। बहुतसे किसान घरका कपास रखकर और घरमें सूत कातकर वस्त्र-स्वावलम्बी बने। अत्यन्त गरीब लोग मजदूरी लेकर कातने लगे। चरखेमें सुधार हुअे। छोटा सुन्दर, दो चक्रवाला और पेटीमें समा जानेवाला यरवडा चक्र खोजा गया। खादी भी तरह तरहकी और अनेक डिजाअिनोंकी बनने लगी। शहरोंमें बड़े-बड़े खादी-भण्डार खुले और कलाके महान अुपासकोंकी आंखोंको सन्तोष देनेवाली सुन्दर और मिलोंकी स्पर्धामें पीछे न रहनेवाली खादी वहां बिकने लगी।

अच्छे अच्छे खादी-सेवक अभिमानके साथ बताअी पाते थे — देखिये अब खादी कैसी अच्छी बनती है! और पहलेसे सस्ती भी होने लगी है। परन्तु महात्मा गांधीकी नजर हमेशा घरमें कातनेवाली झोंपड़ीवासी बहनों पर ही रहती थी। अुन्हें शंका हुअी 'खादी सस्ती कैसे हुअी? कातनेवालोंके बलिदान और खर्च पर तो सस्ती नहीं हो रही है?' हिसाब लगाया गया तो सन्देह सही निकला। अुन्हें कातनेकी मजदूरीका पूरा अेक आना रोज भी नहीं मिलता था। खादी-सेवकोंको अपने अज्ञान और अति-अुत्साहमें वह अन्याय जो वे स्वयं गरीब कत्तिनोंके साथ कर रहे थे दिखाअी नहीं देता था। अुन्हें नहीं सूझता था कि यह तो कत्तिनोंकी कंगाल दीन दशाका अनुचित लाभ अुठाना कहा जायगा। अुस समयसे हमारे स्वदेशी धर्ममें यह सिद्धान्त दाखिल हुआ कि कदाअी बगैरहके काम करनेवालोंको निर्वाह-वेतनसे कम देकर काम कराना पाप है। निर्वाह वेतनकी दर देकर तैयार हुअी खादी ही सच्ची खादी है वही प्रमाणित खादी है, अुससे कम दर पर बनी हुअी खादी हाथ-कती और हाथ-बुनी हो तो भी सच्चा स्वदेशी कपड़ा नहीं मानी जा सकती।

अिस प्रकार ५० ६० वर्षके अनुभवके बाद हम अिस बातकी खोज कर सके हैं कि पहनने योग्य असली स्वदेशी वस्त्र कौनसा है। पहले तो हम मिलवालोंसे नाराज होकर

दूसरे विदेशोंकी तरफ मुड़े। अुसके बाद स्वदेशी कारखानोंके पीछे लगे और स्वदेशी-व्रत पालनके अभिमानका हमने पोषण किया। पर बादमें यह स्वदेशी भी हमें मैला लगा और हाथ-कती हाथ-बुनी खादी पहननेको ही हमने शुद्ध स्वदेशी धर्म समझा। और अन्तमें खादीमें भी निर्वाह-वेतन देकर निर्दोष बनी हुअी शुद्ध प्रमाणित खादी पर हम आ गये। आज हमें बड़ा आश्चर्य होता है कि हमारे लोगोंको शुद्ध सच्चा मार्ग पकड़ने और स्वदेशी वस्त्र ढूंढ़नेमें कितना लम्बा अरसा लग गया! परन्तु अब असली चीज हाथ लगी है, अिसे परमेश्वरका बड़ा अुपकार मानें और दुबारा चाहे जैसे कपड़ेसे शरीरको ढंक कर विचारहीन जीवनमें न अुतरें।

प्रवचन २८

सभ्यताके पाश

हम पिछले तीन दिनोंसे अपने जीवनकी दूसरे नम्बरकी आवश्यकता — कपड़े — के प्रश्नकी खूब छानबीन कर रहे हैं। हमने कपड़ेके दर्जीके टांके तोड़ डाले हैं और जुलाहेके ताने-बाने भी अुधाड़ दिये हैं परन्तु अभी चरखेका बल निकालकर तथा रूअीके तन्तु अलग करके छानबीन करना बाकी है।

अब तक हमने यह मानकर विचार किया कि कपड़ा जीवनकी दूसरे नम्बरकी सबसे महत्वपूर्ण आवश्यकता है परन्तु आज हम मूलमें ही कुठाराघात करेंगे। कपड़ा क्या सचमुच जीवनकी आवश्यकता है? जिस अर्थमें अन्न जीवनकी आवश्यकता है, अुस अर्थमें क्या कपड़ा आवश्यक माना जा सकता है? अन्नके बिना तो हम शरीरको कायम ही नहीं रख सकते। क्या कपड़े न पहननेसे शरीरके नष्ट हो जानेका खतरा है?

दुनियाकी सब सभ्य प्रजायें कपड़े पहनती हैं और युगोंसे पहनती चली आयी हैं। और जंगली मानी जानेवाली जातियां भी चमड़े और पेड़ोंकी छालसे अपने शरीर ढंकती हैं — यों कहकर अिस प्रश्नको अुड़ा देना ठीक नहीं। कपड़े न पहनें तो क्या हम नंगे फिरें? अिस तरह अुलटा प्रश्न करके बातको हंसीमें टाल देना भी अुचित नहीं है। हम सत्य-शोधक हों तो कपड़ेका अिस दृष्टिसे विचार करनेसे हमें डरना नहीं चाहिये। आश्रमवासियोंमें सत्य-शोधनकी अदम्य वृत्ति न हो तो अुनका आश्रमवास और अुनकी आश्रमी शिक्षा लज्जित ही होगी।

मैं समझता हूं कि हम यह तो नहीं मानते कि कपड़े न पहननेसे हम मर जायेंगे। यह बात सही है कि मां-बापने हमें बचपनसे कपड़ोंमें लपेटा है और हमारी प्रजाको सैकड़ों पीढ़ियोंसे कपड़े अिस्तेमाल करनेकी आदत पड़ गयी है, जिसलिये अब हमारी चमड़ी नाजुक हो गयी है, वह सर्दी-गर्मी सहन नहीं कर सकती और कपड़े न पहनें तो हमें अेक प्रकारकी बेचैनी मालूम होती है। शायद हम बीमार भी हो जायं। अिस अनुभवसे तो हमें वास्तवमें सावधान हो जाना चाहिये। वह हमें अिस विचारमें

डाल देता है? क्या हमें चमड़ीकी सहनशक्तिको दुर्बल बना देनेवाला कपड़े पहननेका रिवाज कायम रखना है? आजतककी आदतके कारण हमने सहनशक्ति और तन्दुरुस्ती कुछ कम गंवाओी है? अिस आदतको कायम रखकर हमें और किस हद तक शरीरको बिगाड़ना है?

हम आसपास नजर डालेंगे तो कुछ अैसे बीमार भी हमारे देखनेमें आयेंगे जिन्हें गरमीकी रात्रि और धुपाकी मधुरता भी सहन नहीं होती। गरमीमें भी रजाओी न ओढ़ें तब तक अुन्हें नींद नहीं आती। अगर हम न चेते और अिसी तरह पहनने-ओढ़नेकी आदत बढ़ाते रहे तो अन्तमें सभी लोग अितने बीमार बन जायेंगे अिसमें जरा भी शंका नहीं।

दूसरी तरफ अपने देशकी तथा दुनियाके दूसरे भागोंमें बसनेवाली जंगली जातियोंको देखते हैं तो वे सभ्य लोगोंके मुकाबलेमें करीब करीब विना वस्त्रके ही रहती हैं। अिस कारणसे अुनके शरीरोंकी सहनशक्ति सभ्य लोगोंकी सहनशक्तिकी अपेक्षा कितनी ज्यादा है? वे सर्दीमें भी सिर्फ लंगोटीसे काम चला सकते हैं।

शरीरकी रचना ही अीश्वरने अैसी की है कि अुसकी शक्तियां हम अच्छी आदतोंसे बढ़ा सकते हैं और बुरी आदतोंसे घटा सकते हैं। तो फिर हम कपड़ा पहनने वगैराकी जो आदतें डालें या जो भी रिवाज चलायें वे अैसे ही होने चाहियें जिनसे दिनोंदिन हमारे शरीर अधिक तन्दुरुस्त और अधिक सुदृढ़ बनें। अुसके बजाय हमारा आज अुलटी ही दिशामें जा रहा है। प्रजा जितनी ज्यादा सभ्य होगी अुतनी ही ज्यादा कपड़े पहनती दिखाओी देगी। जंगली जातियां भी कपड़ोंको सभ्यताका लक्षण मानकर जब सभ्यताकी नकल करने लगती हैं, तब कपड़ेका भार शरीर पर ज्यादासे ज्यादा लादने लगती हैं।

हिन्दुस्तानमें हम अेक-दो सदियां पहले आजके जितने कपड़े नहीं पहनते थे। हम कोओी जंगली प्रजा नहीं थे। ठेठ वैदिक कालसे हमें कपड़े बुननेकी कला आती है। फिर भी हमारे लोग शरीरका बड़ा भाग खुला ही रखते थे। धोती पहनते थे, परन्तु वह आजके जैसी लम्बी चौड़ी नहीं होती थी। शरीर पर दुपट्टा ही डाल लेते थे और सिर पर कुछ लपेट लेते थे। यह हमारे सद्‌गृहस्थोंकी पोशाक थी।

अजन्ताकी गुफाओं जैसे स्थानोंके पुराने चित्र देखनेसे पता चलता है कि बड़े बड़े राजा और श्रीमान भी अिससे अधिक कपड़ नहीं पहनते थे। स्त्रियां भी आज पहलेसे बहुत ज्यादा कपड़े शरीर पर लपेटने लगी हैं। हम भले ही मनमें खुश हों कि हम पुराने लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा सभ्य हो गये हैं परन्तु सीधी नजरसे देखें तो हमारी आजकी स्थितिमें खुश होने जैसी कोओी बात नहीं है। अुलटी शरमानेकी बात है। क्योंकि हमने पूर्वजोंकी अपेक्षा अपने शरीरकी चमड़ीको अधिक कमजोर बना लिया है।

हमारे सभ्य लोगोंके कपड़े पहननेके रीति-रिवाजको देखकर सचमुच मनमें अेक बड़ी शंका पैदा होती है। हम मुंहसे जरूर कहते हैं कि कपड़े शरीरकी रक्षाके लिअे पहनते हैं, परन्तु अुन्हें पहननेका हमारा हेतु केवल रक्षा ही नहीं मालूम होता हमारे

मनमें कोअी दूसरा हेतु भी छिपा काम पड़ता है। हम अधिकांश कपड़े तो शरीरकी आवश्यकता हो या न हो 'सम्यताके खातिर' ही पहनते हैं। पगड़ी, साफा और टोपीको ही लीजिये। धूप और चोटसे सिरकी रक्षा करनेका हेतु अुसमें जरूर है, परन्तु जब दफ्तर या पाठशालामें नंगे सिर प्रवेश करनेकी मनाही की जाती है तब मनाही करने वालेके मनमें यह बात नहीं होती कि नंगे सिर आओगे तो तुम्हारे दिमागमें गरमी चढ़ जायगी या तुम्हारा सिर किसीके प्रहारसे फूट जायगा। मनाहीका स्पष्ट अर्थ अितना ही है कि यहां सभ्य लोगोंको ही आनेकी अिजाजत है सिर खुला रखकर घूमना जंगलीपनकी निशानी है और अैसे जंगली लोगोंके साथ हम शरीक होना नहीं चाहते। किसान खेतमें जाते समय सिर पर फेंटा लपेटता है सो तो धूपसे सिरकी रक्षा करनेके लिये लपेटता है। परन्तु जब हम बाजारमें जाते समय पगड़ी लगाते हैं तब हमारे मनमें रक्षाकी अपेक्षा सम्यताका विचार ही मुख्य होता है। गोरोंके देशमें खुली छाती रखकर और पैरोंमें मोजे पहने बिना कोअी शहरके बीचसे निकले, तो वहांकी रमणियां 'अरररर' कहकर आंखें बन्द कर लेती हैं, और रास्ते पर खड़ा पुलिसमन अुसे असभ्य और जंगली जानवर मानकर पकड़ लेता है। अिसके पीछे भाव यह नहीं है कि अुसकी छाती या पैरोंमें ठंड लग जायगी बल्कि यह है कि अुसने सम्यताके लिये जरूरी माने गये कपड़े नहीं पहने। हमारे देशकी आबहवा गरम है, फिर भी कुछ समय पहले तक हमें सभ्योंमें गिनती करानेके लिये कुर्ता और मोटे कपड़ेका सिला हुआ तथा सब बटन बराबर बन्द किया हुआ कोट पहनना पड़ता था। खुशकिस्मतीसे महात्मा गांधीके पथप्रदर्शनके कारण 'सम्यता'के अिस जुल्मसे हम कुछ बच गये हैं।

हम कपड़ोंके जंजालसे बिलकुल बचनेका विचार आज भले न करें परन्तु अिस सम्यताके जुल्मसे तो अवश्य बचें। सम्यताकी हमारी कल्पनायें तो अन्तमें हमारी अपनी ही बनाअी हुअी हैं। गांवके लोग शहरी अमीरोंको सभ्य मानते हैं, और अुनके कपड़े-लत्तों तथा अुनके रीति-रिवाजोंको सम्यताकी निशानी समझकर अुनका अनुकरण करते हैं। परन्तु वास्तवमें अिससे क्या वे सभ्य हो गये? अुलटे वे कमजोर चमड़ीवाले ही बने और अूपरसे पैसेके खर्चमें पड़ गये।

पोशाक शरीर-रक्षाका अपना मूल हेतु छोड़कर सम्यताका दिखावा करनेका साधन बन गयी अिसलिये अकसर वह बहुत ही विचित्र और बेढंगी भी बन जाती है। जैसे जैसे सम्यताके फैशन बदलते हैं वैसे वैसे पोशाक भी बदलती है। और फैशन तो आकाशकी बदली अथवा मनकी तरंगकी तरह है। वह कब कैसा रूप लेगा और कब किस दिशामें चला जायगा यह कौन कह सकता है? बहुत बार तो हम यही मानते मालूम होते हैं कि अुसमें रक्षाके गुण जितने कम हों अुतनी अधिक सम्यता अुससे प्रगट होती है।

गुजरातमें किसी जमानेमें सिर पर लम्बा फेंटा लपेटनेका रिवाज था और आज भी जंगलमें काम करनेवाले लोग अुसे अिस्तेमाल करते हैं। यह फेंटा रक्षाकी दृष्टिसे उत्तम

है शिरस्त्राणके नामको सार्थक करनेवाला है। असका प्रथम गुण यह है कि धूपमें असे सिरमें पसीना आकर ठंडक हो जाती है। दूसरा गुण चोट झेलनेका है, जिस दृष्टिसे भी वह अुत्तम है। समय समय पर धोकर साफ रखनेकी सुविधा भी असमें अच्छी है। यह तीसरा गुण है। चौथा गुण यह है कि कामकाज करते समय वह गिर नहीं पड़ता। लटकता अथवा सरकता रहकर असुविधा पैदा नहीं करता। पांचवां गुण यह है कि जरूरत पड़ने पर वह दूसरे कामोंमें गड्डुरीके तौर पर सिर पर बोझा अुठानेमें चादरके तौर पर ओढ़नेमें और झोलीके तौर पर कुछ बांधनेमें अुपयोगी हो सकता है। छठा गुण असमें किफायतकी दृष्टिसे है क्योंकि वह फटता है तब भी असमें से कपड़ेके बहुत अच्छे टुकड़े निकलते हैं जो दूसरे कामोंमें भलीभांति आ सकते हैं। अंतिम और सातवां गुण यह है कि अुसे पहनकर हम अच्छे और भव्य दिखाओ देते हैं।

अब अिस फेंटेके साथ हमारे यहां सभ्य जन कल तक जो तरह तरहकी पगड़ियां पहनते थे अुनकी तुलना कीजिये। क्या अुसकी रचनामें अुपरोक्त गुणोंमें से अेक भी गुण न रहने देनेका ही स्पष्ट अुद्देश्य नहीं मालूम होता? अहमदावादी पगड़ी पटेलिया पगड़ी या असी ही अन्य पगड़ियां तयार करनेवालोंके मनमें क्या क्या कल्पनायें होंगी? धूपसे वे जरा भी रक्षा करती हैं अथवा मार सहनेमें मदद देती हैं यह आक्षेप तो अुन पर बिलकुल नहीं किया जा सकेगा। धोनेके मामलेमें तो फेंटेमें जो झंझट थी अुससे बचनेके लिये ही यह स्थायी पगड़ी बनाओ गओ मालूम होती है। सद्गृहस्थोंके सिर पर चढ़कर बैठी हुओ पगड़ी मानो अभिमानसे यह भाषण देती है "मुझ पहननेवाला आदमी धूपमें कुदाली चलानेवाला और सिर पर भार अुठानेवाला मजदूर नहीं है वह असा बड़ा आदमी है जो दिनभर दीवानखानेमें छत्रपलंग पर पड़ा रहता है। कभी बाहर निकलता है तो जंगलियोंकी तरह नहीं चलता। विवेकके साथ धीरे धीरे चलता है जिससे पगड़ी गिर जानेका अुसे डर नहीं रहता। वह धूपसे बचनेके लिये सिर पर बोझा नहीं रखता परन्तु छत्र धारण करनेवाले नौकर रखता है। दुश्मनसे बचनेके लिये वह सिर पर भारी फेंटा नहीं बांधता परन्तु हथियारबन्द अंगरक्षक रखता है। मुझे पहननेवाला असा देहाती नहीं जो रोज रोज फेंटा धोने और बांधनेकी झंझटमें पड़े। वह अितना मुफलिस नहीं कि पगड़ी पुरानी हो जानेके बाद अुसके दूसरे अुपयोग करनेका क्षुद्र विचार अुसके मनमें आये। ये पगड़ियां देखकर दुनिया हंसती है और अुन्हें कलाहीन और बेडौल कहती है। परन्तु अिससे क्या? क्या बड़े बड़े कुलीन राजा-नवाब असी ही पगड़ियां नहीं पहनते थे?

आज सभ्य कहलानेवाले लोगोंकी अर्थात् हमारी श्रेणीके स्त्री-पुरुष दोनोंकी पोशाकोंके फैशन देखें तो अुनमें तरह तरहकी हंसने लायक विचित्रतामें गुणोंका बिलकुल अभाव और फैशनके खातिर मोल ली हुओ असुविधायें नजर आये बिना नहीं रहेंगी — हां हममें अपनी ही हंसी अुड़ाने जितनी विनोद-वृत्ति होनी चाहिये।

कौनसी गरमीके दिनोंमें क्या जरूरत है? फिर भी हम अुसे पहन कर धूम न आयें तो सभ्यता-देवी हमसे जुदा कैसे हो? और ठंडके दिनोंमें यदि शरीरके किसी

भागको रक्षाकी आवश्यकता है सो वह छातीका है। फिर भी कोट और जाकेट हम अिस ढंगसे पहनते हैं कि ठीक वही भाग खुला रहता है। सर्दी सहन करना बहतर है मगर देहातोंमें गिनती नहीं कराओ जा सकती। बहनें भी हाथ गला छाती वगैरा जितने भाग फैशन देवताकी आज्ञानुसार खुले रखना जरूरी हो अुतने खुले रखनेके लिये ठंडसे कांपनेको तैयार हो जाती हैं।

पुराने फशनके अनुसार हम धोतीवारी होते हैं तो फशनका अनुसरण करके अुसे पैरोंमें आने तक घिसटती रखनेकी खास तौर पर सावधानी रखते हैं। हमारी धोती खुद दुनियाके सामने यह घोषित करती है कि हम छोटी और मोटी धोती पहननेवाले किसान या मजदूर नहीं है।

बहनोंने भी साड़ी वगैरा कपड़ोंका ढंग और अुन्हें पहननेकी पद्धतियां असी खोज निकाली हैं कि पहननेके बाद सम्यता-भंगकी भूल होना संभव ही नहीं। किसीको काम काज करनेकी पापी अिच्छा हो तो भी अुसके हाथ-पैर कपड़ोंमें फंस जायं कोओ जल्दी चलनेका जंगलीपन करने लगे तो अुनमें फंसकर गिर पड़े! अुनमें असी सुरक्षाकी व्यवस्थायें रखी गयी हैं! फिर किसीके पेटकी भूख चार लगाकर अुस सम्यतासे अुसे दूर हटा दे और मजदूरी करनेको मजबूर कर दे तो अुसे परन्तार बाभरेका कच्छ बनाना पड़ेगा और लटकती हुओ साड़ीको निकालकर अुसे सिर पर लपेटना होगा अर्थात् अिस सारी कलामय पोशाककी मूल योजनाको बिलकुल ही निष्फल बना देना पड़ेगा।

खादीधारी नवयुवकोंमें नयेसे नया फैशन पायजामेका है। अिस फैशनके शुरू शुरूके दिनोंमें अुसके भक्त बहुत ही शर्मनाक बहाने बनाते थे जैसे कि कपड़ेकी किफायत करनेके लिअे धोतीके बजाय अुसे स्थान दिया गया है भागदौड़में और काम काजमें सुविधा होनेके लिअे अुसकी खोज हुओ है। परन्तु भक्त लोग समय रहते सचेत हो गये हैं और अपने पायजामेमें लगभग धोती जितना कपड़ा काममें लाने लगे हैं। अुन्होंने अुसे अितना चौड़ा और पैरोंमें फंसने लायक नीचा बना दिया है कि वह मेहनत-मजदूरीसे दूर रहनेवाले सम्य लोगोंके जीवनको शोभा दे सके। अिस पिछली बातमें तो धोतीकी अपेक्षा पायजामेको बिना लतरेवाला बनानेमें अुन्होंने ज्यादा सफलता प्राप्त की है क्योंकि धोतीका तो अैन वक्त पर कच्छ भी बनाया जा सकता है लेकिन पायजामा तो किसी भी करामातसे छोटा किया ही नहीं जा सकता। यह मानना पड़ेगा कि दर्जीने अपनी कुशलता काममें लेकर अिस मामलेमें अच्छी मदद की है।

सचमुच पोशाकके विषयमें दर्जीकी कलाका विचार कर लेने जैसा है। अुसने काम लेकर हमारी सुख-सुविधामें वृद्धि की है या दुःख और असुविधामें? सच पूछें तो दर्जीका अिसमें कोओ दोष नहीं मालूम होता। अुसने तो जिस अुद्देश्यसे हमने अुसकी सेवा ली है अुस अुद्देश्यको सुन्दर ढंगसे पूरा कर दिया है। दर्जीके पास जानका हमारा मूल हेतु यह रहा होगा कि कपड़ा शरीर पर चिपका रहे और लटकता या खुला रहकर कामकाज या चलने-फिरनेमें बाधक न बने। यह भी माना जा सकता

है कि सच्में कपड़की किफायतका हेतु भी अिसके पीछे रहा होगा। अुदाहरणार्थ अलग चान्नर ओढ़नेसे सिले हुअे कुर्तेमें कम कपड़ा लगता है।

परन्तु ये मूल हेतु तो अुस समयके हुअे जब हम और हमारा दर्जी दोनों जंगली थे। आज तो हम दोनों सभ्यताके शिखर पर पहुंच गये हैं, फैशनके अुपासक बन गये हैं और अुसके लिअे सुख-सुविधा या किफायतका बलिदान करनेका सार्वजनिक साहस अपनमें पैदा कर चुके हैं। आज पुरुषोंके कोट, पतलून, कमीज, पायजामे, टोपियां, पगड़ियां आदिका नाप देनेमें और स्त्रियोंके लहंगे, पोलके, फ्रॉक वगराका नाप देनेमें अधिक चिन्ता हम किस बातकी रखते हैं? शरीरके अमुक भागको रक्षाकी अधिक आवश्यकता है, अिसलिअे वहां कपड़ेका आवरण अधिक रखनेकी? हरगिज नहीं। फैशनके अनुसार किस जगह कितना कपड़ा लटकता रखना चाहिये और कहांसे कितना जरूरी कपड़ा काट देना चाहिये, अिसीकी चिन्ता की जाती है। अिस सिद्धान्तके अनुसार ही हमारे कोट वगरामें छातीका भाग काटकर कमरके नीचे पैर रखा जाता है। बहनोंके पोलकों वगरामें भी जरूर रखनेकी और फैशनके अनुसार अमुक भाग लंबे-छोटे बनानेकी ही चिन्ता रखी जाती है।

प्रवचन २९

सच्ची पोशाककी खोज

कल आपने कपड़ोंके फैशनके बारेमें विचार सुने। अुन परसे आप मुश्किलमें पड़ गये होंगे। आपके मनमें प्रश्न अुठा होगा कि "तब हम कपड़े किस ढंगके पहनें?" आप मुझसे अैसी कोअी सीधी सलाह पानेकी आशा न रखें कि अितने कपड़े पहनिये और अमुक कपड़े पहनिये। यह आपको अपने-आप ढूंढ लेना है। परन्तु हम जो विचार कर चुके हैं, अुनसे हम कपड़ोंके बारेमें कुछ सिद्धान्त जरूर निकाल सकते हैं

(१) यह अंधविश्वास मिटा दिया जाय कि कपड़े पहननेमें सभ्यता है और शरीर खुला रखनेमें जंगलीपन है।

(२) कपड़े पहनकर शरीरको नाजुक बना डालनेकी अपेक्षा अुसे खुला रखकर चमड़ीकी सहनशक्ति बढ़ाना ही अधिक आरोग्यवर्धक है।

(३) पीढ़ियोंकी कपड़ोंकी आदतसे सहनशक्ति खो बैठनेके कारण कपड़ोंका सर्वथा त्याग करनेसे हम बीमार ही जाते हैं, अिसलिअे छाती वगैरा मार्मिक भागोंकी रक्षा करनेके लिअे जरूरी हों अुतने ही कपड़े पहने जायं।

(४) जो कपड़े हम आज केवल सभ्यता या फैशनकी खातिर पहनते हैं वे तो तुरंत छोड़ दिये जायं। जितने कपड़े रखनेका निश्चय कर लें अुनमें भी ऋतु आदि अनुकूल हों तब जितने कपड़ोंके बिना काम चल सकता हो चला लें।

(५) कामकाज और चलने फिरनेमें बाधक न हों असे कपड़े बनवाये जायं। अिस दृष्टिसे दर्जीकी जो मदद लेना जरूरी हो अुतनी ही ली जाय अधिक नहीं।

(६) कपड़े बनवाते समय कपड़ेकी किफ़ायतका खास तौर पर खयाल रखा जाय।

(७) स्वच्छ रखनेमें सुभीता रहे असे कपड़े बनवाये जायं।

(८) कपड़े अितने चुस्त न बनवाये जायं कि चमड़ीको *हवा न लगे और* शरीरके भीतरके रक्तसंचारमें बाधा हो।

(९) यह डर न रखा जाय कि *यह सब करनेसे कला नष्ट हो जायगी।* फैशनके नामसे प्रसिद्ध और मजाकयक्त शर्टोंवाली कु-कला अिससे जरूर मिट जायगी। परन्तु *प्रत्येक अुपयोगी और किफायतसे काममें ली जानेवाली वस्तुमें कला कुदरती रूपमें आ ही* जाती है। अिसके सिवा, य नये कपड़े सारे शरीरको ढक देनेवाले थले जसे नहीं होंगे। शरीरके बहुतसे अंग खुले और स्वतंत्र रहनेकी अुनमें सुविधा होगी। अिसलिअे खुले अंग और कपड़े अिन दोनोंका सुमेल असी नओ कला अुत्पन्न करेगा जिसकी हमने आज तक कभी कल्पना नहीं की होगी।

आप देख सकेंगे कि अिन विचारोंमें जड़मूलसे क्रांति करनेकी बात निहित है। जो सच्ची हिम्मतवाले और सुधारके आग्रही होंगे वे ही अिन्हें अपना सकेंगे। साधारण सुधारकोंके विचार तो तुलनामें बहुत ही आसान होते हैं। कुछ सुधारक विदेशी ढंगकी पोशाककी निन्दा करते हैं और देशी ढंगकी पोशाककी हिमायत करते हैं कुछ पुराने रीति-रिवाजोंकी तारीफ करके नयोंकी निन्दा करते हैं और दूसरे अिससे अुल्टा करते हैं। लेकिन हम जो विचार करते हैं अुसमें नया पुराना देशी विदेशी — किसीका भी पक्षपात करनेकी मनाही है। पक्षपात केवल सत्यका अर्थात् विज्ञानका है। क्योंकि अुपरोक्त सिद्धान्तोंके प्रति ही हमें वफादार रहना है।

सच्ची पोशाक ढूंढनी हो तो वह हमें मेहनती लोगोंकी आदतोंके अवलोकनसे ही मिल सकेगी। अिसमें भी हमें विवेकसे काम लेना होगा क्योंकि मेहनती लोगोंमें भी बहुत हद तक कथित बड़े लोगोंकी ही नकल आज तक घुसी है।

आजकलके फैंसी जाकेट, कोट और पहनने-अुतारनेमें बहुत ही असुविधापूर्ण कपड़े शायद अिस नअी कसौटी पर खरे नहीं अुतरेंगे और छातीकी दोहरी रक्षा करनेवाली पुरानी बगल-बन्दीको ज्यादा नम्बर मिलेंगे। पायजामे पतलून धोती वगैरा तो नापास होंगे ही परन्तु आजकी लोकप्रिय होने पर भी लुंगी कहीं भी निकम्मी ठहरेगी और किसानोंकी छोटी धोती और लंगी बाजी मार लगी। यह भी डर है कि सम्मानित गांधी-टोपी अुड़ जाय और धूपसे बचानेवाले विदेशी टोपका कोअी सादा सस्ता स्वदेशी संस्करण तथा पांच-छः हाथका छोटासा साफा — अिन दोनोंके बीच सख्त स्पर्धा हो।

फिर सुधारक बहनोंकी दृष्टि बदलने पर वे भारक साड़ी लहंगा वगैरा फेंकने और बंधनोंको फेंक देंगी और सादी मेहनती किन्तु कलाका जाननेवाली वनवासिनी

आदिवासी स्त्रियोंका सयानापन सीखेंगी — अर्थात् पूरी साड़ीके बजाय दो अलग अलग टुकड़े काममें लेंगी और मेरा तो खयाल है कि अेक टुकड़ा अूपरके भागमें और दूसरा नीचेके भागमें पहनना पसन्द करेंगी।

अैसी असी और कल्पनायें अब आप खुद ही कर लीजिये। सत्य पर डटे रहकर साहसपूर्ण कल्पनायें तो करने लगिये। अुसीमें से सुधारों पर अमल करनेकी हिम्मत भी आपमें आ जायगी।

दुनियामें सब जगह दो स्वभावके लोग पाये जाते हैं। कुछ सीधे रास्ते चलने वाले सादे लोग होते हैं और कुछ साहसवाले चिन्तक और शोधक लोग होते हैं। हम आश्रमवासियों या सेवकोंमें भी अिन दो स्वभावोंका होना स्वाभाविक है। हममें अेक वर्ग असा है जो अपने हिस्से आये हुअे काममें चौबीसों घंटे तल्लीन रहता है। क्या खाना पीना और क्या पहनना-ओढ़ना अिसमें वे बहुत गहरे नहीं अुतरते। आम तौर पर लोगोंमें खादीके कपड़े पहननेका जो रिवाज प्रचलित हो अुसके अनुसार कपड़े पहन कर और थालीमें जो आ जाय वही सादा भोजन खाकर वे काममें लग जाते हैं। परन्तु दूसरा वर्ग हममें चिन्तकोंका होता है और होना भी चाहिये। अुनका शौक दूसरे लोगोंकी तरह नित-नये फैशन निकाल कर नये नये रूप बनानेका नहीं होता परन्तु आज हमने जो विचार किये हैं अुस दिशामें कुछ प्रयोग करनेका होता है। किसी किसी आश्रमवासीका वेश और व्यवहार लोगोंकी नजरमें कभी बार विचित्र और हास्यास्पद क्यों लगते हैं, जिसका रहस्य अब आप समझ सकेंगे। हमारे देशकी आबहवा धंधे स्वभाव और हमारे लोगों द्वारा विकसित जीवन-ध्येय — अिन सबको ध्यानमें रखते हुअे मुझे लगता है कि हमारे पुरुषों और स्त्रियोंकी हमारे लड़कों और लड़कियोंकी राष्ट्रीय पोशाक क्या होनी चाहिये यह किसी दिन अैसे विचित्र लोगोंके प्रयोगोंसे ही निश्चित होगा।

अिस पुस्तकके दूसरे और तीसरे भागमें चर्चित विषय

दूसरा भाग   आश्रमवासीकी अन्तर-श्रद्धायें

छठा विभाग   आश्रमवासीका संसार

प्रवचन — ३० बीमारी कैसे भोगी जाय? ३१ मृत्युके साथ कैसा सम्बन्ध रखा जाय? ३२ बुढ़ापेके चिह्न ३३ हमारा जाति-सुधार ३४ सच्चा वर्ण-धर्म ३५ सुधारकका कन्या-व्यवहार ३६ झूठे संस्कार ३७ सबके सेवक कैसे? ३८ आश्रमवासिनियां

सातवां विभाग   शिक्षा

प्रवचन — ३९ आश्रमके बालक ४० बाल-शिक्षाकी आश्रमी पद्धति (कपड़े नहीं परन्तु खुली हवा, झोली नहीं परन्तु शिशु-घर, खिलौने नहीं परन्तु कामकी चीजें) ४१ बाल-शिक्षाके बारेमें कुछ और (चुम्बन और आलिंगनकी मर्यादा स्वच्छता और स्वास्थ्य) ४२ लड़के-लड़कीका भेद ४३ बच्चोंको पाठशाला क्यों न भेजा जाय? ४४ अप्रवीणकी पढ़ाईका क्या होगा? ४५ मुख्य शिक्षा

आठवां विभाग   प्रार्थना

प्रवचन — ४६ प्रार्थना-परायणता ४७ ध्यानयोग ४८ कुछ लोगोंको प्रार्थना पसन्द क्यों नहीं होती? ४९ प्रार्थना-नास्तिक ५० प्रार्थनाका शरीर (प्रार्थनाका स्थान प्रार्थनाके समय प्रार्थनाका आसन) ५१ प्रार्थना किस भाषामें की जाय? ५२ प्रार्थनामें क्या क्या होना चाहिये? ५३ प्रार्थना-संचालकोंके लिअे अुपयोगी सूचनायें (सबका सक्रिय भाग प्रार्थना बहुत लम्बी न हो, प्रार्थनाको सदा हरी रखें)

तीसरा भाग   आश्रमवासीके सामाजिक सिद्धान्त

नवां विभाग : ग्रामाभिमुखता

प्रवचन — ५४ हमारा प्यारा गांव ५५ हमारे ग्राम-गुरु ५६ आत्मीयताकी जड़, ५७ मर्योंका भय, ५८ गुणी ग्रामजन ५९ ग्रामवासीकी भाषा

दसवां विभाग   आश्रमवासी

प्रवचन — ६० हमारा नाम ६१ सत्याग्रही ग्राम-सेवक ६२ सत्याग्रही शिक्षक ६३ सत्याग्रहीके राजनीतिक दावपेंच ६४ सत्याग्रही नेता

ग्यारहवाँ विभाग आत्मबल

प्रवचन — ६५ सार्वजनिक जीवनमें सिद्धान्त हो सकते है ? ६६ नीतिक रूपमें ६७ हमारे सेनापति ६८ सत्यमें कौनसा यत्न है ? ६९ अहिंसामें कौनसा चमत्कार है ? ७० अुससे स्वराज्य मिलेगा ? ७१ हम क्यों जीतते और क्यों हारते है ?

बारहवाँ विभाग : भावमी शिक्षाका अभ्यासक्रम (अेकादश व्रत)

प्रवचन — ७२ आत्म-रचनाकी बुनियाद (सत्य-अहिंसा) ७३ आत्म रचनाकी अिमारत [१ धंधोंमें सिद्धान्त (अस्तेय) २ सुख-सुविधाओंमें सिद्धान्त (अपरिग्रह) ३ व्यक्तिगतसे व्यक्तिगत जीवनमें भी सिद्धान्त (ब्रह्मचर्य) ४ भोग-विलास पर संयम (शरीर-श्रम) ५ आत्म-रचनाका बायें-दाहिने (अस्वाद) ६ लड़ाका सत्याग्रह (अभय) ७ विशाल स्वदेशी ८ अूंच-नीच-भेदका जहर (अस्पृश्यता-निवारण) ९ सच्ची धार्मिकता (सवधर्म-समभाव)] ७४ आत्म-रचनाके त्रिविध फल ७५ आत्म-रचनाकी शाला — आश्रम ७६ स्वराज्य-आश्रम

फलश्रुति नयी संस्कृतिकी पुरानी बुनियाद — लेखक काकासाहब कालेलकर।